इग्नू
जन–जन का
विश्वविद्यालय
इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
पर्यटन एवं आतिथ्य प्रबंध विद्यापीठ

बी.टी.एम.सी.-132

# प्रबंधन की बुनियादें

खंड

# 3

## प्रबंधन अवधारणाएँ-I

इकाई 10
प्रबंधन की प्रकृति एवं विषय क्षेत्र 5

इकाई 11
प्रबंधन अध्ययन की विचारधाराएँ 21

इकाई 12
नियोजन के मूल सिद्धांत 37

इकाई 13
संगठन : आधारभूत संकल्पनाएँ 57

इकाई 14
प्रत्यायोजन और विकेंद्रीकरण 84

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

## पाठ्यक्रम निर्माण दल*

**इकाई 1–4 (ई.सी.ओ. –01)**

प्रो. पी.के. घोष
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. नफीस बेग
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय
अलीगढ़

डॉ. आर.एन. गोयल
देशबन्धु कॉलेज (ई.)
दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली

**संकाय सदस्य एस.ओ.एम.एस.**

डॉ. आर.के ग्रोवर

डॉ. एन.वी. नरसिम्हम

डॉ. वी.वी. रेड्डी

श्रीमती मधु बब्बर

प्रो. जी. सांबशिव राव
(भाषा संपादक)

**इकाई 5–9 (बी.बी.ओ.ई – 108)**

श्री विनोद प्रकाश (संपादक)
मोती लाल नहेरू कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. डी.डी. कौशिक,
मेरठ कॉलेज, मेरठ

**संकाय सदस्य एस.ओ.एम.एस.**

प्रो. आर.के ग्रोवर

डॉ. मधु त्यागी
(पाठ्यक्रम संयोजक)

**संशोधन दल**

प्रो. जी.के.कपूर
आई.एम.आई कुतुब इंस्टीट्यूट एरिया
नई दिल्ली

प्रो मधु त्यागी
निदेशक, प्रबंध अध्ययन विद्यापीठ, इग्नू
(पाठ्यक्रम संयोजक एवं संपादक)

**इकाई 10–18 (ई.सी.ओ –03)**

प्रो. पी.के. घोष
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. बी.पी. सिंह
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

श्री पी.एस प्रसाद
इंस्टीटयूट ऑफ चार्टर्ड एकाउंटेंट्स
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

**संकाय सदस्य एस.ओ.एम.एस.**डॉ.
आर.के ग्रोवर

डॉ. एन.वी. नरसिम्हम

सुश्री मधु सूर्या

श्रीमान नवल किशोर

डॉ. मधु त्यागी
प्रो. जी. सांबशिव राव (भाषा संपादक)

---

***** बी.टी.एम.सी–132 वाणिज्य अध्ययन विद्यापीठ(एस.ओ.एम.एस.) के तीन पाठ्यक्रमों से लिया गया है जिनकें नाम इस प्रकार हैं **बी.सी.ओ.ई.–108, ई.सी.ओ.**–01, एवं ई.सी.ओ.–03

## पाठ्यक्रम निर्माण एवं अनुकूलन दल

प्रो. जितेन्द्र श्रीवास्तव, निदेशक, एस.ओ.टी.एच.एस.एम. **(अध्यक्ष)**
डॉ. पारोमिता शुक्लाबैद्या, सहायक प्राध्यापक, एस.ओ.टी.एच.एस.एम.
डॉ. सोनिया शर्मा, सहायक प्राध्यापक, एस.ओ.टी.एच.एस.एम.
डॉ. तांगजाखोम्बी अकोइजम, सहायक प्राध्यापक, एस.ओ.टी.एच.एस.एम.
डॉ. अरविन्द कुमार दुबे, सहायक प्राध्यापक, एस.ओ.टी.एच.एस.एम. **(संपादक)**

## कार्यक्रम संयोजक

डॉ. अरविन्द कुमार दुबे
सहायक प्राध्यापक, एस.ओ.टी.एच.एस.एम.

## पाठ्यक्रम संयोजक

डॉ. पारोमिता शुक्लाबैद्या, सहायक प्राध्यापक, एस.ओ.टी.एच.एस.एम.
डॉ. तांगजाखोम्बी अकोइजम, सहायक प्राध्यापक, एस.ओ.टी.एच.एस.एम.

## खंड संयोजक और सम्पादक

डॉ. तांगजाखोम्बी अकोइजम, सहायक प्राध्यापक, एस.ओ.टी.एच.एस.एम.

## संकाय सदस्य

प्रो. जितेन्द्र श्रीवास्तव, निदेशक, एस.ओ.टी.एच.एस.एम. (अध्यक्ष)
डॉ. पारोमिता शुक्लाबैद्या, सहायक प्राध्यापक, एस.ओ.टी.एच.एस.एम.
डॉ. अरविन्द कुमार दुबे, सहायक प्राध्यापक, एस.ओ.टी.एच.एस.एम.
डॉ. हरकीरत बैंस, सह–प्राध्यापक, एस.ओ.टी.एच.एस.एम.
डॉ. सोनिया शर्मा, सहायक प्राध्यापक, एस.ओ.टी.एच.एस.एम.
डॉ. तांगजाखोम्बी अकोइजम, सहायक प्राध्यापक

## सामग्री निर्माण दल

श्री तिलक राज
सहायक कुल सचिव (प्रकाशन)
एम.पी.डी.डी.,इग्नू, नई दिल्ली

श्री यशपाल
अनुभाग अधिकारी (प्रकाशन)
एम.पी.डी.डी.,इग्नू, नई दिल्ली

**वर्तनी शोधन**
डॉ. सुरेश कुमार गोहे

**टंकण सहायक**
श्रीमती कौशल्या सैनी

सितम्बर, 2019

© इंदिरा गांधी राष्ट्रीय विश्वविद्यालय, 2019

ISBN : 978-93-89499-38-4

सर्वाधिकार सुरक्षित, इस कार्य का कोई भी अंश इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना किसी भी रूप में मिमियोग्राफ (चक्र मुद्रण) द्वारा या अन्यथा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम के बारे में अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के मैदान गढ़ी नई, दिल्ली – 110068 स्थित कार्यालय से प्राप्त की जा सकती है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय नई दिल्ली की ओर से कुलसचिव एम.पी.डी.डी इग्नू द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

लेज़र टाइपसेटर : टेसामीडिया एण्ड कंप्यूटर्स, सी–206, ए.एफ.ई.2, जामिया नगर, नई दिल्ली

मुद्रक : मैसर्स ए–वन ऑफसेट प्रिंटर्स, 5/34, कीर्ति नगर, इंडस्ट्रियल एरिया, नई दिल्ली–110015 द्वारा मुद्रित।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

# खंड 3 प्रबंधन अवधारणाएँ-I

प्रबंधन दूसरे व्यक्तियों से कार्य करवाने की कला है। इसका प्रचलन सभ्यता की शुरुआत से है। व्यावसायिक उद्योगों का विस्तार हो जाने से प्रबंधन का महत्व बढ़ गया है। प्रबंधन आधुनिक व्यासायिक वातावरण की जटिलता को कुशलतापूर्वक सरलीकरण करने में सक्षम हुआ है। आधुनिक युग में प्रबंधन सामाजिक राजनैतिक एवं धार्मिक संस्थाओं में भी व्यापक रूप से प्रचलित है। इस पाठ्यक्रम के खंड 3 एवं 4 में छात्रों को प्रबंधन के कार्यों सिद्धांतों तथा अभ्यास से परिचित कराया जाएगा।

इस खंड में पाँच इकाइयां हैं (इकाई 10 - इकाई 14) जिसमें प्रबंधन की प्रकृति, क्षेत्र, विचार धाराएं, प्रक्रिया, सिद्धांत तथा प्रबंधन नियोजन एवं संगठन के बुनियादी कार्यों एवं उपकार्यों, प्राधिकार, केन्द्रीयकरण एवं विकेन्द्रीकरण की अवधारणाओं की विस्तृत व्याख्या की गई है।

**इकाई 10** प्रबंधन की परिकल्पना, प्रबंधन और प्रशासन में अंतर, प्रबंधन का कार्य तथा प्रबंधन की सामाजिक उत्तरदायित्व का वर्णन करती है।

**इकाई 11** प्रबंधन विचारधारा का विकास और इस सम्बन्ध में प्रबंधन के विभिन्न लेखकों द्वारा दिए गए विचारों को व्यक्त करती है।

**इकाई 12** में नियोजन की प्रकृति और महत्व, नियोजन की प्रक्रिया, नियोजन के प्रकार और नियोजन के अनिवार्य सिद्धांतों के संबंध में विवेचना किया गया है।

**इकाई 13** में संगठन के महत्व और संरचना, औपचारिक और अनौपचारिक संगठनों की संकल्पना, पर्यवेक्षण के विस्तार तथा संगठनात्मक चार्टों और पुस्तिकाओं की चर्चा की गई है।

**इकाई 14** में प्राधिकार के प्रत्यायोजन की प्रक्रियाओं और सिद्धांतों तथा केन्द्रीकरण और विकेंद्रीकरण की संकल्पना की व्याख्या की गई है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

# इकाई 10 प्रबंधन की प्रकृति एवं विषय क्षेत्र

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 प्रबंध की संकल्पना

- 10.2.1 प्रबंध एक संज्ञा के रूप में
- 10.2.2 प्रबंध एक प्रक्रिया के रूप में
- 10.2.3 प्रबंध एक पाठ्य विषय के रूप में

10.3 प्रबंध एवं प्रशासन

- 10.3.1 प्रबंध एवं प्रशासन दो विभिन्न अर्थों में
- 10.3.2 प्रबंध एवं प्रशासन पर्यायवाची अर्थों में

10.4 प्रबंध की परिभाषा

10.5 प्रबंध की प्रकृति एवं क्षेत्र

- 10.5.1 प्रबंध की प्रकृति
- 10.5.2 प्रबंध का क्षेत्र

10.6 प्रबंध एक विज्ञान तथा कला के रूप में

10.7 प्रबंध एक पेशे के रूप में

10.8 प्रबंध के स्तर तथा कुशलता की आवश्यकताएं

- 10.8.1 प्रबंधकों का उत्क्रमात्मक वर्गीकरण
- 10.8.2 प्रबंधकीय कुशलता का वर्गीकरण
- 10.8.3 विभिन्न स्तर पर प्रबंधकों के लिये कुशलता के मापदंड

10.9 प्रबंधकीय कार्य

10.10 प्रबंध का सामाजिक उत्तरदायित्व

- 10.10.1 सामाजिक उत्तरदायित्व के कारण
- 10.10.2 संगठन के दायित्व धारक

10.11 सारांश

10.12 शब्दावली

10.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

10.14 अभ्यास के लिए प्रश्न

## 10.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- प्रबंध शब्द के विभिन्न अर्थों का वर्णन कर सकेंगे;
- प्रबंध तथा प्रशासन में अंतर स्पष्ट कर सकेंगे;
- प्रबंध की परिभाषा कर सकेंगे तथा इसकी विशेषताओं को जान सकेंगे;
- प्रबंध की व्याख्या कला एवं विज्ञान के रूप में कर सकेंगे;

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

- एक व्यवसाय के रूप में प्रबंधन की विशेषताओं को जान सकेंगे;
- प्रबंध के उत्क्रम का वर्णन कर सकेंगे तथा इसकी कुशलता की आवश्यकता बता सकेंगे;
- प्रत्येक प्रबंधकीय कार्य की गतिविधियां बता सकेंगे; और
- निगमीय वातावरण के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष तत्वों तथा उसके सामाजिक निष्पादन के अवरोधों का वर्णन कर सकेंगे।

## 10.1 प्रस्तावना

प्रबंध (management) शब्द का प्रयोग हम बहुधा एकल स्वामित्व, साझेदारी फर्म या निगमित कंपनियों का संचालन करने वाले व्यक्तियों के सन्दर्भ में करते हैं। इन संगठनों का संचालन स्वयं स्वामी द्वारा या पेशेवर प्रबंधकों (professional managers) द्वारा किया जाता है। सभी व्यावसायिक संगठनों को संस्थापन तथा संचालन के लिये व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित प्रबंधकों की आवश्यकता होती है। इन प्रबंधकों की सफलता उनके प्रबन्ध के सैद्धांतिक ज्ञान तथा उसके कुशल योग पर निर्भर करती है। किसी भी व्यावसायिक संगठन में केवल आर्थिक लाभ ही सफलता की कसौटी नहीं है वरन् प्रबंधकों से स्वामी के अतिरिक्त कुछ अन्य वर्गों के हितों को भी ध्यान की अपेक्षा की जाती है। इस इकाई में आप प्रबंध शब्द के विभिन्न अर्थो जान सकेंगे और प्रबंध तथा प्रशासन में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे प्रबंध की प्रकृति तथा विषय क्षेत्र को समझ सकेंगे और प्रबंधन को कला तथा विज्ञान के रूप में जान सकेंगे। प्रबंधन के प्रत्येक स्तर एवं उसके लिये अपेक्षित कुशलता, विभिन्न स्तर पर प्रबंधकों द्वारा किये जाने वाले कार्यों, प्रबंधकीय कार्यकलापों के वर्गीकरण तथा प्रबंधकों के सामाजिक उत्तरदायित्व को भी जान सकेंगे।

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

## 10.2 प्रबंध की संकल्पना

प्रत्येक संगठन में विभिन्न स्तर पर प्रबंधन की आवश्यकता होती है। प्रबंधन शब्द का हम विभिन्न अर्थों में प्रयोग करते हैं। प्रबंधन को एक संज्ञा के रूप में, एक अभिक्रिया के रूप में, और एक पाठ्य विषय के रूप में प्रयोग किया जाता है।

### 10.2.1 प्रबंध एक संज्ञा के रूप में (Management as a Noun)

सामान्य रूप से प्रबंध शब्द का प्रयोग उन व्यक्तियों के समूह के लिए किया जाता है जो किसी संगठन के पूर्व निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए मनुष्य तथा उत्पादन के अन्य साधन की गतिविधियों का निर्देशन करते हैं। व्यापक अर्थों में प्रबंधन को एक संसाधन प्राधिकार तंत्र और वर्ग या संभ्रात (class or elite) भी कहा जा सकता है।

1) **प्रबंध एक आर्थिक संसाधन (Ecottomic resource) के रूप में** : अर्थशास्त्रियों के अनुसार प्रबंधन भी उद्यमशीलता, पूँजी तथा श्रम की भांति उत्पादन का एक तत्व है। प्रबंधकीय संसाधन पर ही बहुत हद तक संगठन की कुशलता एवं प्रभाविता निर्भर करती है। आज के गतिशील युग में प्रबंधकीय विकास काफी महत्वपूर्ण है और इसका प्रयोग अवश्य ही काफी गहनता से किया जाना चाहिए।

2) **प्रबंध एक अधिकार तंत्र (System of authority) के रूप में** : प्रबंध एक अधिकार तंत्र है चूंकि इसमें प्रबंधकों का समूह शामिल होता है जो निर्णय लेने तथा दूसरों के कार्य का पर्यवेक्षण करने के लिए उत्तरदायी होता है। विभिन्न स्तर के प्रबंधकों को विभिन्न प्रकार के अधिकार प्राप्त होते हैं। उच्च स्तर के प्रबंधक मध्य स्तर के प्रबंधकों

का पर्यवेक्षण करते हैं। मध्य स्तर के प्रबंधक अधीनस्थ प्रबंधकों तथा श्रमिकों के कार्यों का नियंत्रण व दिशा निर्देशन करते हैं।

3) **प्रबंध एक वर्ग या संभ्रांत (Class or elite) के रूप में** : समाजशास्त्री प्रबंधन को एक वर्ग या हैसियत तंत्र (Status system) के रूप में देखते हैं। आधुनिक जटिल संगठनों के इस युग में प्रबंधकों ने अपने ज्ञान तथा उच्च योग्यता के बल पर समाज में एक विशिष्ट स्थान बना लिया है। प्रबंध के क्षेत्र में सफलता केवल बुद्धिमत्ता एवं ज्ञान पर ही निर्भर करती है। कुछ लोगों के अनुसार इस विकास को प्रबन्धकीय क्रान्ति कहा जाता है जिसमें प्रबन्धकीय वर्ग का बढ़ते हुए अधिकार के साथ स्वायत्त समूह बन जाने का भय रहता है। दूसरे लोगों के मतानुसार यह विकास कोई खतरे का संकेत नहीं है क्योंकि बढ़ता हुआ अधिकार अधिक प्रबंधों को इस ओर आकर्षित करेगा जो प्रबन्धकीय एकाधिपत्य को रोकेगा।

### 10.2.2 प्रबंध एक प्रक्रिया के रूप में (Management as a Process)

एक प्रक्रिया के रूप में प्रबंधन के अंतर्गत अनेक सहसम्बन्धित प्रबंधकीय गतिविधियों को सम्मिलित किया जाता है। इन गतिविधियों को नियोजन, संगठन, कार्मिक चयन, नेतृत्व तथा नियंत्रण में वर्गीकृत किया जाता है। इन गतिविधियों के व्यवस्थित प्रयोग से ही प्रबंधक भौतिक तथा मानव संसाधनों का पूर्ण उपयोग कर संगठन को लाभकारी बनाते हैं। अतः प्रबंध को एक प्रक्रिया के रूप में माना जाता है जिसके द्वारा समूह की क्रियाओं को सामूहिक लक्ष्य की प्राप्ति हेतु निर्देशित किया जाता है।

### 10.2.3 प्रबंध एक पाठ्य विषय के रूप में (Management as a Discipline)

दूसरी विचारधारा के अनुसार प्रबंधन एक पृथक विषय के रूप में माना जाता है जिसमें ज्ञान का व्यवस्थित रूप होता है जिसे प्रबंधक अपने कार्यों के निष्पादन में प्रयोग करते हैं। एक पृथक विषय के रूप में प्रबंधन में प्रबंधन का सामान्य व्यवहार, सिद्धान्त तथा अनेक कार्य शामिल होते हैं। प्रबंधन की तकनीक व सिद्धांत अनुभव प्रेक्षण तथा वैज्ञानिक अन्वेषण के आधार पर विकसित हुए हैं।

## 10.3 प्रबंध एवं प्रशासन

प्रबंधन और प्रशासन को दो विभिन्न अर्थों तथा पर्यायवाची के रूप में प्रयोग किया जाता है।

### 10.3.1 प्रबंध एवं प्रशासन दो विभिन्न अर्थों में

किसी उद्यम की प्रकृति एवं प्रबंधकीय स्तर के आधार पर ही प्रायः प्रबंध एवं प्रशासन में अन्तर किया जाता है।

1) **उद्यम की प्रकृति के आधार पर** : इस धारणा के अनुसार प्रबंध शब्द का प्रयोग उन संगठनों में किया जाना चाहिए जिसका प्राथमिक उद्देश्य आर्थिक लाभ अर्जित करना हो। केवल आर्थिक प्रतिफल से प्रेरित उद्यमों या वाणिज्यिक संस्थाओं में ही प्रबंधन शब्द का प्रयोग उचित है। सरकारी संस्थाओं व कार्यालयों में सामाजिक या राजनीतिक कार्य होते हैं जिनका मूल उद्देश्य लाभ कमाना नहीं है। अतः इन संगठनों में प्रशासन शब्द का प्रयोग किया जाना चाहिए।

2) **प्रबंधकीय स्तर पर आधारित अंतर** : एक ही संगठन में भी प्रबंध एवं प्रशासन शब्द का प्रयोग प्रबंधकीय कार्यों के उत्क्रम के आधार पर अलग-अलग किया जाता

है। इस सम्बन्ध में दो विचारधारायें प्रचलित हैंः (i) अमेरिकन विचारधारा (ii) ब्रिटिश विचारधारा।

i) **अमेरिकन विचारधारा** : इस विचारधारा के अनुसार प्रबंधन की अपेक्षा प्रशासन अधिक व्यापक शब्द है। प्रशासन द्वारा उद्देश्य निर्धारण तथा नीति निर्माण किया जाता है और प्रबंधन द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कार्य किया जाता है। इस प्रकार इस मत के अनुसार प्रशासन नियोजन, उद्देश्य निर्धारण तथा नीति निर्माण करने की बौद्धिक क्रिया है। प्रशासन एक उच्च स्तर का कार्य है जबकि प्रबंधन अपेक्षाकृत निम्न स्तर का कार्य है। प्रबंध का कार्य योजनाओं को कार्यान्वित करना है।

ii) **ब्रिटिश विचारधारा** : इस विचारधारा के मत से प्रबंध शब्द अधिक व्यापक है। प्रबंध नियम बनाने व उसको कार्यान्वित करने वाली निकाय है। प्रबंधन द्वारा संगठन के उच्च स्तर का कार्य किया जाता है जबकि प्रशासन प्रबंधन द्वारा निर्धारित नीतियों को कार्यान्वित करता है। प्रशासन द्वारा साधारण समस्याओं को सुलझाया जाता है। प्रबंध अधिक महत्वपूर्ण तथा व्यापक शब्द है और प्रशासन प्रबंध का एक अंग है।

**दोनों विचारधाराओं का समन्वय** : इन दोनों विचारधाराओं को समन्वित करने के लिये दो नये शब्द रचे गये हैं प्रशासनात्मक प्रबंध एवं क्रियात्मक प्रबंधन। नियोजन के लिये उत्तरदायी उच्च स्तर पर प्रशासनात्मक प्रबंध माना जाता है। मध्य स्तर व निम्न स्तर पर क्रियात्मक प्रबंध पाया जाता है क्योंकि इस स्तर पर क्रियान्वयन की ही प्रमुखता होती है। चित्र 10.1 में प्रशासनात्मक प्रबंध तथा क्रियात्मक प्रबंध को दर्शाया गया है।

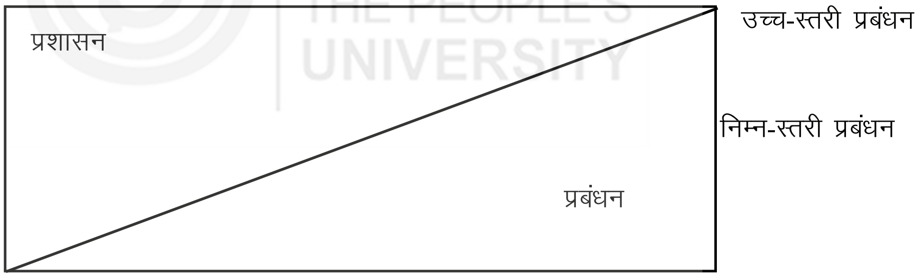

चित्र 10.1

### 10.3.2 प्रबंध एवं प्रशासन पर्यायवाची अर्थों में

एक और धारणा के अनुसार प्रबंधन और प्रशासन पर्यायवाची शब्द हैं। दोनों में अंतर का प्रयास करना भ्रामक है। एक संगठन में सभी प्रबंधक एक समान प्रबंधकीय कार्य करते हैं चाहे वे किसी भी स्तर पर हों। वास्तव में उच्च स्तर पर प्रबंधकों की गतिविधियां मुख्यतः प्रशासनात्मक होती हैं। निम्न स्तर पर प्रबंधकों के कार्य अधिकांशतः कार्यकारी होते हैं।

## 10.4 प्रबंध की परिभाषा

प्रबंध व्यक्तियों से कार्य करवाने की कला है। विस्तृत अर्थों में प्रबंध संगठन के सदस्यों तथा संसाधनों द्वारा पूर्वनिर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने की प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में नियोजन, संगठन, नेतृत्व एवं नियंत्रण की विधियों का प्रयोग किया जाता है। प्रबंध की परिभाषा को मुख्यतः चार वर्गों में बांट सकते हैं : 1) प्रक्रिया विचारधारा 2) मानव संबंध विचारधारा 3) निर्णय विचारधारा तथा 4) प्रणाली एवं प्रासंगिकता विचारधारा।

1) **प्रक्रिया विचारधारा (Process School)** : इस विचारधारा में प्रबंधन की परिभाषा प्रबंधकों के कार्यों के आधार पर की गयी है जिसे प्रबंधक समेकित (integrated) रूप में संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु प्रयोग करता है। हेनरी फैयोल के अनुसार पूर्वानुमान व नियोजन, संगठन, आदेश, संयोजन और नियंत्रण को प्रबंध कहते हैं। इस विचारधारा की अन्य परिभाषायें भी काफी हद तक इन्हीं तत्वों का प्रतिपादन करती हैं।

2) **मानव संबंध विचारधारा (Human Relations School)** : इस विचारधारा में संगठन के मानवीय पहलू पर बल दिया गया है। चूंकि प्रबंधकीय कार्य मानवीय संबंधों पर आधारित हैं। इसलिए प्रबंध एक सामाजिक प्रणाली है। प्रबंध केवल संगठन को दिशा प्रदान करने के लिये ही नहीं है। यह मानव के विकास के लिए भी उत्तरदायी है। इस विचारधारा का सारांश लॉरेंस एप्पलै की इस परिभाषा में निहित है कि दूसरे व्यक्तियों के प्रयासों के परिणाम की उपलब्धि ही प्रबंध है।

3) **निर्णय विचारधारा (Decision School)** : इस विचारधारा के अनुसार प्रबंध नियम बनाने तथा उनका पालन कराने वाली संस्था है। प्रबंधक जो भी कार्य करता है निर्णयों के आधार पर करता है। प्रबंधक का जीवन निरंतर निर्णय लेने में ही बीतता है। निर्णय लेने की क्षमता ही संगठन को उत्पादनशील एवं प्रभावी बनाने की गतिशील शक्ति है।

4) **प्रणाली एवं प्रासंगिकता विचारधारा (System and Contingency School)** : इस विचारधारा के अनुसार संगठन की तुलना एक जीवित प्रणाली से की गई है। संगठन को अपने अस्तित्व एवं विकास के लिये वातावरण के अनुकूल बनना चाहिए। प्रबंधन का कार्य संगठन को परिवर्तनशील बाज़ार तकनीक तथा अन्य नाजुक परिस्थितियों के अनुकूल बनाना है। प्रबंधकों से संगठन के विभिन्न सदस्यों के अंतर्विरोधी उद्देश्यों, लक्ष्यों एवं गतिविधियों में संतुलन स्थापित करने की अपेक्षा की जाती है। उनके कार्यों से कुशलतापूर्ण तथा प्रभावी परिणाम मिलने चाहिये। प्रासंगिकता विचारधारा के अनुसार संगठन के निर्माण एवं प्रबंधन का कोई भी सर्वोत्तम मार्ग नहीं है। प्रबंधकों को विद्यमान परिस्थितियों को दृष्टिगत रख संगठन के लक्ष्य का निर्धारण तथा नीति निर्माण करना चाहिए।

विभिन्न विचारधाराओं ने तीन कारणों से प्रबंधन की विभिन्न परिभाषायें दी हैं : i) प्रबंधन एवं संगठनात्मक सिद्धांतों की अवधारणा में अंतर ii) संगठन के आर्थिक तथा तकनीकी पहलुओं की अपेक्षा मानवीय दृष्टिकोण के अध्ययन को महत्व तथा iii) संगठन की आंतरिक व बाह्य परिस्थितियों पर संकेन्द्रण।

## 10.5 प्रबंध की प्रकृति एवं क्षेत्र

अब आप प्रबंधन की परिभाषा, प्रबंधन की संकल्पनाओं तथा प्रबंधन व प्रशासन का अन्तर जान चुके हैं। आइये अब प्रबंधन की प्रकृति एवं विषय क्षेत्र का अध्ययन करें।

### 10.5.1 प्रबंध की प्रकृति

प्रबंध की मुख्य विशेषतायें इसकी प्रकृति एवं विषय क्षेत्र को दर्शाती हैं। ये विशेषतायें इस प्रकार हैं।

1) **सार्वभौमिकता** : प्रत्येक उद्यम में अनिवार्य रूप से प्रबंधन की आवश्यकता होती है इसलिये हम प्रबंधन को सार्वभौमिक क्रिया कहते हैं। संगठन की प्रकृति व प्रबंधक का

स्तर चाहे कुछ भी हो, उसके कार्य लगभग समान ही होते हैं। किसी भी प्रकृति, आकार या स्थान पर प्रबंधन के मूलभूत सिद्धांतों को प्रयोग में लाया जा सकता है। प्रबंधन की सार्वभौमिकता इस बात में भी निहित है कि प्रबंधकीय योग्यता का स्थानांतरण, प्रशिक्षण तथा विकास किया जा सकता है।

2) **उद्देश्यपूर्ण** : संगठन के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को प्राप्त करना ही प्रबंध का ध्येय है। प्रबंधन की सफलता का मापदंड केवल यही है कि उसके द्वारा उद्देश्य की पूर्ति किस सीमा तक होती है। संगठन का उद्देश्य लाभ कमाना हो या न हो, प्रबंधक का कार्य सदैव प्रभावी (अर्थात संगठन के उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक) तथा कुशलतापूर्ण (संसाधनों के मितव्ययता से उद्देश्यों की पूर्ति) होना चाहिए।

3) **सामाजिक अभिक्रिया** : प्रबंध में आवश्यक रूप से व्यवस्थित व्यक्तियों के सामूहिक कार्यों का प्रबंधन शामिल होता है। प्रबंधन में कार्य के अधीनस्थ व्यक्तियों का प्रशिक्षण विकास तथा अभिप्रेरण शामिल हैं। साथ ही वह उनकी सामाजिक प्राणी के रूप में संतुष्टि प्रदान करने का भी ध्यान रखता है। इन सब मानवीय संबंधों एवं मानवीय गतिविधियों के कारण प्रबंध को एक सामाजिक अभिक्रिया कहा जाता है।

4) **संयोजक शक्ति** : प्रबंध द्वारा परस्पर सम्बन्धित गतिविधियों को व्यवस्थित किया जाता है जिससे किसी कार्य की आंशिक या पूर्ण आवृत्ति न हो। इस प्रकार प्रबंध संगठन के सभी वर्गों के कार्यों को संयोजित करता है। प्रबंधन संगठन के उद्देश्यों तथा उससे जुड़े व्यक्तियों के उद्देश्यों का समन्वय करता है। प्रबंधन द्वारा ही भौतिक तथा मानव संसाधनों का समन्वय किया जाता है।

5) **अदृश्यता** : प्रबंध एक अदृश्य शक्ति है। प्रबंधकीय कार्यों के परिणाम द्वारा इसकी उपस्थिति का अनुभव किया जा सकता है। ये परिणाम व्यवस्था, समुचित उत्पादन संतोषजनक वातावरण, तथा कार्मिक संतुष्टि द्वारा ज्ञात किये जाते हैं।

6) **निरंतर प्रक्रिया** : प्रबंध एक गतिशील एवं प्रवाही प्रक्रिया है। जब तक संगठन में लक्ष्य प्राप्ति हेतु प्रयास होता रहेगा प्रबंध का चक्र भी चलता रहेगा।

7) **संयुक्त प्रक्रिया** : प्रबंधकीय कार्य की श्रृंखलायें सह आधारित हैं इसलिए स्वतंत्र रूप से किसी एक कार्य को नहीं किया जा सकता। प्रबंध विशिष्ट अवयवों से मिलकर बनी संयुक्त प्रक्रिया है। प्रबंध की सभी गतिविधियों में अनेक अवयवों को सम्मिलित करना पड़ता है इसलिए यह एक व्यवस्थित संयुक्त प्रक्रिया कहलाती है।

8) **रचनात्मक अंग** : प्रबंध परिणाम प्रदान कर सह क्रियात्मक प्रभाव का सर्जन करता है जो सामूहिक सदस्यों के व्यक्तिगत प्रयास के योग से अधिक होता है। यह संक्रियाओं (operations) में अनुक्रम (sequence) प्रदान करता है, कार्य का लक्ष्य से मिलान करता है तथा कार्य को भौतिक और वित्तीय संसाधनों से जोड़ता है। यह सामूहिक प्रयासों को नई कल्पना तथा विचार तथा नई दिशा प्रदान करता है। यह बाह्य वातावरण को अपनाने वाला निष्क्रिय बल नहीं है बल्कि प्रत्येक संगठन में गतिशील जीवन प्रदान करने वाला तत्व है।

### 10.5.2 प्रबंध का क्षेत्र

अन्य विषयों की भांति प्रबंध भी स्पष्टतः परिभाषित गतिविधियों से संबंधित है। अगर ऐसा न हो तो इसकी प्रगति असंभव है। इसका विषय क्षेत्र संकल्पनाओं, सिद्धांतों तथा प्रबंधकीय गतिविधियों के ज्ञान तक सीमित है। अलग-अलग संगठनों के विशिष्ट कार्य इसकी परिधि

से बाहर हैं। इसलिए उद्यमों की विशिष्ट गतिविधियों जैसे कि उत्पादन, वित्त व्यवस्था विपणन तथा कार्मिक आदि प्रबंधन के क्षेत्र में नहीं आते।

**बोध प्रश्न 1**

1) एक प्रक्रिया के रूप में प्रबंध की क्या संकल्पना है?

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

2) एक पाठ्य विषय के रूप में प्रबंधन की क्या संकल्पना है?

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

3) निम्नलिखित वक्तव्यों के सामने प्रबंध की संबंधित विचारधारा लिखो।

| वक्तव्य | प्रबंध की विचारधारा |
|---|---|
| i) प्रबंध नियम बनाने वाली तथा उसका पालन करान वाली संस्था है। | .................................... |
| ii) गतिविधियों के आधार पर प्रबंध की परिभाषा। | .................................... |
| iii) बदलती परिस्थितियों के अनुरूप संगठन का प्रारूप बनाना। | .................................... |
| iv) संगठन को सामाजिक तंत्र मानती है। | .................................... |

4) बताइये कि निम्नलिखित वक्तव्य **सही है** अथवा **गलत**?

i) प्रशासकीय प्रबंध योजनाओं को कार्यान्वित करता है।

ii) क्रियात्मक प्रबंध योजनाओं का प्रारूप तैयार करता है।

iii) हेनरी फैयॉल का संबंध प्रबंध की प्रक्रिया विचारधारा से है।

iv) परिपक्व संगठनों में निर्णय स्वामी-प्रबंधकों द्वारा किये जाते हैं।

v) प्रबंध की सार्वभौमिकता का अर्थ है कि प्रबंध द्वारा ब्रह्मांड का अध्ययन किया जाता है।

vi) आर्थिक उद्यमों में लाभ कमाने की प्रवृत्ति नहीं होती।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

## 10.6 प्रबंध एक विज्ञान तथा कला के रूप में

प्रबंध में विज्ञान और कला दोनों के गुण पाये जाते हैं। प्रबंध के क्षेत्र में ज्ञान की एक विधिवत् विद्या उभरी है। यह सब प्रेक्षण और प्रयोगों के वैज्ञानिक तरीकों से संभव हुआ है। प्रबंधन के अपने सिद्धांत, नियम व तकनीक हैं।

विज्ञान द्वारा विभिन्न प्रक्रियाओं, घटनाओं तथा परिणामों के कारणों और प्रभावों को समझा जा सकता है। विज्ञान द्वारा ही हम विभिन्न चरों (variables) के परस्पर संबंध को जान सकते हैं। विज्ञान की भांति प्रबंधन में भी हम सिद्धांतों व नियमों के आधार पर मानव व्यवहार व आचरण को समझ सकते हैं। घटनाओं व परिणामों के कारण तथा उनके प्रभाव के अध्ययन से ही प्रबंध की तकनीक का विकास हुआ है। व्यक्तियों और उनके व्यवहार से संबंध रखने के कारण प्रबंध एक सामाजिक विज्ञान है। परन्तु प्रबंध भौतिक या रसायन शास्त्र की भांति पूर्ण रूप से प्राकृतिक विज्ञान नहीं है क्योंकि मानव स्वभाव को प्रयोगशालाओं में प्रयोग करके नहीं परखा जा सकता जैसा कि हम प्राकृतिक विज्ञान में करते हैं। प्रत्येक अवस्था में मानव व्यवहार का यथार्थ पूर्वानुमान लगाना संभव नहीं है। व्यापार की परिस्थितियां भी निरंतर परिवर्तनशील होती हैं। इसलिये प्रबंधन के सिद्धांत कोई अटल सत्य नहीं हैं परन्तु वे पारिस्थितिक मार्गदर्शन अवश्य करते हैं।

प्रबंधकीय सिद्धांतों के इस व्यापक आधार द्वारा ही प्रबंध का प्रशिक्षण तथा व्यवहार संभव है। प्रबंध के नियमों के व्यापक प्रयोग से प्रबंधकीय कार्यों को कुशलता से किया जा सकता है। प्रबंधकों की समस्यायें सुलझाने में ये नियम मार्गदर्शक की भूमिका निभाते हैं। इस प्रकार प्रबंधक स्वपरीक्षण के बोझिल कार्य से मुक्ति पाते हैं। ये नियम प्रबंध के क्षेत्र में शोधकर्त्ताओं के लिये भी उपयोगी हैं। इन नियमों के आधार पर ही नये नियम जन्म लेते हैं, पुराने नियमों का सुधार व समन्वय हो पाता है। वास्तव में प्रबंध के नियमों के प्रयोग से वांछित परिणामों की प्राप्ति को प्रबंध की कला कहते हैं। यह भी अन्य कलाओं की तरह एक उपयोगी कला है। विज्ञान और कला में यही क्रियात्मक अंतर है कि विज्ञान द्वारा विगत घटनाओं की व्याख्या की जा सकती है जबकि कला द्वारा परिणामों को प्रभावी बनाया जाता है। कला के उपयोग के बिना अच्छे परिणाम संभव नहीं हैं। वैज्ञानिक ज्ञान एवं निपुणता के प्रयोग से ठोस परिणामों की उपलब्धि निःसंदेह एक कला है। परन्तु प्रबंध की प्रक्रिया में अंतर्दृष्टि तथा सही निर्णय की भी बहुत आवश्यकता होती है।

संक्षेप में हम प्रबंध की क्रिया को एक कला कह सकते हैं जो कि प्रबंध के व्यवस्थित ज्ञान पर आधारित है। प्रबंध के कला एवं विज्ञान के दो रूपों को पूर्ण रूप से अलग नहीं किया जा सकता। वे एक दूसरे के पूरक हैं। किसी एक रूप में सुधार से प्रबंध का दूसरा रूप भी सुधरता है। प्रबंधकीय विज्ञान में सभी नियमों को सिद्ध नहीं किया गया है। कोई भी नियम प्रबंधकों के लिए व्यापक साधन हो सकता है। किसी अवसर पर प्रबंधकों का सामना परस्पर विरोधी नियमों से भी होता है। तब प्रबंधकों को उन नियमों का मध्य मार्ग निकालना चाहिए ताकि कम लागत से व्यवहारिक परिणाम की प्राप्ति हो।

## 10.7 प्रबंध एक पेशे के रूप में

लुइस ऐलन ने पेशे की परिभाषा इस प्रकार की है "एक ऐसा कार्य जिसको सर्व सामान्य शब्दावली तथा वर्गीकृत ज्ञान के द्वारा एवं माध्यम से किया जाये और जिसमें एक मान्य संस्था द्वारा निर्धारित आचार संहिता तथा आचरण के मानकों का पालन किया जाये।" चिकित्सा विधि व लेखा आदि प्रतिष्ठित पेशों की विशेषताओं की तुलना हम यदि प्रबंध के

गुणधर्मों से करें तो जान सकते हैं कि प्रबंध एक पेशा है या नहीं। पेशे के रूप में प्रबंध की निम्नलिखित विशेषताएं हैं।

1) **सुव्यवस्थित ज्ञान** : प्रत्येक पेशे में संगठित ज्ञान का एक स्पष्ट क्षेत्र होता है। प्रबंध के क्षेत्र में भी प्रबंधकीय कार्यों से संबंधित ज्ञान बहुत विकसित हो चुका है। प्रबंधन की तकनीक अर्थशास्त्र व गणित जैसे अन्य विषयों से निकली है। इससे प्रबंधकों को अपना कार्य करने में सहायता मिलती है। प्रबंध के सिद्धांतों से ही सभी प्रबंधकों को कुशल एवं सही निर्णय लेने का आधार प्राप्त होता है। अगर प्रबंधकों को आज के इस, परिवर्तनशील संगठनात्मक वातावरण में सफलता प्राप्त करनी है तो उनको निरंतर ज्ञान प्राप्ति की इच्छा जागृत करनी चाहिए और उसके लिये उन्हें सदैव प्रयोगात्मक प्रवृत्ति अपनानी चाहिए।

2) **ज्ञान प्राप्ति की औपचारिक विधि** : आजकल प्रबंध में भी अन्य पेशों की तरह औपचारिक शिक्षा और प्रशिक्षण ज्ञान प्राप्ति के महत्वपूर्ण साधन हैं। मात्र किसी अन्य व्यक्ति द्वारा अनुभव प्रदत्त ज्ञान या अन्तः ज्ञान ही प्रबंध के क्षेत्र में पर्याप्त नहीं है। वरन् औपचारिक शिक्षण तथा गहन प्रशिक्षण से ही प्रबंध में प्रवीणता प्राप्त की जा सकती है।

3) **प्रतिष्ठा के आधार पर निष्पादन** : आधुनिक संगठनों में प्रबंधक की प्रतिष्ठा उसके पारिवारिक या राजनैतिक संबंधों पर निर्भर नहीं करती वरन् उसकी कार्यशीलता व सफलता के आधार पर मापी जाती है। इस प्रकार प्रबंधन का दर्शन भी अन्य पेशों की तरह सफलता के मापदंड पर आधारित है।

4) **आचार संहिता** : किसी भी पेशे में उसके सदस्यों की विश्वसनीयता बनाये रखने के लिए किसी मान्य संस्था द्वारा निर्धारित आचार संहिता का पालन करना आवश्यक है। प्रबंध के पेशे में भी कुछ संस्थायें बनी हैं परन्तु अभी तक कोई सर्वमान्य आचार संहिता नहीं बन पायी है।

5) **समर्पण एवं प्रतिबद्धता** : सच्चे पेशेवर अपने मुवक्किलों के हितों की रक्षा समर्पण एवं प्रतिबद्धता से करते हैं। उनकी सफलता आर्थिक प्रतिफल पर निर्भर नहीं करती। प्रबंधक भी केवल अपने संगठन के हितों का पालन नहीं करते वरन् अपने सामाजिक उत्तरदायित्वों के प्रति भी सचेत रहते हैं। समाज के संपदा उपार्जन के सभी संसाधन प्रबंधकों के अधीन हैं, इसलिए प्रबंधकों से उनके सर्व प्रभावी उपयोग की अपेक्षा की जाती है।

उपरोक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रबंधन को पूर्णरूपेण एक पेशा नहीं कहा जा सकता फिर भी इसमें पेशे के कुछ गुण अवश्य ही शामिल हैं।

## 10.8 प्रबंध के स्तर तथा कुशलता की आवश्यकताएं

प्रबंधकों का कार्य सीमा के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। विभागीय प्रबंधक एक विशिष्ट कार्य के लिये उत्तरदायी होता है परन्तु सामान्य प्रबंधक को उद्यम के सभी कार्यों का संयोजन करके लाभ अर्जित करना होता है। प्रबंधकों को उनके कार्यों की सीमा के आधार पर हम तीन मुख्य वर्गों में भी बांट सकते हैं ये हैं– उच्च स्तर (top level), मध्य स्तर (middle level) तथा निम्न स्तर (lower level)।

### 10.8.1 प्रबंधकों का उत्क्रमात्मक वर्गीकरण

उत्क्रमात्मक वर्गीकरण (hierarchical classification) के तीन मुख्य आधार हैं: i) प्रबंधकीय निर्णयों में विशेषज्ञता की आवश्यकता, ii) संयोजन की आवश्यकता तथा iii) क्रियात्मक कार्मिकों के उत्तरदायित्व की आवश्यकता। इन्हीं कारणों को ध्यान में रख कर प्रबंधकों को तीन वर्गों में बांटा गया है।

1) **उच्च प्रबंधक** : इसके अंतर्गत संचालन मंडल, मुख्य कार्यकारी, वरिष्ठ कार्यकारी तथा विभागीय अध्यक्ष आदि आते हैं। ऐसे लोगों की संख्या यद्यपि कम होती है तथापि संगठन के संचालन का संपूर्ण उत्तरदायित्व इन्हीं पर होता है। इनका कार्य संगठन की योजना व नीतियां बनाना है। उच्च प्रबंधक मध्य एवं निम्न स्तर के प्रबंधकों का मार्गदर्शन करते हैं। उनका मूल कार्य संगठन का बाह्य वातावरण से सामंजस्य स्थापित करना है।

2) **मध्य प्रबंधक** : इस वर्ग में विभागीय प्रबंधक, शाखा प्रबंधक आदि आते हैं। इनकी गतिविधियां अपनी शाखाओं या विभागों में संगठन की योजना व नीतियां लागू कराने तक सीमित होती हैं। इनका कार्य उच्च प्रबंध की अपेक्षाओं तथा निम्न प्रबंधन की क्षमता संतुलन स्थापित करना है।

3) **निम्न स्तर के प्रबंधक** : निरीक्षक फोरमैन आदि इस वर्ग में आते हैं। इस वर्ग के प्रबंधन का स्तर क्रियात्मक होता है। ये प्रबंधक अपने अधीनस्थ कार्मिकों से कार्य लेने के उत्तरदायी होते हैं। सेवाओं तथा माल के उत्पादन का सीधा दायित्व इन्हीं पर होता है।

### 10.8.2 प्रबंधकीय कुशलता का वर्गीकरण

अभी तक हमने प्रबंधनों के वर्गीकरण तथा प्रत्येक वर्ग के कार्यों का वर्णन किया है। आइये अब प्रबंध के लिये आवश्यक कुशलता का अध्ययन करें। प्रबंध के प्रत्येक स्तर पर तीन प्रकार की कुशलता की आवश्यकता होती है (1) तकनीकी कुशलता (2) मानवीय कुशलता। (3) संकल्पनात्मक कुशलता।

1) **तकनीकी कुशलता** : प्रबंधक को यंत्रों, उपकरणों, विधियों और विशिष्ट कार्य से संबंधित तकनीक का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। निम्न स्तर के प्रबंध अर्थात निरीक्षण स्तर पर ये कुशलता बहुत आवश्यक है। उच्च स्तर पर तकनीकी कुशलता इतनी महत्वपूर्ण नहीं हैं। उच्च प्रबंधक तकनीकी सूचना अपने अधीनस्थ प्रबंधकों से प्राप्त कर सकता है।

2) **मानवीय कुशलता** : मनुष्यों के साथ कार्य करने, उनको समझने व प्रोत्साहित करने की योग्यता को मानवीय कुशलता कहते हैं। एक प्रभावी कार्यदल की स्थापना भी इसी कुशलता का एक अंग है। कार्य के अधिकतम निष्पादन के लिये व्यक्ति एवं समूहों के संबंधों का समुचित उपयोग प्रबंध के मानवीय कुशलता को दर्शाता है। प्रबंधन के प्रत्येक स्तर पर इसकी आवश्यकता होती है।

3) **संकल्पनात्मक कुशलता** : संगठन की समस्त गतिविधियों तथा उससे जुड़े सभी हितों का संयोजन करने की योग्यता ही संकल्पनात्मक कुशलता कहलाती है। संगठन की संपूर्णता तथा विभिन्न अवयवों की परस्पर निर्भरता का पूर्ण ज्ञान ही इस कुशलता का आधार है। सीखने में यह कुशलता सबसे कठिन है। आर्थिक तथा वाणिज्यिक उद्यमों के उच्च प्रबंधकों के लिये यह कुशलता परमावश्यक है जिससे वे दीर्घावधि योजनाओं तथा संगठन की मुख्य नीतियां निर्धारित कर सकें।

### 10.8.3 विभिन्न स्तर पर प्रबंधकों के लिये कुशलता के मापदंड

यद्यपि सभी स्तर के प्रबंधकों के लिये उपर्युक्त तीनों कुशलताओं का ज्ञान अनिवार्य है तथापि स्तर के अनुरूप उनका आपेक्षित महत्त्व बदल जाता है। तकनीकी कुशलता निम्न स्तर के प्रबंधक के लिये अधिक महत्वपूर्ण है। प्रबंधकीय व्युत्क्रम में ऊपर जाने पर इसकी आवश्यकता कम हो जाती है। मानवीय कुशलता की आवश्यकता प्रबंधन के सभी स्तरों पर होती है क्योंकि मानवीय कुशलता व्यक्तियों से काम लेने की कला है। प्रबंधन के उच्च स्तर पर संकल्पनात्मक कुशलता की आवश्यकता होती है। प्रबंध के स्तर तथा उनके लिये आवश्यक कुशलता का अध्ययन प्रबंधकों के प्रशिक्षण में बहुत उपयोगी है। प्रबंध के स्तर के अनुरूप ही कुशलता के स्तर का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

## 10.9 प्रबंधकीय कार्य

प्रत्येक उद्यम में उसकी प्रकृति के अनुरूप विभिन्न कार्य होते हैं। परंतु सभी औद्योगिक संस्थानों में उत्पादन, विपणन, वित्त, एवं कार्मिक संबंधी कार्य किये जाते हैं। अगर एक परिवहन संस्थान को लें तो वहां के कार्यों में यातायात प्रचालन तथा वित्त प्रमुख हैं। फिर भी सभी उद्यमों में हरेक स्तर के प्रबंधकों की गतिविधियों को कुछ मूलभूत कार्यों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

सभी प्रबंधकीय कार्यों को सामूहिक रूप से प्रबंधकीय प्रक्रिया कहा जाता है। इस प्रक्रिया के विश्लेषण द्वारा हम सभी प्रबंधकीय कार्यों को पांच समूहों में बांट सकते हैं। ये हैं – नियोजन, संगठन, कर्मचारी चयन, निर्देशन और नियंत्रण। इनमें से कर्मचारी चयन एवं निर्देशन मानवीय पहलुओं से संबंध रखते हैं। इसलिये इनको प्रबंध का गतिविज्ञान कहते हैं। नियोजन, संगठन और नियंत्रण चूंकि गैर मानवीय पहलुओं से संबंधित हैं इसलिये इनको प्रबंधन की यांत्रिकी कहते हैं। सिद्धांत रूप में इन कार्यों को एक विशिष्ट श्रृंखला में सूचीबद्ध किया जाता है परंतु व्यवहार में ये एक तंत्र के रूप में परस्पर जुड़े हैं। ये सभी कार्य सभी प्रबंधकों के लिये समान रूप से महत्वपूर्ण नहीं हैं। संगठन में उनके स्तर पर इनमें से प्रत्येक कार्य की मात्रा निर्भर करती है। इन कार्यों का वर्णन नीचे किया गया है।

1) **नियोजन (Planning)** : इसका अर्थ है परिस्थितियों का पूर्वानुमान लगाना तथा सही वैकल्पिक मार्ग चुनना। इस कार्य में निम्न गतिविधियों को शामिल किया जाता है।

    i) **पूर्वानुमान** : भावी अवसरों, समस्याओं तथा परिस्थितियों का पूर्वज्ञान करना।

    ii) **उद्देश्य स्थापना** : संगठित प्रयासों के परिणामों का पूर्वनिर्धारण।

    iii) **कार्यक्रम निर्धारण** : इसमें लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये किये गये कार्यों की प्राथमिकता एवं वरीयता क्रम निर्धारित करते हैं।

    iv) **समय सारणी बनाना** : कार्यक्रम के सभी भागों के लिये निश्चित समय श्रृंखला का निश्चय करना।

    v) **बजट बनाना** : कम से कम लागत के लिये संसाधनों का आबंटन करना।

    vi) **विधि निर्धारण** : किसी एक कार्य को करने का एक मानकीकृत तरीका विकसित करना, व प्रयोग में लाना।

    vii) **नीति निर्धारण (Developing Policy)** : सम्पूर्ण संगठन के महत्व की दिन प्रतिदिन समस्याओं तथा विवादों के समाधान के लिये स्थायी नियमों का निर्माण तथा उनकी व्याख्या।

2) **संगठन कार्य (Organising)** : सभी गतिविधियों को पहचान कर उनको समूहों में वर्गीकृत करना और उनमें अधिकार संबंध स्थापित करना प्रबंध का संगठन कार्य कहलाता है। इसके निम्न तत्व हैं।

   i) **संगठन संरचना का विकास** : कार्यों को पहचानना तथा उन्हें निष्पादन की दृष्टि से इकाइयों या विभागों में वर्गीकृत करना।

   ii) **अधिकार प्रदान करना** : प्रबंधकों को अधिकार प्रदान कर विभाग के कार्यों के लिये उत्तरदायी बनाना।

   iii) **सम्बन्धों की स्थापना** : संगठन के सदस्यों के परस्पर सहयोग से उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये अनुकूल वातावरण की स्थापना।

3) कर्मचारी चयन (**Staffing**) : इसका अर्थ संगठन में योग्य कर्मचारी की नियुक्ति करने से है। इस प्रक्रिया में चुनाव (selection) प्रशिक्षण एवं विकास, वेतन प्रदान करना और प्रबंधक द्वारा कर्मचारी के कार्यों का विश्लेषण सम्मिलित है। यह कार्य जनसाधन नियोजन (manpower planning) एवं जनसाधन प्रबंध (manpower management) के अंतर्गत किया जाता है। इसमें कर्मचारियों को उचित पारिश्रमिक देने तथा उनके कार्यों की समीक्षा पर बल दिया जाता है।

4) निर्देशन कार्य (**Directing**) : प्रोत्साहन के द्वारा या अभिप्रेरण के द्वारा व्यक्तियों तथा कार्य का प्रबंधन निर्देशन कहलाता है। इसमें नेतृत्व, संयोजन तथा संचारण आदि तत्व भी सम्मिलित हैं। प्रबंधक को आदेश देने की कला इस प्रकार विकसित करनी चाहिए ताकि उसके आदेश व अनुदेश अधीनस्थों में अप्रसन्नता न पैदा करें। प्रबंधक ऐसा वातावरण बनाये जिससे अधीनस्थ कर्मचारियों का संकल्प एवं रचनात्मकता का विकास हो और वे स्वेच्छा से कार्य करें। सूचना एवं विचारों के लिये एक कुशल संचारण तंत्र भी आवश्यक है ताकि परस्पर सहयोग बढ़ सके।

5) नियंत्रण कार्य (**Controlling**) : नियंत्रण से यह ज्ञात होता है कि परिणाम योजना के अनुरूप है या नहीं? इसके मुख्य तत्व निम्नलिखित हैं।

   i) परिणामों के मूल्यांकन के लिये मानकों का निर्धारण

   ii) कार्य की प्रगति के रिकार्ड तथा रिपोर्ट पर आधारित परिणाम

   iii) मानक के आधार पर परिणाम का मूल्यांकन

   iv) त्रुटियों व कार्यों में सुधार से पूर्ण प्रक्रिया में सुधार

## 10.10 प्रबंध का सामाजिक उत्तरदायित्व

सामाजिक उत्तरदायित्व का आशय प्रबंध का समाज और संगठन के कार्यों से जुड़े हुए अन्य व्यक्तियों के प्रति दायित्व से है।

### 10.10.1 सामाजिक उत्तरदायित्व के कारण

आज के युग में प्रबंध का सामाजिक दायित्व बहुत बढ़ गया है। इसके कारण इस प्रकार हैं।

जैसा कि आप जानते हैं कि व्यावसायिक उद्यम समाज द्वारा ही बनाये जाते हैं इसलिए इन्हें समाज की मांग को पूरा करना चाहिए। अगर प्रबंधन समाज की मांग के परिवर्तन को ध्यान में नहीं रखता तो कानून द्वारा उसे बाध्य किया जा सकता है अथवा उद्यम को बन्द कराया जा सकता है। प्रबंधन द्वारा सामाजिक दायित्व की पूर्ति हो सकती है। किसी भी व्यावसायिक

संगठन का प्रतिबिम्ब या तो उसके उत्पाद या ग्राहक सेवा में दिखता है या फिर उसकी श्रमिकों, उपभोक्ताओं, विनियोजकों, सरकार तथा सम्पूर्ण समाज के प्रति अपेक्षाओं की पूर्ति में। और फिर प्रत्येक व्यावसायिक उद्यम समाज का ही एक भाग है तथा इसकी गतिविधियों से समाज प्रभावित होता है। अतः प्रबंधन के लिये ये विचारना आवश्यक है कि उसकी नीतियों व कार्यों से समाज कल्याण को बढ़ावा मिले, समाज के मूल्यों की रक्षा हो और समाज में शक्ति, स्थायित्व तथा एकता स्थापित हो।

## 10.10.2 संगठन के दायित्व धारक

प्रबंधन के सामाजिक दायित्व की अवधारणा के गति पकड़ने से अब यह भी माना जाने लगा है कि प्रबंधकों का दायित्व केवल स्वामी के आर्थिक हितों से नहीं जुड़ा है वरन् वह अन्य वर्गों जैसे श्रमिकों, उपभोक्ताओं, सरकार तथा सम्पूर्ण समाज के प्रति उत्तरदायी है। ये सभी वर्ग भी : व्यवसाय से प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े हैं और उसकी गतिविधियों से प्रभावित होते हैं। अतः ये भी संगठन के दायित्व धारक हैं। आइये अब विभिन्न वर्गों-स्वामी (अंशधारकों), श्रमिकों, उपभोक्ता, सरकार तथा समाज के प्रति प्रबंध के दायित्वों का संक्षेप में वर्णन करें।

1) **स्वामियों के प्रति उत्तरदायित्व** : प्रबंधकों का प्रथम दायित्व है कि पूँजी पर पर्याप्त एवं उचित प्रतिफल मिले। अंशधारक अपनी पूँजी का निवेश कर जोखिम उठाते हैं। इसलिए उन्हें अपनी पूँजी का यथोचित लाभांश मिलना ही चाहिए। पूँजी पर उचित प्रतिफल की मात्रा व्यापार में सन्निहित जोखिम के अनुपात में निर्धारित की जा सकती है। व्यापार की वृद्धि के साथ अंशधारक भी अपनी पूँजी में वृद्धि की अपेक्षा करते हैं। उनका ऐसा करना न्यायोचित है परन्तु यह पूँजीवृद्धि काला बाजारी अथवा अन्य अनुचित व्यापारिक गतिविधियों द्वारा नहीं होनी चाहिए।

2) **कर्मचारियों के प्रति उत्तरदायित्व** : प्रबंध कर्मचारियों के कल्याण, उचित वेतन तथा पारिश्रमिक कार्य वातावरण, कार्मिक प्रबंध सम्बन्ध आदि के लिये उत्तरदायी है। पारिश्रमिक की उचित मात्रा का निर्धारण उसकी उत्पादकता, क्षेत्र में प्रचलित पारिश्रमिक की दर तथा कार्य के आपेक्षिक महत्व के आधार पर तय की जानी चाहिए। इसी प्रकार प्रबंधकों के वेतन और भत्ते उनकी कार्य कुशलता और दायित्व के आधार पर निर्धारित होने चाहिए। अधिकतम वेतन तथा न्यूनतम पारिश्रमिक में अंतर भी न्यायोचित होना चाहिए। संगठन में वरिष्ठ अधिकारियों तथा अधीनस्थ कर्मचारियों के सम्बन्ध सद्भावपूर्ण होने चाहिए। प्रबंध और कर्मचारी संघ के संबंध भी सौहार्दपूर्ण तथा परस्पर सहयोगी होने चाहिए। कर्मचारियों को सुरक्षित कार्य वातावरण चिकित्सा सुविधा, निवास, कैन्टीन, अवकाश और सेवा निवृत्ति लाभ जैसी कल्याण सुविधायें प्रदान करना भी प्रबंधन का दायित्व है।

3) **उपभोक्ता के प्रति उत्तरदायित्व** : व्यापारिक प्रतिस्पर्धा के युग में ग्राहक सेवा ही प्रबंधन का प्रथम उद्देश्य माना जाता है। परन्तु सभी क्षेत्रों में पूर्ण प्रतिस्पर्धा नहीं है। पूर्ति की कमी होने पर बाजार में स्वयं सुधार नहीं हो पाता। उपभोक्ता को अनेक बार अनुचित व्यापारिक गतिविधियों अथवा अनैतिक व्यापारिक गतिविधि द्वारा धोखा दिया जाता है। इस दशा में। कानून तथा उपभोक्ता संगठन कुछ हद तक उपभोक्ता की रक्षा करते हैं। प्रबंधकों को इन घटनाओं का पूर्वानुमान होना चाहिए ताकि वो उपभोक्ता के हितों का संरक्षण कर सकें और उसकी आवश्यकता पूरी कर सकें। उत्पादित वस्तुओं का स्तर न्यायोचित व मानक के अनुरूप होना चाहिए और वे उचित मूल्य पर पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध करायी जानी चाहिए। प्रबंधकों को जमाखोरी तथा कृत्रिम दुर्लभता और झूठे व भ्रामक विज्ञापन जैसी गतिविधियों को नहीं चलने देना चाहिए।

4) **सरकार के प्रति उत्तरदायित्व** : सामाजिक दायित्व के अंतर्गत प्रबंधन से अपेक्षा की जाती है कि वह व्यापार को सरकारी नियमों के अधीन ही चलायें। सरकार के सभी शुल्क एवं कर ईमानदारी से चुकाने चाहिए। किसी सरकारी अधिकारी को घूस या अन्य प्रलोभन द्वारा निजी हितों के लिये भ्रष्ट नहीं करना चाहिए। सभी व्यापारिक गतिविधियों को सरकार की आर्थिक व सामाजिक नीतियों के अनुसार ही संचालित करना चाहिए।

5) **समाज के प्रति उत्तरदायित्व** : समाज के प्रति प्रबंधन की.उत्तरदायी भूमिका को कल्याणकारी कार्यों द्वारा पूरा किया जा सकता है। इस प्रकार के कार्यों में विकलांग लोगों तथा कमजोर वर्ग के लोगों को रोजगार देना, पर्यावरण सुरक्षा, पिछड़े क्षेत्रों में उद्योग स्थापना तथा प्राकृतिक आपदाओं अर्थात् बाढ़, भूकंप या महामारी आदि के पीड़ितों को सहायता देना आदि प्रमुख हैं।

बोध प्रश्न 2

1) निम्नलिखित प्रबंधकीय गतिविधियों का कार्यानुसार वर्गीकरण कीजिए।

| प्रबंधकीय गतिविधि | प्रबंधकीय कार्य |
|---|---|
| i) पूर्वानुमान | .................................................. |
| ii) संचारण | .................................................. |
| iii) कार्य मानकों की स्थापना | .................................................. |
| iv) प्रबंधकों का चयन | .................................................. |
| v) बजट बनाना | .................................................. |

2) बताइये कि निम्नलिखित कथन **सही है** अथवा **गलत**।

i) निम्न स्तर के प्रबंधन को नीतिपरक (Strategic) प्रबंधन भी कहते हैं। ..................................................

ii) संकल्पनात्मक कुशलता का अर्थ है औजारों, विधियों तथा तकनीक की योग्यता। ..................................................

iii) कार्यकारी प्रबंधन लाभार्जन के लिये उत्तरदायी हैं। ..................................................

iv) नियुक्तियों का अर्थ है संगठन का प्रारूप बनाना। ..................................................

v) अभिप्रेरण नियोजन कार्य का अंग है। ..................................................

vi) उद्यम के कर्मचारी दायित्व धारक हैं। ..................................................

## 10.11 सारांश

समय के साथ प्रबंधन शब्द के विभिन्न अर्थ सामने आये। प्रबंधन एक भिन्न निर्णय लेने वाला समूह है जो प्रक्रिया बनाने वाले कार्यों के व्यवस्थित ज्ञान का प्रयोग करता है। प्रबंधन और प्रशासन में अन्तर उसके प्रयोग के आधार पर किया जा सकता है। वाणिज्यिक संगठनों में प्रबन्धन शब्द का प्रयोग प्रचलित है तथा सामाजिक और राजनैतिक कार्यों में संलग्न सरकारी उद्यमों में प्रशासन शब्द का प्रयोग किया जाता है। लेकिन व्यवहार में दोनों को पर्यायवाची अर्थों में प्रयोग किया जाता है। और फिर इस बात का भी कोई प्रमाण नहीं है कि किसी संगठन के संचालन में प्रबंधकों व प्रशासकों के दो अलग वर्गों की आवश्यकता हो। प्रबंधन की परिभाषा को चार विभिन्न विचारधाराओं (Schools) में बाँटा जा सकता है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

प्रक्रिया विचारधारा प्रबन्धक के कार्यों का विश्लेषण करता है और विभिन्न कार्यों में प्रबंधकीय गतिविधियों को वर्गीकृत करता हैं जैसे नियोजन, संगठन, नियुक्तियां (कर्मचारी चयन) नेतृत्व तथा नियंत्रण। मानवीय विचार धारा संगठन के मानवीय पहलुओं पर बल देते हुए मनुष्य के प्रबंधन पर अधिक महत्व देता है। तीसरी विचारधारा प्रबंधन में निर्णय लेने की कला को अधिक महत्व देती है। इस विचारधारा के अनुसार उपलब्ध विकल्पों में से सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चयन करना प्रबंधन का उद्देश्य है। प्रणाली एवं आकस्मिकता विचारधारा संगठन को बाह्य वातावरण के अनुकूल ढालने पर बल देती है। प्रबंधन की विभिन्न परिभाषाओं तथा संकल्पनाओं के आधार पर ही प्रबंध की प्रकृति के तत्व निर्धारित किये गये हैं।

प्रबंधन अपनी सीमा रेखा में ज्ञान की एक विशिष्ट शाखा है। इसकी परिधि संकल्पनात्मक रूप से वर्गीकृत प्रबंधकीय कार्यों तक सीमित है। उद्यम की प्रकृति एवं उद्देश्यों के आधार पर उसकी गतिविधियां भिन्न हो सकती हैं परन्तु प्रबंधकीय कार्य लगभग समान ही होते हैं। यद्यपि प्रबंधन अभी पूर्ण विज्ञान नहीं है पर पूर्णता की दिशा में अग्रसर है। इसकी प्रगति से ही प्रबंधन की कला का विकास होगा क्योंकि प्रबंधन के सिद्धांतों के प्रयोग को व्यवहार में लाना ही प्रबंधकीय कला है। इसलिये हम कह सकते हैं कि प्रबंधन की कला एवं विज्ञान एक दूसरे के पूरक हैं प्रतिस्पर्धी नहीं। प्रबंधकों अब एक पेशे के रूप में मान्यता मिलने लगी है क्योंकि जटिल संगठनों के इस युग में प्रबंधकीय कार्य करने के लिये प्रबंधकीय ज्ञान एवं विधिवत प्रशिक्षण आवश्यक है। सभी स्तर के प्रबंधकों के लिये संकल्पनात्मक मानवीय एवं तकनीकी कुशलता अति आवश्यक है। उच्च स्तर पर संकल्पनात्मक कुशलता अधिक आवश्यक है जबकि निम्न स्तर पर इसकी कम आवश्यकता होती है। निम्न स्तर पर तकनीकी कुशलता अधिक महत्वपूर्ण है।

समाज तथा संगठन के सभी वर्गों के प्रति प्रबंध के उत्तरदायित्व को उसका "सामाजिक दायित्व" कहते हैं। व्यावसायिक संगठन चूंकि समाज द्वारा निर्मित हैं इसलिए उन्हें समाज की मांग को पूरा करना चाहिए। ऐसा न करने पर समाज कानून द्वारा बाध्य कर सकता है या संगठन का संचालन ही रोका जा सकता है। सामाजिक दायित्व को निभाना संगठन के दीर्घावधि हितों का संरक्षण करता है। प्रबंधक केवल अपने स्वामी का आर्थिक हित ही न देखें वरन् अन्य वर्गों जैसे कि कर्मचारियों, उपभोक्ता, सरकार तथा पूर्ण समाज के हितों की भी रक्षा करें।

## 10.12 शब्दावली

| | |
|---|---|
| **प्रशासन** | : प्रबंध द्वारा निष्पादित नीतियों एवं उद्देश्यों के सम्पूर्ण निर्धारण का बौद्धिक कार्य। |
| **प्रबंध की कला** | : प्रबंध के वैज्ञानिक सिद्धांतों को व्यवहार में लाना। |
| **संकल्पनात्मक कुशलता** | : संगठन की समस्त गतिविधियों व हितों को समझने तथा संयोजित करने की प्रबंधक की योग्यता। |
| **नियंत्रण** | : पूर्वनिर्धारित मानकों से परिणाम की तुलना करना तथा प्राप्त विचलन को सुधारना। |
| **पूर्वानुमान** | : भावी घटनाओं का पूर्वज्ञान करना। |
| **प्रबंध** | : मानव समूह की गतिविधियों के निर्देशन तथा अन्य संसाधनों के उपयोग से पूर्वनर्धारित उद्देश्यों की प्रक्रिया। |
| **संगठन** | : अपेक्षित गतिविधियों को पहचानने तथा वर्गीकृत करने, व्यक्तियों के पारस्परिक संबंध निर्धारित करने और उन्हें अधिकार देने की प्रक्रिया। |

**नियोजन** : भावी कार्यनीति निर्धारित करना।

**पेशा** : एक विशिष्ट प्रकार का कार्य करने के लिये ज्ञान की सुनिश्चित शाखा के सिद्धांतों तथा किसी मान्य संस्था द्वारा निर्धारित आचार संहिता के निर्देशों का व्यवहार।

**नियुक्तियां (कर्मचारी चयन)** : संगठन के प्रारूप में विभिन्न पदों का सृजन व उनके लिये उपयुक्त व्यक्तियों का चयन।

**प्रबंधन का विज्ञान** : ज्ञान की एक सुनिश्चित शाखा के सिद्धांतों, संकल्पनाओं, और तकनीक का प्रबंधकीय कार्यों में प्रयोग।

**सामाजिक दायित्व** : उद्यम एवं प्रबंध से संबंधित वर्गों की अपेक्षायें।

## 10.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

3) i) निर्णय विचारधारा
   ii) प्रक्रिया विचारधारा
   iii) प्रणाली एवं आकस्मिकता विचारधारा
   iv) मानवीय संबंध विचारधारा

4) i) गलत ii) गलत iii) सही iv) गलत v) गलत vi) गलत

बोध प्रश्न 2

1) i) नियोजन ii) नेतृत्व iii) नियंत्रण iv) नियुक्तियां v) नियोजन

2) i) गलत , ii) गलत iii) गलत iv) सही v) गलत vi) गलत

## 10.14 अभ्यास के लिए प्रश्न

1) प्रबंध क्या है? इसकी परिभाषा लिखिये।

2) "प्रबंध कला एवं विज्ञान दोनों है'' क्या आप इससे सहमत हैं? अपने उत्तर को स्पष्ट करें।

3) पेशा क्या है? क्या प्रबंध एक पेशा है? क्यों?

4) विभिन्न स्तर के प्रबंधकों के लिये कुशलता के स्तर की आवश्यकताओं का वर्णन करें।

5) प्रबंध के विभिन्न कार्यों का वर्णन करें।

6) सामाजिक दायित्व की परिभाषा बताइये। (अ) कर्मचारियों (ब) उपभोक्ताओं तथा (स) समाज के प्रति प्रबंधन के दायित्व को स्पष्ट करें।

7) निम्नलिखित में अंतर बताइये।
   अ) प्रबंध एवं प्रशासन
   ब) प्रबंध एक प्रक्रिया और एकाधिकार तंत्र के रूप में
   स) प्रशासनात्मक प्रबंधन एवं क्रियात्मक प्रबंधन

**टिप्पणी** : इन प्रश्नों से आपको इकाई को समझने में सहायता मिलेगी। इनके उत्तर लिखने का प्रयत्न कीजिये। ये प्रश्न केवल आपके अभ्यास के लिये हैं। इसलिये इन प्रश्नों को हल करके आप विश्वविद्यालय न भेजें।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

# इकाई 11 प्रबंधन अध्ययन की विचारधाराएँ

**इकाई की रूपरेखा**

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 प्रबंध विचारधारा का विकास

11.3 वैज्ञानिक प्रबंध

11.4 फैयॉल का प्रशासनिक सिद्धांत

11.5 मानव संबंध विचारधारा

11.6 व्यावहारिक विचारधारा

11.7 निर्णयन सिद्धांत

11.8 आधुनिक (तंत्र) विचारधारा

11.9 प्रासंगिकता की विचारधारा

11.10 सारांश

11.11 शब्दावली

11.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.13 अभ्यास के लिए प्रश्न

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

## 11.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप :

- प्रबंध विचारधारा के विकास के विभिन्न चरणों में अंतर स्थापित कर सकेंगे;
- "वैज्ञानिक प्रबंध'' की अवधारणा का अर्थ बता सकेंगे तथा वैज्ञानिक प्रबंध के सिद्धांतों की गणना कर सकेंगे;
- फैयॉल द्वारा रचित प्रबंध के प्रशासनिक सिद्धांत का विश्लेषण कर सकेंगे;
- प्रबंध में मानव संबंध विचारधारा की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे;
- व्यावहारिक विचारधारा के प्रमुख तत्वों का वर्णन कर सकेंगे;
- प्रबंध में निर्णयन सिद्धांत का वर्णन कर सकेंगे;
- प्रबंध के अध्ययन में आधुनिक (तंत्र) (system) विचारधारा की विशेषताओं को बता सकेंगे; और
- प्रबंध में प्रासंगिकता (contingency) की विचारधारा का स्पष्टीकरण कर सकेंगे।

## 11.1 प्रस्तावना

पहली इकाई में आपने प्रबंध की अवधारणाओं तथा इसकी प्रकृति एवं क्षेत्र का अध्ययन किया है। यद्यपि व्यवहार में प्रबंध उतना ही पुराना है जितनी मानव सभ्यता, किंतु प्रबंध के विभिन्न पहलुओं पर क्रमबद्ध विचार गत शती के प्रारंभ से ही आरंभ हुए हैं। विभिन्न विचारकों ने प्रबंध प्रक्रिया के विषय में अपने अनुभवों तथा समझ के आधार पर प्रबंध कार्य

के बारे में विचार व्यक्त किए हैं। इस इकाई में हम प्रबंधन विचारधारा के अधिक महत्वपूर्ण चरणों, प्रबंधन के अध्ययन की विभिन्न विचारधाराओं और इस संबंध में विकसित सिद्धांतों का वर्णन करेंगे।

## 11.2 प्रबंध विचारधारा का विकास

प्राचीन समय में भी इस बात का पता होगा कि बहुत से व्यक्तियों के सहयोग से किए जाने वाले प्रबंधन का क्या रूप होता है। सभ्यता के उदय होने के समय से ही प्रबंध के व्यावहारिक रूप के विषय में संपूर्ण विश्व में साक्ष्य (evidence) प्राप्त हैं। उचित प्रबंधन के न होने पर मिश्र (egypt) का पिरामिड अथवा चीन की बड़ी दीवार अथवा भारतवर्ष के बड़े-बड़े मंदिरों का निर्माण कार्य असंभव था। किन्तु प्रारंभिक वर्षो में संगठित कार्यों में हस्तचल क्रियाओं की आवश्यकता होती थी जिन्हें व्यक्तियों द्वारा पूर्ण निगरानी में करवाया जाता था। दूसरी ओर, कुटीर उद्योगों में, जो मध्यकालीन युग में अपनी चरम सीमा पर विकसित थे मुख्यतः परिवार के सदस्यों से ही कार्य लिया जाता था, तथा सादा किस्म के उपकरण का प्रयोग किया जाता था।

अठाहरवीं शती के बदलते ही औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप आर्थिक क्रियाओं की व्यवस्था करने में अत्यधिक परिवर्तन सामने आए। वैज्ञानिक तथा तकनीकी आविष्कारों ने बड़े पैमाने के उद्योगों तथा कारखानों को जन्म दिया, जिनमें विद्युत शक्ति तथा यंत्रीकरण का प्रयोग कर सैकड़ों मानवों से काम करवाया जाता रहा। यातायात व संदेश वाहन के तरीकों में भी अत्यधिक परिवर्तन हुए और उन्होंने उत्पादन प्रक्रिया में गति लाकर उत्पादकों को विस्तृत बाजारों में वस्तुओं का वितरण करने की सुविधा प्रदान की। उपक्रमों के आकार तथा बढ़ती हुई जटिलताओं ने प्रबंधन कार्य, उसकी प्रकृति और क्षेत्र में अत्यधिक परिवर्तन ला दिया। अब प्रबंधन कार्य केवल कर्मचारियों पर निगरानी रखने तथा दैनिक कार्यों (routine activities) के करने से ही संबंधित नहीं रह गया है। इसमें अब भौतिक, मानवीय, मौद्रिक साधनों को जुटाना तथा उपक्रम के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए उनका प्रभावी प्रयोग भी शामिल है। प्रबंध की प्रक्रिया तथा उसमें निहित विभिन्न कार्यों ने अब प्रबंध शास्त्र के विशेषज्ञों का ध्यान आकर्षित किया है।

### प्राचीनकाल के विचारक

शिक्षण एवं व्यवहार के क्षेत्र में प्रबंध पर 19वीं शती के आरंभ में ही विचार होने लगा था। इस काल में ही राबर्ट ऑवन, चार्ल्स बाबेज, मैटकाफ तथा ताउने ने प्रबंध व्यवहार को अधिक प्रभावी एवं कुशल बनाने के विषय में अपने-अपने विचारों को व्यक्त किया।

**राबर्ट ऑवन**, जिनकी स्काटलैंड में कई सूती कपड़े की मिलें थीं, ने प्रबंधन में मानव संबंधों के महत्व पर बल दिया। श्रमिकों से प्रतिदिन तेरह तेरह घंटों की लंबी अवधि तक काम कराने, दस वर्ष की आयु से भी कम आयु वाले बालकों से काम कराने तथा श्रमिकों को आवास सुविधाओं को न देने की उस समय की प्रचलित रीति के वे अत्यधिक विरोधी थे। उन्होंने अपने कारखानों में बहुत से सुधारों का प्रयोग किया जैसे, कार्य करने के घंटों में कमी, कार्य करने की दशाओं में सुधार, आवास सुविधाओं को देना, कंपनी की दुकानों द्वारा कम दरों पर वस्तुओं को सुलभ कराना। अपने अनुभवों के आधार पर उन्होंने इस बात की वकालत की, कि मशीनों तथा अन्य भौतिक साधनों पर निवेश करने की बजाय मानव साधनों पर निवेश करना अधिक लाभपूर्ण है। उन्होंने उद्योगपतियों को यह सुझाव दिया कि वे श्रमिकों के प्रति अपने व्यवहार को बदलें तथा उनकी भलाई के कार्यों पर अधिक ध्यान दें।

**चार्ल्स बाबेज,** कैम्ब्रिज में प्रोफेसर थे। इंग्लैंड तथा फ्रांस के कारखानों की प्रबंधन प्रणाली का अध्ययन करने के उपरांत उन्होंने बताया कि मालिक तथा श्रमिक दोनों ही वैज्ञानिक विधियों के प्रमुख उपकरणों तथा विधियों से कतई अपरिचित हैं। वे परंपरा, अनुमान तथा कल्पनाओं के आधार पर काम करते हैं तथा स्वामी-प्रबंधकों ने कभी भी तथ्यों का विश्लेषण करने के पश्चात् निर्णय नहीं लिए हैं। बाबेज के अनुसार, उत्पादकता में वृद्धि तथा व्ययों में कमी लाने के लिए कार्य प्रक्रिया में वैज्ञानिक सिद्धांतों का प्रयोग करना अनिवार्य है। अपने लेखों में बाबेज ने गुणों के आधार पर श्रम-विभाजन करने के महत्व पर बल दिया तथा मशीनों से मानव द्वारा की जाने वाली प्रक्रियाओं को बदलने की पेशकश की।

**हैनरी मैटकाफ़,** सैनिक शस्त्रागार के प्रबंधक, का मत था कि प्रशासन का विज्ञान अनुभव तथा अवलोकन पर विकसित सिद्धांतों के आधार पर होना चाहिए। उनके अनुसार, प्रबंधन कला संकलित अवलोकन, जो क्रमबद्ध रूप में किया गया हो, के आधार पर होना चाहिए। उन्होंने टाइम कार्डो और सामग्री का पर एकत्रित तथ्यों और स्वचालित प्रक्रियाओं के आधार पर अपनी पुस्तक निर्माण की लागत तथा कार्यशालाओं के प्रशासन के माध्यम से नियंत्रण की एक विधि का सुझाव दिया।

**हैनरी रोबिनसन ताउने (Henry Robinson Towne)** एक निर्माणक कंपनी के प्रमुख अधिशासी थे। प्रबंध शास्त्र में उनका मुख्य योगदान प्रबंधक की परिभाषा थी जो उन्होंने प्रबंधक की भूमिका को प्रशासक, इंजीनियर तथा सांख्यिक तीनों के संयोजन के रूप में दी थी। ताउने के अनुसार औद्योगिक कार्य का प्रबंधन करने के लिए अच्छे व्यवसायी तथा कुशल इंजीनियर के गुणों के संयोजन की आवश्यकता पड़ती है। उन्होंने इंजीनियर्स को प्रबंध शास्त्र का अध्ययन करने के लिए प्रेरित किया तथा उनको लागत के विषय में सचेत रहने का परामर्श दिया। उसी समय उन्होंने इस बात पर भी जोर दिया कि प्रबंधन प्रक्रिया के बहुल आयाम (multiple dimensions) हैं तथा एक इंजीनियर-प्रबंधक को इस विषय में सचेत रहना चाहिए।

प्रबंधन क्षेत्र के प्रारंभिक विचारकों ने विभिन्न विधियों से निर्णायक उपक्रमों के कार्यों में सुधार लाने का प्रयास किया। इस प्रक्रिया में इन विचारकों ने प्रबंध के व्यवहारिक क्षेत्र में एक नई पृष्ठभूमि प्रदान की। संपूर्ण 19वीं शती में पश्चिमी यूरोपीय देशों तथा यू.एस.ए. में व्यवसाय तथा उद्योग में तीव्र गति से विकास हुआ। घरेलू तथा अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में इस अवधि में होने वाली प्रतियोगिता ने प्रबंधकों का ध्यान अपने उपक्रमों में उत्पादकता तथा कुशलता में वृद्धि करने की ओर आकृष्ट किया।

## 11.3 वैज्ञानिक प्रबंधन (Scientific Management)

फ्रैडरिक टेलर ने यू.एस.ए. में 20वीं शती के आरंभ में वैज्ञानिक प्रबंधन की विचारधारा को प्रतिपादित किया था। उस समय प्रबंधन पहल (initiative) तथा प्रेरणा (incentive) तत्वों के बल पर किया जाता था। टेलर ने अपना जीवन मेडिविल स्टील कारखाने में कार्य करने वाले मशीन पर काम करने वाले कारीगर के रूप में शुरू किया था। धीरे-धीरे उन्होंने अपनी योग्यता में वृद्धि की और फोरमैन तथा बाद में उसी कारखाने में मुख्य अभियंता (chief engineer) बन गये। उसके पश्चात् उसने एक दूसरी स्टील कंपनी के परामर्शदाता के रूप में कार्य किया। यह कंपनी उत्पादन की गंभीर समस्याओं से ग्रसित थी। बहुत से प्रेक्षणों तथा शॉप फ्लोर पर कार्य करने से संबंधित प्रयोगों और श्रमिकों के प्रति अधिकारियों के व्यवहार का अध्ययन के आधार पर टेलर ने वैज्ञानिक प्रबंधन के सिद्धांतों का प्रतिपादन किया। टेलर द्वारा प्रतिपादित वैज्ञानिक प्रबंध का सिद्धांत वास्तव में प्रबंध का वैज्ञानिक

दृष्टिकोण रखता है। इसका प्रमुख उद्देश्य भूल तथा सुधार और अंगूठे के जोर पर प्रबंध (rule of thumb) की परंपरा को बदलना था। नई विचारधारा का आधार निम्नलिखित सिद्धांत थे :

1) कार्य का मापदंड निर्धारित करने, उचित मज़दूरी दर को निश्चित करने तथा कार्य को श्रेष्ठतम विधि से करने के लिए वैज्ञानिक विधियों का विकास तथा प्रयोग करना।

2) अधिकतम कुशलता प्राप्त करने के लिए श्रमिकों का वैज्ञानिक विधि से चयन तथा उनको कार्य पर लगाना तथा उनके प्रशिक्षण एवं विकास की व्यवस्था करना।

3) अधिकारियों तथा श्रमिकों के बीच स्पष्ट आधार पर कार्य विभाजन तथा उत्तरदायित्व को निर्धारित करना।

4) नियोजित कार्यों तथा उपकार्यों के अनुसार कार्य निष्पादित कराने के हेतु श्रमिकों के बीच सहयोग तथा मधुर संबंधों की स्थापना करना।

वैज्ञानिक प्रबंध को सफलीभूत करने के लिए बहुत सी तकनीकों का विकास किया गया। इन सभी को मिलाजुलाकर नई विचारधारा के तंत्र के लिए निम्नलिखित तकनीकों को अपनाया गया।

1) किसी कार्य की विभिन्न प्रक्रियाओं को पूरा करने में लगने वाले समय का मापन तथा विश्लेषण का अध्ययन, प्रक्रियाओं का प्रमापीकरण और उचित मज़दूरी का निर्धारण करना।

2) किसी कार्य को निष्पादित करने में की जाने वाली गति का अध्ययन जिससे कार्य की जाने वाली गति को रोका जा सके तथा कार्य निष्पादित का एक सर्वश्रेष्ठ तरीका निर्धारित किया जा सके।

3) उपकरण, यंत्रों व मशीनों का प्रमापीकरण तथा कार्य करने की दशाओं में सुधार।

4) कुशल एवं अकुशल श्रमिकों की मज़दूरी की भिन्न दरें तथा प्रेरणात्मक मज़दूरी दर को अपनाना।

5) कार्यात्मक फोरमैनी (functional foremanship) को अपनाना जिसमें मशीन की गति, सामूहिक कार्य, रिपेयर्स कराने आदि के लिए पृथक-पृथक फोरमैनों की नियुक्ति की जानी चाहिए।

टेलर ने वैज्ञानिक प्रबंधन के अपने विचारों को व्यवस्थित रूप में व्यक्त किया है। प्रबंधन व्यवहार के क्षेत्र में उनका प्रमुख योगदान निम्नलिखित पहलुओं से संबंध रखते हैं :

क) प्रबंध की समस्याओं को हल करने के लिए पूछताछ, अवलोकन और प्रयोग करने के लिए वैज्ञानिक विधियों को अपनाना।

ख) नियोजन कार्य को उसकी निष्पत्ति से पृथक रखना जिससे श्रमिक अपनी सर्वश्रेष्ठता का प्रदर्शन कर अपनी जीविका अर्जित कर सकें।

ग) प्रबंध का उद्देश्य उद्योगपतियों की अधिकतम खुशहाली के साथ श्रमिकों की अधिकतम भलाई होनी चाहिए। वैज्ञानिक प्रबंध के लाभ को प्राप्त करने हेतु श्रमिकों और प्रबंधकों में संपूर्ण मानसिक क्रांति की आवश्यकता है। साथ ही ये लाभ आपसी संबंधों में मधुरता एवं सहयोग से प्राप्त होना चाहिए। व्यक्तिवाद तथा मनमुटाव से नहीं।

### गुण

वैज्ञानिक प्रबंधन का प्रमुख लाभ शक्ति के प्रत्येक औंस का संरक्षण तथा उचित प्रयोग करना है। फिर, विशिष्टीकरण और श्रम-विभाजन ने एक दूसरी औद्योगिक क्रांति उत्पन्न कर दी है। कार्यों को अधिक कुशल एवं विवेकपूर्ण रीति से निष्पादित करने के लिए समय तथा गति की तकनीकें महत्वपूर्ण उपकरण हैं। संक्षेप में वैज्ञानिक प्रबंधन उपक्रम की समस्याओं का हल निकालने के लिए केवल एक विवेकपूर्ण विधि ही नहीं है वरन् यह प्रबंधन के व्यावहारिक पक्ष को भी सुविधाजनक बनाता है।

यद्यपि टेलर द्वारा ही वैज्ञानिक प्रबंध के प्रमुख सिद्धांतों का प्रतिपादन किया गया था, तथापि उसके कई अनुयायियों ने जैसे गैंट, फ्रैंक और लिलियन, गिलबेथ तथा इमरसन ने इन विचारों का विस्तार किया, नई तकनीक विकसित की तथा प्रबंधन की इस नवीन विचारधारा में सुधार किया। व्यावहारिक रूप में वैज्ञानिक प्रबंध उत्पादकता में वृद्धि लाने तथा कार्य-प्रक्रियाओं की क्षमता बढ़ाने के लिए यू.एस.ए. तथा पश्चिमी यूरोप में दूर-दूर तक अपनाया गया।

### सीमाएँ

वैज्ञानिक प्रबंध की अपनी सीमाएं भी हैं तथा कई आधारों पर इसकी आलोचना भी की गई है। कुछ आलोचकों का कहना है कि वैज्ञानिक प्रबंध तकनीकी अर्थ में ही श्रमिकों की कार्यकुशलता से संबंधित है तथा यह उत्पादन के महत्व पर ही बल देता है। श्रमिक आरंभ से ही कामचोर होते हैं। प्रबंधकों की उन पर कड़ी निगरानी की आवश्यकता है तथा प्रबंधकों को अपना अधिकार इस संबंध में प्रयोग करना चाहिए। इन मान्यताओं पर यह सिद्धांत आधारित है। यह भी कहा जाता है कि श्रमिकों को केवल मुद्रा से ही अभिप्रेरित किया जा सकता है। कार्य के वातावरण के सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक पहलुओं पर कोई विचार नहीं किया जाता। अन्य आलोचकों ने इसे अवैज्ञानिक, असामाजिक, मनोवैज्ञानिक रूप से अनुचित तथा प्रजातंत्रीय विरोधी बताया है। यह अवैज्ञानिक है, क्योंकि श्रमिकों की क्षमता तथा मज़दूरी मापन की कोई उचित तथा विश्वसनीय विधि नहीं है। यह असामाजिक है क्योंकि श्रमिकों के साथ आर्थिक उपकरणों के रूप में व्यवहार किया जाता है। यह मनोवैज्ञानिक रूप में अनुचित है क्योंकि एक श्रमिक को दूसरे के साथ अधिक उत्पादन करने तथा अधिक कमाने के लिए, अस्वस्थ प्रतियोगिता करनी पड़ती है। यह प्रजातंत्रीय विरोधी है क्योंकि यह श्रमिकों की स्वाधीनता को कम करती है। श्रमिक संघ इसका विरोध करते हैं क्योंकि यह प्रबंधन को तानाशाही बनाती है, कर्मचारियों के कार्य का भार बढ़ाती है। तथा उनके रोज़गार के अवसरों पर विपरीत प्रभाव डालती है।

## 11.4 फैयॉल का प्रशासनिक सिद्धांत (Fayors Administrative Theory)

वैज्ञानिक प्रबंध प्रमुखतः श्रमिकों की व्यक्तिगत रूप से कार्यशाला में उत्पादन कार्यक्षमता में वृद्धि लाने से संबंधित था। संपूर्ण उपक्रम के कार्यों में प्रबंधक की भूमिका तथा उसके कार्यों पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया। इसी अवधि में, अर्थात 20वीं शती के प्रथम चतुर्थांश में, फ्रांस की एक कोयले की कंपनी में हैनरी फैयॉल निदेशक थे जिन्होंने प्रबंधन प्रक्रिया का विधिवत विश्लेषण किया। प्रबंधन के अध्ययन में उनके दृष्टिकोण को प्रबंध-प्रक्रिया अथवा कार्यात्मक विचारधारा कहा जाता है।

फैयॉल के अनुसार, किसी भी उपक्रम में व्यापारिक क्रियाएं एक दूसरे पर निर्भर 6 (six) प्रक्रियाओं में बांटी जाती हैं– तकनीकी (technical), व्यापारिक (commercial); वित्तीय (financial), सुरक्षा (security), लेखाकर्म (accounting) और प्रशासनिक (administrative) अथवा प्रक्रियाओं का प्रबंधन (managerial operations)। उन्होंने प्रबंधन प्रक्रियाओं तथा कार्य करने के लिए आवश्यक गुणों का विश्लेषण किया जिन पर विचारकों ने अब तक बहुत कम ध्यान दिया था। उन्होंने प्रबंधन प्रक्रिया को सार्वभौमिक रूप में प्रयोग किया जाने वाला बतलाया तथा प्रक्रिया के पांच तत्वों में अंतर स्पष्ट किया। अर्थात् पूर्वानुमान लगाना, नियोजन करना, व्यवस्था करना, आदेश देना, समन्वय करना और नियंत्रण करना। इस प्रकार प्रबंध की अवधारणा को नियोजन, व्यवस्था आदि कार्यों के निष्पादन करने के रूप में परिभाषित किया गया। उपक्रम के सभी स्तरों पर नियुक्त सभी प्रबंधकों को यह कार्य संपादित करना होता है तथा सभी देशों में सभी प्रकार के उद्योगों में इस कार्यप्रणाली को अपनाया जाता है।

फैयॉल ने कुछ निश्चित गुणों का प्रयोग करना भी आवश्यक बतलाया जो क्रमबद्ध रूप में निर्देश तथा प्रशिक्षण द्वारा ग्रहण किए जा सकते हैं। एक बार इन गुणों को ग्रहण करने के उपरांत, उनका सभी प्रकार के संस्थानों में प्रयोग किया जा सकता है। इन संस्थाओं में चर्च, स्कूल, राजनैतिक तथा औद्योगिक संस्थाएं भी सम्मिलित हैं।

प्रबंधन प्रक्रिया तथा प्रबंध कार्यों का क्रमबद्ध विश्लेषण करने के साथ साथ फैयॉल ने 14 सिद्धांतों का एक सैट भी प्रतिपादित किया। ये सिद्धांत प्रबंधन प्रक्रिया का प्रयोग करने में पथ प्रदर्शक बनते हैं। आप इन सिद्धांतों का इकाई संख्या 3 में अध्ययन करेंगे। इन सिद्धांतों को लचीला रूप दिया गया है। यह आशा की गई है कि यह प्रबंधकों के लिए सहायक होंगे। प्रभावी प्रबंधन के लिए आवश्यक गुण तथा योग्यताएं उपक्रम के विभिन्न स्तरों के प्रबंधकीय पदों पर निर्भर करती हैं। फैयॉल के अनुसार प्रशासनिक गुण प्रबंधकों के उच्चस्तरीय स्तर पर अनिवार्य हैं जबकि तकनीकी गुण नीचे के स्तर पर कार्य करने वाले पदों के प्रबंधकों के लिए आवश्यक हैं। उनका यह भी विश्वास था कि जीवन के प्रत्येक मोड़ पर व्यक्तियों के लिए प्रबंधकीय प्रशिक्षण अनिवार्य हैं। उन्होंने ही पहली बार प्रबंधन क्षेत्र में औपचारिक शिक्षा तथा प्रशिक्षण की आवश्यकता पर बल दिया। संक्षेप में, फैयॉल का विश्लेषण साधनों का एक सैट (अर्थात्, नियोजन, व्यवस्था, आदेश, समन्वय तथा नियंत्रण) प्रबंधन प्रक्रिया को चलाने तथा मार्गदर्शन के लिए (जैसे प्रक्रिया को व्यावहारिक रूप देने के लिए सिद्धांत) प्रदान करता है।

प्रबंध का प्रशासनिक सिद्धांत तथा प्रबंध की कार्यात्मक विचारधारा फैयॉल द्वारा रखी गई नींव पर ही विकसित हुए हैं। उन्होंने प्रबंधन प्रक्रिया का विश्लेषण करने के लिए एक अवधारणात्मक ढांचा बनाकर दिया। साथ ही, उन्होंने प्रबंध को एक पृथक स्वतंत्र इकाई का सम्मान देकर उसका विश्लेषण किया। ज्ञान के समूह के रूप में प्रबंध को अत्यधिक लाभ फैयॉल द्वारा प्रबंधकीय गुणों का विश्लेषण कर उन्हें सार्वभौमिकता प्रदान करने तथा उनके सामान्य प्रबंध के सिद्धांतों से ही मिला। यद्यपि कुछ आलोचकों ने इसे असंगत अथवा पारस्परिक विरोधी, अस्पष्ट तथा प्रबंधकों का पक्ष लेने वाला सिद्धांत बताया है, फिर भी यह सिद्धांत संपूर्ण विश्व में प्रबंध शास्त्र की शिक्षा तथा व्यवहार में अपना महत्वपूर्ण प्रभाव रखता है।

**बोधं प्रश्न 1**

1) बताइए निम्नलिखित कथनों में कौन से सही तथा **कौन से गलत** हैं।

   i) सभ्यता की किरणों के साथ ही प्रबंधन पर विचार करना आरंभ हो गया था।

   ii) वैज्ञानिक प्रबंधन की विचारधारा केवल वैज्ञानिक तकनीक, जैसे समय तथा गति अध्ययन के प्रयोग पर आधारित है।

   iii) हैनरी मैटकाफ़ ने कार्य के रिकार्ड तथा स्वचालित कार्य की सहायता से नियंत्रण करने की विधि का सुझाव दिया था।

   iv) टेलर ने कार्य करने के तरीकों का अवलोकन कर तथा उन पर प्रयोग करने के पश्चात् ही वैज्ञानिक प्रबंधन के सिद्धांतों को विकसित किया।

   v) कार्यशाला में होने वाले कार्य के प्रबंधन का ही टेलर ने मुख्यतः अध्ययन किया।

   vi) एक प्रबंधक के लिए आवश्यक योग्यताएं उसके द्वारा उपक्रम में प्राप्त स्थिति तथा पद से संबंध रखती हैं।

   vii) प्रबंध प्रक्रिया से संबंधित पांच तत्वों अथवा कार्यों के बीच फैयॉल ने अंतर स्पष्ट किया था।

   viii) प्रबंध के अध्ययन के लिए फैयॉल द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण प्रशासनिक विचारधारा कहलाती है।

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

   i) श्रमिकों की भलाई के महत्व पर प्रबंध के एक प्रारंभिक विचारक .................... द्वारा बल दिया गया था।

   ii) विभिन्न विशिष्ट फोरमैनों द्वारा कार्य की निगरानी करना .............................. कहलाता है।

   iii) प्रबंध की विचारधारा की परिभाषा फैयॉल ने निश्चित ............................. के निष्पादन की प्रक्रिया कह कर दी है।

   iv) श्रमिक संघ वैज्ञानिक प्रबंधन का विरोध करते हैं क्योंकि यह कर्मचारियों की . ..................................... में वृद्धि करता है।

   v) ताउने के अनुसार, एक प्रबंधक को .................................... को भूमिकाओं का मिश्रण कर लेना चाहिए।

## 11.5 मानव संबंध विचारधारा (Human Relations Approach)

हमने कार्यशाला में काम कर रहे श्रमिकों की कार्यक्षमता तथा उत्पादकता के बारे में चर्चा की है। फैयॉल की प्रबंधन के क्षेत्र में कार्यात्मक विचारधारा जिसका उद्देश्य प्रबंधकीय कार्यों में सुधार लाना था, की भी चर्चा हम कर चुके हैं। 1925 तथा 1935 के बीच बहुत से विशेषज्ञों के विचार उपक्रमों की कार्यविधि में मानव पक्ष को लेकर सामने आए। यह महसूस किया जाने लगा कि पहले के विचारों के प्रबंधविषयक विचार अपूर्ण थे क्योंकि इन विचारों में श्रमिकों को मानव मानते हुए उनके व्यवहार, उनकी भावनाओं तथा उनकी आवश्यकताओं के बारे में बहुत ही कम सामग्री थी। वास्तव में वैज्ञानिक प्रबंधन में कार्य विधियों की तकनीकी विचारधारा सभी परिस्थितियों में टिकाऊ परिणाम नहीं दे पाई थी। कार्यस्थल पर

पाये जाने वाले व्यक्तिगत तथा सामूहिक संबंध नियोजन तथा प्रमाणीकरण से प्राप्त होने वाले अधिकतम परिणामों अथवा कार्यकुशलता के लिए दिए जाने वाली मौद्रिक प्रेरणाओं में बाधक बन गए थे–

ऐलटन मायो तथा उनके साथियों द्वारा किए गए बहुत से प्रयोगात्मक अध्ययनों के परिणाम स्वरूप प्रबंध में मानव संबंध विचारधारा का विकास हुआ। ये अध्ययन यू.एस.ए. में होथोर्न स्थित वेस्टर्न इलैक्ट्रिक प्लांट में किए गए थे। होथोर्न अध्ययन का उद्देश्य श्रमिकों की उत्पादकता तथा कार्य निष्पत्ति को प्रभावित करने वाले कारकों को ढूंढ निकालना था। ये निष्कर्ष इस प्रकार थे–

1) कार्यस्थल का नैसर्गिक वातावरण (physical environment) कार्यक्षमता पर कोई विशेष प्रभाव नहीं डालता।

2) श्रमिकों तथा उनकी कार्य-टोली का कार्य के प्रति अनुकूल व्यवहार कार्यक्षमता को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण कारक है।

3) श्रमिकों की सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने से श्रमिकों के मनोबल तथा कार्यक्षमता पर लाभपूर्ण प्रभाव पड़ता है।

4) श्रमिक ग्रुप जो सामाजिक पारस्परिक प्रभाव तथा सामान्य हित पर आधारित होते हैं, श्रमिकों के कार्य निष्पादन पर गहरा प्रभाव डालते हैं।

5) केवल आर्थिक पारितोषण श्रमिकों को प्रभावित नहीं कर पाता। कार्य सुरक्षा, अधिकारियों द्वारा प्रशंसा, संबंधित विषयों पर विचार व्यक्त करना आदि जैसे कारक अभिप्रेरित करने के अधिक महत्वपूर्ण कारक हैं।

प्रबंध की समस्याओं की मानव संबंधी विचारधारा इस धारणा पर आधारित है कि आधुनिक व्यवस्था एक सामाजिक तंत्र है **जिसमें सामाजिक वातावरण और पारस्परिक संबंध कर्मचारियों के व्यवहार को प्रभावित करते हैं।** यह इस बात पर बल देता है कि अधिकारियों तथा अधीनस्थों के बीच अधिकार-दायित्व संबंध कर्मचारियों की सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक संतुष्टि से संबंधित होना चाहिए। कर्मचारियों को प्रसन्न रखकर ही एक उपक्रम उनका पूर्ण सहयोग प्राप्त कर सकता है तथा इस प्रकार उनकी कार्यक्षमता में वृद्धि लाता है। प्रबंध को कार्यरत सामाजिक समूहों के विकास को प्रोत्साहित करना चाहिए तथा कर्मचारियों के विचारों को मुक्त रूप से व्यक्त करने का अवसर प्रदान करना चाहिए। प्रबंधकों को प्रजातांत्रिक नेतृत्व के महत्व को स्वीकार कर लेना चाहिए जिससे सम्प्रेषण मुक्त रूप से प्रवाहित हो सकेगा और अधीनस्थ निर्णयन में भाग ले सकेंगे।

यह ध्यान रखना चाहिए कि मानव संबंधों की विचारधारा का उद्देश्य कर्मचारियों की उत्पादन क्षमता में वृद्धि करना था। कर्मचारियों की संतुष्टि ही उच्च उत्पादकता तथा कार्यक्षमता के उद्देश्य को प्राप्त करने का सर्वश्रेष्ठ साधन है। इसके लिए यह आवश्यक है कि प्रबंधक यह जान लें कि कर्मचारी वह काम क्यों करते हैं जो वे करना चाहते हैं तथा कौन से सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक कारक उन्हें अभिप्रेरित करते हैं। अतः संतुष्टि प्रदान करने वाले कार्य-वातावरण को उत्पन्न करने के लिए प्रयास करना चाहिए जिसमें वे लोग अपनी आवश्यकताओं को पूरा कर सकें तथा उपक्रम के लक्ष्यों की प्राप्ति में सहयोग प्रदान कर सकें।

## 11.6 व्यवहारिक विचारधारा (Behavioural Approach)

प्रबंध की व्यावहारिक विचारधारा का विकास, मानव संबंध विचारधारा का ही उपपरिणाम है। किंतु समाजशास्त्र, सामाजिक मनोविज्ञान और मानव विज्ञान के क्षेत्रों से संबंधित विद्वानों

तथा प्रबंधशास्त्रियों द्वारा किए गए गहन प्रयोगों के निष्कर्षों की इस पर पड़ी छाप भी परिलक्षित होती है। **व्यावहारिक विचारधारा उपक्रमों में मानव व्यवहार के सामाजिक और मनोवैज्ञानिक पहलुओं से संबंधित थी।** होथोर्न अध्ययनों के बहुत से निष्कर्षों की पुष्टि बाद के शोध अध्ययनों द्वारा कर दी गई है। किंतु कुछ विचारों को विकसित किया गया और अन्य को व्यावहारिक विचारधारा से प्रेरित वैज्ञानिकों ने विशिष्टता प्रदान की।

व्यावहारिक विचारधारा के कुछ अधिक महत्वपूर्ण तत्वों को यहां व्यक्त किया जा रहा है :

1) व्यक्ति का व्यवहार उसके समूह के व्यवहार से अत्यधिक निकटता से जुड़ा रहता है। हर व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से अपने व्यवहार में परिवर्तन लाने वाले दबाबों का विरोध कर सकता है। किंतु, जब उसका समूह इस परिवर्तन को स्वीकार करता है तो वह इस परिवर्तन के लिए खुशी से तैयार हो जाता है। समूह द्वारा कार्य का मानदंड निर्धारित करने पर उसे समूह से संबंधित व्यक्ति अधिक कड़ाई के साथ परिवर्तन का विरोध करेंगे। फिर, जो कुछ भी श्रमिक मालिकों की उत्पादन संबंधी अपेक्षा को जिस रूप में समझ पाते हैं, वही उत्पादन-स्तर को निर्धारित करती है अथवा उसको प्रभावित करती है। इसका कारण यह है कि प्रबंध किसी विशेष उत्पादन स्तर का निर्धारण नहीं कर पाता बल्कि यह उचित स्तर का सुझाव देता है। और श्रमिक प्रायः यह विश्वास करते हैं कि यदि वे अधिक कार्य करेंगे तो उनकी मज़दूरी दर कम कर दी जावेगी।

2) अनौपचारिक नेतृत्व फोरमैन अथवा पर्यवेक्षण के औपचारिक अधिकार की अपेक्षा सामूहिक निष्पादन के मानदंड को निर्धारित करने में अधिक महत्व रखता है। नेता के रूप में प्रबंधक अधिक प्रभावी रहेगा और अधीनस्थों को स्वीकार्य होगा यदि वह प्रजातांत्रिक नेतृत्व स्वरूप को अपनाएगा। यदि लक्ष्य निर्धारण में अधीनस्थों को प्रोत्साहित किया जाएगा तो कार्य के प्रति उनकी भूमिका अधिक उपयोगी रहेगी। तकनीक (technology) और कार्य विधि में परिवर्तन को श्रमिकों द्वारा प्रायः विरोध किया जाता है। परंतु श्रमिकों को योजना और कार्य डिज़ाइन (design) में सम्मिलित कर इस परिवर्तन को आसानी से लाया जा सकता है।

3) अधिकांश व्यक्ति स्वभाव से ही कार्य करने में आनंद का अनुभव करते हैं तथा स्व-नियंत्रण और स्वयं के विकास से अभिप्रेरित होते हैं। प्रबंधकों को उन परिस्थितियों को पहचानना चाहिए और उपक्रम के कार्यों में मानव शक्ति के प्रयोग हेतु आवश्यक वातावरण (conditions) प्रदान करना चाहिए। प्रबंधकों का अधीनस्थों के प्रति व्यवहार धनात्मक होना चाहिए। उन्हें ध्यान रखना चाहिए कि औसतन व्यक्ति आलसी नहीं होता वरन् प्रकृति के अनुसार आगे बढ़ने की इच्छा रखता है। वह महत्वाकांक्षी होता है। प्रत्येक व्यक्ति कार्य करना तथा उत्तरदायित्व स्वीकार करना पसंद करता है।

## 11.7 निर्णयन सिद्धांत (Decision Theory)

निर्णयन लक्ष्य प्राप्ति के लिए उपलब्ध विभिन्न विकल्पों में से एक विकल्प के चुनने की एक प्रक्रिया है। अतः निर्णयन प्रक्रिया में, उद्देश्यों अथवा लक्ष्यों का निर्धारण, समस्याओं को परिभाषित करना, उनका मूल्यांकन करना, तथा निर्णयन को प्रयोग में लाना सम्मिलित होता है। सभी संगठन क्रियाओं में कार्य करने से पूर्व निर्णय लेना आवश्यक होता है। कार्य के निदेशन के लिए प्रत्येक प्रबंधक को विभिन्न अंतराल में निर्णय लेना होता है। नीचे के स्तर पर, प्रतिदिन के कार्यों के लिए नैतिक निर्णय लेने होते हैं जो उनके अधिकार क्षेत्र में होते

हैं। प्रबंध के उच्च स्तर पर विस्तृत प्रभाव तथा दीर्घ अवधीय परिणाम रखने वाले निर्णय लिए जाते हैं। प्रबंधकों के पद निर्णय केंद्र कहलाते हैं।

प्रबंधन के निर्णय विचारधारा के अनुसार प्रबंध प्रक्रिया में आवश्यक रूप से मानव समस्याओं का हल निहित है जो विश्लेषण और तर्क के बाद उचित निर्णय पर आधारित है। इसमें व्यक्तियों द्वारा अपनी प्राथमिकताओं तथा व्यवहार करने की प्रणाली निहित होती है जो उनकी आवश्यकता उनके द्वारा वातावरण की समझ पर आधारित होती है। उपक्रम की संगठन प्रक्रिया को समझने की कुंजी निर्णय केंद्रों तथा सम्प्रेक्षण के माध्यमों की समझ है। निर्णयन प्रक्रिया में अन्य व्यक्तियों के योगदान को प्राप्त करने तथा उसका समन्वय करना प्रबंध निर्णयन का उद्देश्य है। इसकी प्राप्ति जहां तक संभव हो, विभिन्न विकल्पों पर संबंधित व्यक्तियों के विचारों पर प्रभाव डालकर की जाती है। फलस्वरूप प्राप्त निर्णयन उद्देश्यों की आवश्यकताओं के अनुरूप बैठते हैं।

निर्णयन सिद्धांत स्वीकार करता है कि प्रबंधकों के लिए हर समय आदर्श निर्णय लेना संभव नहीं है। इसके कई कारण हैं। निर्णयन प्रक्रिया में मूल आवश्यकता निर्णयन परिस्थिति से संबंधित सभी उचित सूचना को एकत्रित करना होता है। किंतु, सूचना एकत्रित करने और उनका विश्लेषण तथा मूल्यांकन करना बहुधा अत्यधिक महंगा तथा समय लेने वाला होता है। दूसरे, निर्णय लेने वाले को सभी विकल्पों तथा उनसे प्राप्त परिणामों की जानकारी अनिश्चितता तथा जोखिम भरी परिस्थितियों में होगी ही, यह कहना कठिन हो जाता है। अस्तु निर्णय प्रायः व्यक्तिगत मूल्यांकन अथवा विचार पर ही निर्भर करते हैं।

## 11.8 आधुनिक (तंत्र) विचारधारा – (Modern (Systems) Approach)

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

सरल शब्दों में, एक तंत्र को व्यवस्थित इकाई अथवा समग्र बनाने के लिए पारस्परिक निर्भर रहने वाले भागों को सैट कहा जा सकता है। इन भागों को उप-तंत्र भी कहा जाता है, जो आपस में एक दूसरे को प्रभावित करते हैं तथा परिवर्तित किए जाने योग्य हैं। वे पारस्परिक संबंध रखते हैं तथा पारस्परिक रूप में निर्भर रहते हैं। अस्तु किसी भी उप-तंत्र में आने वाले परिवर्तन का प्रभाव अन्य उप-तंत्रों पर भी पड़ता है। किसी भी कार्यरत उपक्रम में मोटे रूप में तीन उप-तंत्र होते हैं–

क) तकनीकी उप-तंत्र, जो उपक्रम के सदस्यों के बीच औपचारिक संबंधों को प्रदर्शित करते हैं,

ख) सामाजिक उप-तंत्र, जो अनौपचारिक समूह संबंधों के माध्यम से सदस्यों को सामाजिक संतुष्टि प्रदान करते हैं,

ग) शक्ति उप-तंत्र, जो व्यक्ति तथा समूह की शक्ति अथवा प्रभाव को परिलक्षित करता है।

इन सभी उप-तंत्रों का पारस्परिक प्रभाव के परिणामस्वरूप समग्र तंत्र बन पाता है। समग्र तंत्र तथा उपतंत्र वातावरण से भी प्रभावित होते हैं। जो स्वयं भी तंत्र तथा उप-तंत्रों से प्रभावित, होता है। तंत्र विचारधारा की निम्नलिखित विशेषताएं हैं।

1) तंत्र पारस्परिक संबंधित किंतु पृथक तत्वों का एक समूह है।
2) सभी तत्व एक क्रम में व्यवस्थित किए जाते हैं।
3) तत्वों के बीच पारस्परिक प्रभाव स्थापित करने के लिए उचित सम्प्रेषण की आवश्यकता होती है।

4) इस पारस्परिक निर्भरता से सामान्य लक्ष्य भी प्राप्त होना चाहिए।

उपक्रम के कार्यों को मूलभूत तत्वों के संदर्भ में देखा जाता है जो आदानों को उत्पादन में परिवर्तित करते हैं। द्रव्य (money) कर्मचारी तथा स्वयं प्रबंधक भी, तंत्र के भाग होते हैं। आदान (inputs) सामग्री, सूचना व शक्ति है, जो उपक्रम में प्रवाहित होते हैं। उपक्रम द्वारा उत्पन्न वस्तुएं, सेवाएं तथा संतुष्टि, उत्पादन के रूप में होते हैं। उपक्रम आदानों को बहुत से प्रकार के उपादानों (outputs), में परिवर्तित करता है। ये उपादान वस्तु, उत्पाद अथवा सेवाएं, किसी भी रूप में सामने आ सकते हैं। उत्पादन को, उपक्रम एवं बाह्य वातावरण के सम्मुख प्रस्तुत करता है। उत्पादन की बिक्री आवश्यक शक्ति प्रदान करती है। इसे परिष्करण (feedback) कहा जाता है। यह परिष्करण तंत्र-चक्र को पुनः दोहराता है।

इस चित्र को देखिए, जो एक चक्र को दर्शाता है।

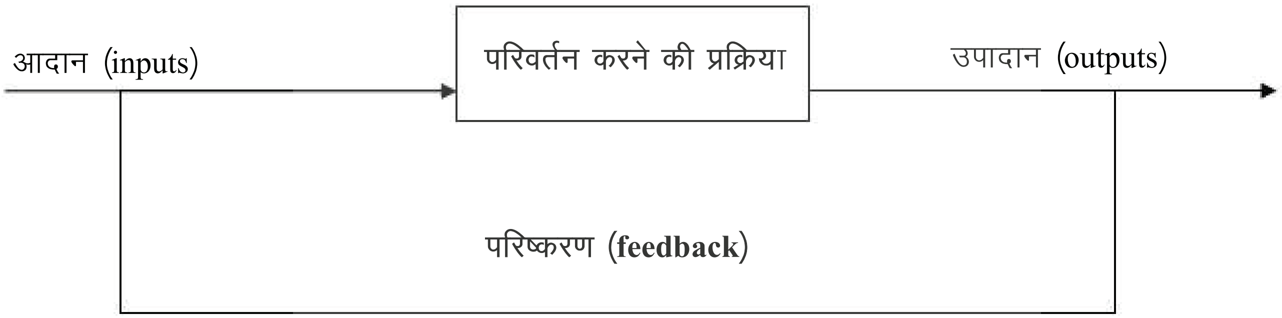

चित्र 11.1 : तंत्र विचारधारा चक्र

प्रबंध की तंत्र विचारधारा उपक्रमों को बहुत ही जटिल इकाइयां मानकर चलती हैं जिनमें भीतरी तथा बाहरी दोनों ही ओर से परिवर्तन हो सकता है। इन उपक्रमों की विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रबंध को संतुलित तथा एकीकृत दृष्टिकोण अपनाना जरूरी है। तंत्र विचारधारा के केंद्र में प्रबंध सूचनातंत्र (management information system) तथा सूचना और संख्यात्मक तथ्यों के संकलन, विश्लेषण तथा प्रवाह के लिए सम्प्रेक्षण का जाल बिछा होता है। उपक्रम के विभिन्न भागों में संतुलन बनाए रखने वाले मूल माध्यमों के रूप में निर्णयन करने के महत्व पर यह ज़ोर देता है। आधुनिक विचारक प्रबंधन को दुर्लभ साधनों का श्रेष्ठतम उपयोग करने के लिए कार्यों को एकीकृत करने का एक तंत्र मानते हैं। प्रबंधन को सामाजिक तंत्र के उप-तंत्र के रूप में भी माना जाता है। उप-तंत्र के रूप में प्रबंधन को पर्यावरण में होने वाले परिवर्तनों का सामना कर उसको अनुकूल बनाना होगा।

इस तंत्र विचारधारा के निम्नलिखित लाभ हैं :

1) यह संगठनात्मक प्रयासों का एकीकृत केंद्र बिंदु प्रदान करता है।

2) यह प्रबंधकों को उपक्रम को समग्र रूप में देखने का अवसर प्रदान करता है। समग्र रूप में उपक्रम अपने विभिन्न भागों के योग से भी बड़ा होता है।

3) यह विचारधारा संगठन को एक खुला तंत्र मानकर चलती है। फिर उपतंत्रों के बीच पारस्परिक प्रभाव भी गतिशील होते हैं।

4) आधुनिक विचारधारा बहुस्तरों (multi-level) तथा बहुआयाम (multi-dimension) पर आधारित है अर्थात् इसमें सूक्ष्म तथा बृहत दोनों ही पहलुओं पर विचार किया जाता है। यह देश के औद्योगिक कार्यों पर सूक्ष्म रूप से विचार करती है तथा आंतरिक इकाइयों पर बृहत रूप से विचार करती है।

5) यह तंत्र पद्धति बहुचरों पर आधारित है क्योंकि एक घटना बहुत से कारकों का परिणाम हो सकती है जो एक दूसरे से जुड़े हुए तथा परस्पर निर्भर रहते हों।

6) परिष्करण (feedback) प्रक्रिया उपक्रम को अपने विभिन्न हिस्सों का पर्यावरण में परिवर्तन के अनुसार फिर से व्यवस्थित करने का अवसर प्रदान करती है।

यद्यपि तंत्र विचारधारा की आकर्षक अपील है किंतु इसकी कुछ सीमाएं भी हैं। वास्तव में, यह संपूर्ण व्यवस्था तंत्र का पूर्ण स्पष्टीकरण नहीं है। एक विशिष्ट उपक्रम के उपतंत्र किस प्रकार, पर्यावरण से विशिष्ट रूप से जुड़े हुए रहते हैं, इस बात का यह स्पष्टीकरण नहीं कर पाती है।

## 11.9 प्रासंगिकता की विचारधारा (Contingency Approach)

प्रासंगिकता विचारधारा का आधार यह तर्क है कि प्रबंधन की कोई एक सर्वश्रेष्ठ विधि नहीं है। वास्तव में प्रबंध के विभिन्न कार्यों को करने के लिए बहुत से प्रभावी तरीके हैं। यह विचारधारा इस बात पर जोर देती है कि नेतृत्व, नियोजन, व्यवस्था तथा प्रबंध कार्यों को करने की विधियां परिस्थितियों के अनुसार बदलती रहती हैं। एक विशिष्ट विधि से एक विशिष्ट परिस्थिति में श्रेष्ठ परिणाम प्राप्त हो सकता है, किंतु अन्य परिस्थितियों में वह विधि कतई बेकार सिद्ध हो सकती है। सभी परिस्थितियों में एक सार्वभौमिक विधि नहीं अपनाई जा सकती। प्रबंधकों को विभिन्न परिस्थितियों का विश्लेषण करना चाहिए और उस परिस्थिति में श्रेष्ठतम परिणाम देने के लिए उपयुक्त विधि का प्रयोग करना चाहिए। उदाहरण के लिए, उत्पादकता में वृद्धि लाने के लिए वैज्ञानिक प्रबंध के हिमायती, कार्य के सरलीकरण और अतिरिक्त अभिप्रेरणात्मक सुविधाओं का सुझाव (prescribe) दे सकते हैं। व्यावहारिक वैज्ञानिक कार्य को समृद्ध बनाने तथा कर्मचारियों को प्रजातांत्रिक रूप से कार्यों के निर्णयन में भाग लेने का सुझाव कर सकते हैं। किंतु प्रासंगिक विचारधारा के समर्थकों के द्वारा संपूर्ण परिस्थितियों के परिपेक्ष में एक श्रेष्ठ हल ढूंढने की वकालत की जाती है। सीमित साधनों, अकुशल श्रमिक, सीमित प्रशिक्षण तथा स्थानीय बाजारों में सीमित उत्पादों के होने की दशा में कार्य का सरलीकरण आदर्श उपाय होगा। उपक्रमों, जहां कुशल श्रम शक्ति की बहुलता हो, में कृत्य समृद्धि (job enrichment) का होना आदर्श विधि होगी। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि एक दी हुई स्थिति में परिस्थितियों के अनुसार प्रबंधकीय कार्य करना होता है। इस विचारधारा में प्रबंधकों को सर्वप्रथम स्थिति का ज्ञान करना होता है और उस स्थिति के अनुसार उत्पन्न समस्याओं को हल करने की विधि ढूंढनी होती है। संक्षेप में दो पहलुओं पर प्रासंगिकता की विचारधारा जोर देती है-1) यह प्रासंगिक विशिष्ट कारकों (Pacific situational factors) पर अपना ध्यान केंद्रित करती है। ये कारक एक प्रबंधक की नीति (strategy) को दूसरे की तुलना में उपयुक्त बनाने में प्रभावित करती है। 2) प्रासंगिक परिस्थितियों का विश्लेषण करने में प्रबंधकों के गुणों को विकसित करने के महत्व को यह और अधिक प्रकाश में लाती है। इस प्रकार के गुण प्रबंधकों को प्रबंधन करने की उनकी विचारधारा को प्रभावित करने वाले कारकों को खोजने में सहायक होते हैं।

प्रासंगिकता की विचारधारा का प्रमुख लाभ यह है कि यह हमको प्रत्येक परिस्थिति की जटिलता के विषय में सचेत कराती है तथा प्रत्येक दशा में क्या करना श्रेष्ठ होगा, इसका निर्धारण करने में सक्रिय तथा गतिशील भूमिका निभाने के लिए बाध्य करती है। तंत्र विचारधारा ही की भांति यह केवल किसी विशिष्ट उपक्रम में दी गई परिस्थिति में उप-तंत्रों के संबंधों का ही परीक्षण नहीं करती वरन् व्यवस्था में आने वाली विशिष्ट समस्याओं का हल भी सुझाती है।

इस विचारधारा की आलोचना इसके अत्यधिक सैद्धांतिक जटिलता के कारण की गई है। उदाहरण के लिए, एक सरल समस्या को भी कई संगठनात्मक उपभागों (organisational components) के आधार पर विश्लेषित किया जाना होता है और इन कारकों के भी असंख्य पहलू होते हैं। अतः इसकी प्रयोगों द्वारा जांच करना अत्यंत कठिन हो जाता है।

**बोध प्रश्न 2**

1) निम्नलिखित में से कौन से कथन ठीक हैं तथा कौन से गलत हैं।

   i) प्रबंध में मानव संबंधं विचारधारा का उद्देश्य केवल मानव मात्र को खुश रखना है।

   ii) वैज्ञानिक प्रबंध ने श्रमिकों के व्यवहार, भावनाओं तथा आवश्यकताओं को कोई महत्व प्रदान नहीं किया है।

   iii) एक विशेष व्यक्ति का व्यवहार उसके समूह में सम्मिलित होने पर होने वाले व्यवहार से अत्यधिक प्रभावित रहता है।

   iv) सभी निर्णय उच्चतम स्तरीय प्रबंधकों द्वारा लिए जाते हैं।

   v) प्रबंध में तंत्र विचारधारा प्रबंध में होने वाली क्रियाओं के एकीकृत करने पर बल देती है।

   vi) प्रासंगिकता की विचारधारा इस बात पर जोर देती है कि ऐसा कोई सार्वभौमिक सिद्धांत नहीं है जो सभी परिस्थितियों में अपनाया जा सके।

2) रिक्त स्थानों को भरिए :

   i) मानव संबंध विचारधारा श्रमिकों की .......................................... आवश्यकताओं को पूरा कराने का आश्वासन देती है।

   ii) ....................................... अभिप्रेरणा तत्वों से ही श्रमिक अभिप्रेरित नहीं होते हैं।

   iii) निर्णयन कर्त्ताओं को विभिन्न विकल्पों के संभावित निष्कर्षों का पूर्ण ज्ञान नहीं होता, अतः निर्णयन .................................... पर निर्भर करते हैं।

   iv) तकनीकी उप-तंत्र, उपक्रम के सदस्यों के बीच .............................. का प्रतिनिधित्व करते हैं।

   v) मानव संबंध विचारधारा का आधार इस मत पर है कि आधुनिक संगठन व्यवस्था एक ...................................... तंत्र है।

## 11.10 सारांश

समस्त विश्व में, इस बात को व्यक्त करने का पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध है कि प्रबंध का प्रयोग सभ्यता के प्रारंभिक समय से ही होता आया है। किंतु औद्योगिक क्रांति के पश्चात् ही प्रबंधन प्रक्रिया में सम्मिलित विभिन्न प्रबंध कार्यों पर प्रबंध के विद्वानों का ध्यान केंद्रित हुआ है। राबर्ट ऑवन, चार्ल्स बाबेज, मैटकाफ और ताउने के नाम प्रारंभ के प्रबंध शास्त्र के विचारकों में गिनाए जा सकते हैं। इन्होंने औद्योगिक उपक्रमों के प्रबंधन को सुधारने के लिए अपने सुझाव दिए हैं। वैज्ञानिक प्रबंध की विचारधारा के जन्मदाता फ्रेडरिक विस्टन टेलर थे। यह

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

विचारधारा पहल तथा प्रेरणा से किए जाने वाली प्रबंध पद्धति का विकल्प थी। इसका प्रमुख उद्देश्य अंगूठे के जोर पर प्रबंध (rule of thumb) को वैज्ञानिक विधि से पूछताछ अवलोकन तथा प्रयोग (experimentations) प्रबंधन द्वारा बदलना था। वैज्ञानिक प्रबंध का लक्ष्य उत्पादन शाला में कार्यरत व्यक्तिगत श्रमिक की उत्पादन शक्ति में वृद्धि करना था। संपूर्ण व्यवस्था में प्रबंधको तथा उनके कार्यों को इस विधि में पर्याप्त ध्यान तथा स्थान नहीं दिया गया।

हैनरी फैयॉल ने प्रबंध प्रक्रिया तथा प्रबंधकों के कार्यों का विधिवत विश्लेषण किया। उन्होंने सिद्धांतों का एक सैट प्रस्तुत किया और उसे प्रबंधन प्रक्रिया के पथ प्रदर्शक के रूप में प्रयोग करने के लिए सलाह दी। फैयॉल द्वारा रखी गई आधारशिला पर प्रबंध की प्रशासनिक विचारधारा को विकसित किया गया।

प्रबंध की मानव संबंध विचारधारा का विकास यू.एस.ए. में किए गए प्रयोगात्मक अध्ययनों के फलस्वरूप हुआ। यह इस मत पर आधारित है कि आधुनिक व्यवस्था एक सामाजिक तंत्र है और कर्मचारियों की संतुष्टि ही उच्च उत्पादिता और कार्यक्षमता में वृद्धि लाने के लक्ष्यों को प्राप्त करने की सर्वाधिक श्रेष्ठ विधि है। इस उद्देश्य के लिए प्रबंधन को संतोषजनक कार्य वातावरण उत्पन्न करना चाहिए, जिसमें लोग अपनी सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को पूरा कर सकते हैं, साथ ही उपक्रम के लक्ष्यों की प्राप्ति में भी योगदान कर सकते हैं।

प्रबंध की व्यावहारिक विचारधारा, मानव संबंध विचारधारा का ही विस्तार है। समाज विज्ञान, सामाजिक मनोवैज्ञानिक तथा मानव विज्ञान के क्षेत्र में कार्यरत वैज्ञानिकों ने विस्तृत रूप से शोध कार्य किए और उनके परिणाम व्यावहारिक विचारधारा के रूप में प्रबंधन में प्रस्तुत किए गए हैं। इस विचारधारा ने यह माना है कि एक व्यक्ति का व्यक्तिगत व्यवहार, सामूहिक व्यवहार से ही प्रभावित होता है। अनौपचारिक नेतृत्व तथा नेतृत्व का जनतंत्रात्मक रूप, समूह के मानदंड को निर्धारित करने में अधिक प्रभावी होते हैं, इस मत पर इस विचारधारा में अधिक जोर दिया गया है। प्रबंध की निर्णयन विचारधारा के अनुसार, संगठनात्मक कार्यों को समझने की कुंजी निर्णय केंद्रों तथा सम्प्रेषण माध्यमों की पहचान पर निर्भर करती है।

प्रबंध की तंत्र विचारधारा के अनुसार उपक्रम आजकल अत्यंत जटिल इकाइयां बन चुके हैं। इनमें आंतरिक तथा बाह्य दोनों ही ओर से परिवर्तन होता रहता है। इस प्रकार के उपक्रम की बहुत सी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रबंध की संतुलित तथा एकीकृत विधि को अपनाना होगा। प्रबंध अपने आप में एक तंत्र माना जाता है तथा यह सामाजिक तंत्र का एक उप-तंत्र है। इस दृष्टिकोण से एक उपक्रम बहुत से आदानों से विभिन्न प्रकार के उत्पादन करता है और फिर एक अंतिम उत्पाद वातावरण के सम्मुख प्रस्तुत करता है। वातावरण फिर से आवश्यक शक्ति प्रदान करता है जिसे फीडबैक कहते हैं। यह फीडबैक चक्र को पुनः चलाता रहता है।

प्रासंगिकता की विचारधारा इस बात पर जोर देती है कि हर परिस्थिति में कोई एक सार्वभौमिक सिद्धांत लागू नहीं किया जा सकता। यह परिस्थितियों के विशिष्ट कारकों पर ध्यान केंद्रित करती है। ये कारक प्रबंधन की एक समरनीति (strategy) की दूसरे पर प्रधानता को प्रभावित करते हैं तथा परिस्थितियों का विश्लेषण करने में प्रबंधकों के गुणों के विकास के महत्व की विशिष्टता बताते हैं।

## 11.11 शब्दावली

**प्रशासनिक दृष्टिकोण** : प्रबंध के कार्यों तथा उनके निष्पादन के लिए आवश्यक गुणों के संदर्भ में प्रबंधन प्रक्रिया का विश्लेषण करना।

**व्यावहारिक विचारधारा** : व्यक्ति की समझ तथा उपक्रमों में समूह के व्यवहार को समझना।

**विभेदात्मक कार्य-दर** : मज़दूरी की कार्य-दर जो कुशल तथा अकुशल श्रमिकों के लिए भिन्न भिन्न होती है।

**कार्यात्मक फोरमैनशिप** : विभिन्न विशिष्ट फोरमैन द्वारा निरीक्षण।

**हॉथोर्न अध्ययन** : प्रयोगात्मक अध्ययन जो शॉप फ्लोर दर कार्यरत श्रमिकों की कार्य-निष्पत्ति में वृद्धि करने के लिए अभिप्रेरित कारकों का ज्ञान करने के लिए किए गए थे।

**मानव संबंध विचारधारा** : संतुष्टि प्रदान करने वाले कार्य-वातावरण द्वारा कर्मचारियों को अभिप्रेरित करना तथा उनकी सामाजिक तथा शारीरिक आवश्यकताओं को पूरा करना।

**गति अध्ययन** : किसी कार्य को करने के लिए प्रयोग की गई गति का अवलोकन कर व्यर्थ गतियों को दूर करना तथा कार्य निष्पादन के लिए एक सर्वश्रेष्ठ विधि का चयन करना।

**वैज्ञानिक प्रबंधन** : प्रबंध की समस्याओं को सुलझाने के लिए वैज्ञानिक विधियों के प्रयोग से अंगूठे के दबाव को अथवा भूल सुधार विधि को बदलना।

**तंत्र विचारधारा** : संतुलित तथा एकीकृत तंत्र के रूप में प्रबंधन को समझना।

**समय अध्ययन** : किसी कार्य का निष्पादन करने में लगने वाले समय का मापन व विश्लेषण करने के लिए प्रयोग की जाने वाली तकनीक।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

## 11.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

**बोध प्रश्न 1**

1) i) गलत, ii) सही, iii) गलत, iv) सही,
v) सही, vi) सही, vii) संही, viii) गलत

2) i) राबर्ट ऑवन, ii) कार्यात्मक फोरमैनशिप, iii) कार्य, iv) कार्य भार
v) प्रशासक, इंजीनियर, सांख्यिक।

**बोध प्रश्न 2**

1) i) गलत, ii) सही, iii) सही, iv) गलत, v) सही, vi) सही।

2) i) सामाजिक, मनोवैज्ञानिक , ii) आर्थिक, iii) निर्णय, iv) औपचारिक संबंध, v) सामाजिक।

## 11.13 अभ्यास के लिए प्रश्न

1) 20वीं शती में हुए प्रबंधन विचारधारा के विकास की संक्षेप में रूपरेखा वर्णित कीजिए।
2) वैज्ञानिक प्रबंधन का क्या अर्थ है? इसके प्रमुख सिद्धांतों, गुण व सीमाओं का वर्णन कीजिए।
3) प्रबंध में व्यावहारिक विचारधारा के महत्व का वर्णन कीजिए। इसकी प्रमुख विशेषताएं क्या हैं?
4) प्रबंध में मानव संबंध विचारधारा के प्रमुख तत्वों का वर्णन कीजिए।
5) प्रबंध विचारधारा में फैयॉल के योगदान का वर्णन कीजिए।
6) प्रबंध में तंत्र विचारधारा का वर्णन कीजिए। उदाहरण देकर बतलाइए यह कैसे संपूर्ण चक्र को चलाने के लिए "फीडबैक' प्रक्रिया का प्रयोग करता है?
7) प्रबंध की प्रासंगिकता की विचारधारा का आलोचनात्मक वर्णन कीजिए।
8) प्रबंध के विभिन्न दृष्टिकोण क्या हैं? प्रत्येक के बारे में संक्षेप में व्याख्या कीजिए।

**टिप्पणी** : ये प्रश्न आपको इस इकाई का अध्ययन करने में सहायक होंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। किन्तु उत्तरों को विश्वविद्यालय को न भेजिए। ये प्रश्न आपके अभ्यास के लिए हैं।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

# इकाई 12 नियोजन के मूल सिद्धांत

**इकाई की रूपरेखा**

12.0 उद्देश्य
12.1 प्रस्तावना
12.2 नियोजन क्या है ?
12.3 नियोजन की प्रकृति एवं विशेषताएँ
12.4 नियोजन का महत्व
12.5 नियोजन की सीमाएँ
12.6 नियोजन की प्रक्रिया
12.7 पूर्वानुमानः नियोजन के एक तत्व के रूप में
12.8 नियोजन के प्रकार
12.9 नियोजन के सिद्धांत
12.10 सारांश
12.11 शब्दावली
12.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
12.13 अभ्यास के लिए प्रश्न

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

## 12.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप :

- नियोजन के प्रबंध कार्य के अर्थ, प्रकृति और महत्व को स्पष्ट रूप में बता पाएँगे;
- नियोजन की प्रक्रियाओं के विभिन्न चरणों को समझ सकेंगे;
- सामरिक नियोजन, युक्तिपूर्ण नियोजन, दीर्घकालिक नियोजन, अल्पकालिक नियोजन आदि विभिन्न प्रकार के नियोजनों के विवरण दे पाएँगे; और
- उन सिद्धांतों को समझ पाएँगे जिन पर योजना आधारित होती है।

## 12.1 प्रस्तावना

इकाई 3 में आप प्रबंधन की प्रक्रिया और प्रबंधकों के कार्यों से परिचित हो चुके हैं तथा आपने यह देखा है कि इन कार्यों से कौन-कौन से सिद्धांत निकलते हैं। आपने यह भी देखा है कि नियोजन (planning) प्रबंधकों के महत्वपूर्ण कार्यों में से एक है जिसका अन्य कार्यों के साथ घनिष्ठ संबंध होता है। वास्तविकता तो यह है कि संगठन के सभी स्तरों पर नियोजन को सदा ही प्रबंधकों का प्रमुख कार्य माना जाता है। हाल के वर्षों में समस्त विश्व में नियोजन के प्रति बहुत अधिक रुचि दिखाई जाने लगी है – ऐसा. विशेषतः निगमों (corporations) से संबंधित, दीर्घकालिक तथा सामरिक (strategic) योजना के संबंध में हुआ है।

इस इकाई में आप नियोजन के मूल तत्वों अर्थात् इसका अर्थ, स्वरूप, विशेषताएँ, महत्व और सीमाओं की जानकारी प्राप्त करेंगे। नियोजन की प्रक्रिया में कौन-कौन से तत्व और

प्रक्रियाएँ होती है और नियोजन में पूर्वानुमान का क्या योगदान होता है। आगे चलकर आप यह भी देखेंगे कि सामरिक नियोजन युक्तिपूर्ण नियोजन, दीर्घकालिक नियोजन और अल्पकालिक नियोजन की क्या संकल्पनाएँ हैं और योजना के मूल सिद्धांत क्या हैं।

## 12.2 नियोजन क्या है ?

हमारे दैनिक जीवन में नियोजन का क्या अर्थ है इससे हममें से अधिकतर व्यक्ति भली भांति परिचित हैं। सारे दिन में हमें क्या-क्या कार्य करने हैं, इसके संबंध में हम प्रायः पहले से ही निर्णय कर लेते हैं। माँ-बाप पहले से ही निर्णय कर लेते हैं कि बच्चों को किस प्रकार की शिक्षा दिलानी है। छात्र पहले से ही यह सोच लेता है कि उसे अपनी परीक्षा की तैयारी किस प्रकार से करनी है, अपने समय का सदुपयोग किस प्रकार से करना है आदि। एक आम आदमी के लिए नियोजन का अर्थ यह होता है कि किसी कार्य के संबंध में सही रूप से निर्णय लिया जाए और उसे उद्देश्यपूर्ण ढंग से किया जाए।

परंतु औपचारिक संगठनों और उनके प्रबंधन के संदर्भ में नियोजन की संरचना का एक विशिष्ट अर्थ होता है। इसका अर्थ यह होता है कि पहले से ही निर्णय ले लिया जाए कि किसी विशेष अवधि के लिए भविष्य में क्या किया जाना है और फिर इस निर्णय को कार्यान्वित करने के लिए उचित कदम उठाये जाएँ। इसका यह भी अर्थ होता है कि भविष्य के संबंध में अनुमान लगाया जाए। यह जानने का प्रयास किया जाए कि भविष्य में क्या होने वाला है, संगठन पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा, संगठन को किस दिशा में कार्य करना चाहिए और भविष्य में होने वाली घटनाओं का सामना किस प्रकार किया जा सकता है। नियोजन से यह भी अभिप्राय होता है कि विकल्पों के बीच इस प्रकार चुनाव किया जाए कि निकट भविष्य तथा दीर्घकाल के लिए संगठन के लक्ष्यों का निर्धारण हो सके। नियोजन की कल्पना मात्र से ही हमारे मन में कार्य के प्रति सुव्यवस्थित और स्पष्ट मार्ग, लक्ष्य-निर्धारित व्यवहार, किसी वस्तु के संबंध में पहले से ही सोचने और इसके लिए व्यवस्था करने तथा दुर्लभ साधनों के तर्कसंगत ढंग से बँटवारे आदि के संबंध में चित्र उभर आते हैं। संक्षेप में नियोजन की परिभाषा है भविष्य के लक्ष्यों को निर्धारित करने की प्रक्रिया तथा उन्हें प्राप्त करने के लिए साधन (ways and means) के संबंध में निर्णय लेना।

## 12.3 नियोजन की प्रकृति एवं विशेषताएँ

नियोजन के प्रबंधन कार्य की कुछ अपनी ही विशेषताएँ हैं जो उसे अन्य प्रकार के प्रबंधन कार्यों से अलग करती हैं। परन्तु इसकी कुछ विशेषताएँ तो अन्य प्रबंधन कार्यों की विशेषताओं जैसी ही होती हैं। इन सभी विशेषताओं के योग से नियोजन कार्य के स्वरूप का निर्माण होता है। इन विशेषताओं के संबंध में नीचे चर्चा की गई है :

1) **नियोजन की प्रमुखता** : प्रबंधन संबंधी सभी कार्यों से पहले नियोजन का स्थान आता है। प्रबंधन की प्रक्रिया का प्रारंभ नियोजन के साथ होता है। संगठन, कर्मचारी भर्ती, निर्देशन तथा नियंत्रण आदि कार्य नियोजन पर ही आधारित होते हैं हालांकि ये सभी कार्य अत्यन्त अंतः संबंधित तथा एक दूसरे के ही समान महत्वपूर्ण भी हैं। नियोजन वह प्रमुख कार्य है जिससे अन्य कार्यों को आवश्यक आधार प्राप्त होता है।

2) **प्रक्रिया के रूप में नियोजन** : नियोजन एक प्रक्रिया है जिसमें कुछ चरण और सोपान होते हैं। यह प्रबंधन-प्रक्रिया की एक उप प्रक्रिया है। नियोजन-प्रक्रिया का प्रारंभ संगठन के उद्देश्यों तथा लक्ष्यों को पहचानने तथा उसका अंत, योजनाओं को कार्यान्वित करने की व्यवस्था करने के साथ होता है।

3) **नियोजन की व्यापकता** : नियोजन प्रबंधन-तंत्र के सभी स्तरों मुख्य प्रबंधक से लेकर प्रथम पंक्ति के पर्यवेक्षक तक के प्रबंधकों का व्यापक कार्य है। फिर भी भिन्न-भिन्न स्तर के कार्यों की मात्रा और किस्म (content and quality) भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है। नियोजन पर भिन्न-भिन्न मात्रा में समय भी लगाए जाते हैं। मुख्य प्रबंधक तथा उच्च स्तर के अन्य प्रबंधक कंपनी के योजना कार्यों में लगे होते हैं। संगठन पर नियोजन संबंध उनके निर्णयों का अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। मध्यम तथा नीचे स्तर के प्रबंधकों के हाथ में योजना संबंधी अत्यन्त सीमित कार्य होते हैं।

संगठन के विभिन्न कार्य क्षेत्रों में भी नियोजन व्यापक होता है। उदाहरणार्थ, किसी निर्माण उद्योग (manufacturing enterprise) में उत्पादन योजना, वस्तुओं की आवश्यकताओं संबंधी नियोजन, जनशक्ति नियोजन, वित्तीय नियोजन आदि बनाई जाती हैं।

4) **भविष्य उन्मुखीकरण (Future orientation)** : नियोजन भविष्य उन्मुखी होता है। हेनरी फैयॉल के शब्दों में नियोजन का अर्थ है भविष्य की ओर देखने (भविष्य के संबंध में सोचने) की प्रक्रिया तथा भविष्य की घटनाओं और स्थितियों से निपटने की व्यवस्था करना। इससे अभिप्राय यह है कि जैसे-जैसे हम भविष्य में प्रवेश करते हैं वैसे-वैसे उसमें आने वाली अनिश्चितताओं और अज्ञातों का सामना करने में नियोजन हमारी सहायता करता है। इस बात को दोहराने की आवश्यकता नहीं कि नियोजन भविष्य उन्मुखी होने के अतिरिक्त और कुछ हो ही नहीं सकता। अतीत या वर्तमान के लिए हम योजनाएँ नहीं बनाते। परन्तु यह भी सच है कि भविष्य के संबंध में योजना बनाते समय प्रबंधक-वर्ग संगठन के बाहर और भीतर की अतीत और वर्तमान की घटनाओं और स्थितियों को भी ध्यान में रखता है।

5) **सूचना का आधार** : नियोजन को सूचना से मदद मिलती है। सूचना के बिना नियोजन का कोई अर्थ नहीं होता। नियोजन के लिए भूतकाल की प्रवृत्तियों, वर्तमान स्थितियों और भविष्य की संभावनाओं के संबंध में जानकारी होना आवश्यक होता है। नियोजन संबंधी विषयों और समस्याओं को समझने, विकल्पी मार्ग निकालने तथा योजनाओं को मूल्यांकित करके उन्हें अंतिम रूप देने के कार्य में सूचना का होना अत्यन्त आवश्यक होता है।

6) **विवेकपूर्णता (Rationality)** : नियोजन विवेकपूर्ण प्रबंधन कार्य होता है। इसका अर्थ यह है कि नियोजन प्रबंधन संबंधी उद्देश्यपूर्ण तथा सतर्क कार्य होता है। इसे पर्याप्त सूचना ज्ञान तथा कल्पनाशक्ति से मदद मिलती है। प्रबंधक, जो योजनाकार भी होते हैं नियोजन के संबंध में प्रायः वस्तुपरक तथा भावुकताहीन दृष्टिकोण अपनाते हैं। नियोजन संबंधी समस्याओं के संबंध में उनके विचार स्पष्ट होते हैं और उन्हें मालूम होता है कि उनसे किस प्रकार से निपटना है। नियोजन के परिणाम के संबंध में जानकारी रखते हुए वे उसके संबंध में निर्णय लेते हैं।

7) **औपचारिक तथा अनौपचारिक स्वरूप** : नियोजन में औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों ही प्रकार के तत्व होते हैं। औपचारिक नियोजन से अभिप्राय होता है नियोजन संबंधी निर्णयों पर पहुँचने के लिए की गई व्यवस्थित तथा कठिन प्रक्रिया जो विभिन्न कारकों के संबंध में छानबीन तथा विश्लेषण के द्वारा की जाती है। औपचारिक नियोजन अधिक स्पष्ट तथा निर्बाध होता हैः नियोजन के विभिन्न पक्षों को सफल बनाने का दायित्व प्रबंधकों का होता है। लिखित रूप में योजनाओं को संगठन के माध्यम द्वारा प्रबंधक स्तरों तक पहुँचा दिया जाता है। अनौपचारिक नियोजन को

प्रबंधक सहजबोधनीय प्रक्रिया के द्वारा करते हैं। वे योजनाओं को अपने मस्तिष्क में निश्चित लेकिन लचीले इरादों से रखे रहते हैं तथा दूसरों को वे इन्हें मौखिक रूप से बता देते हैं। औपचारिक नियोजन की व्यवस्थित क्रमानुसार और तर्कसम्मत प्रक्रिया के विपरीत अनौपचारिक नियोजन को क्रमशः एक प्रयत्न-त्रुटि (trial and error) खंडित और सविराम (intermittant) प्रक्रिया के रूप में भी देखा जा सकता है।

8) **बौद्धिक प्रक्रिया** : नियोजन बौद्धिक प्रक्रिया है इसके लिए मूर्त और अमूर्त रूप में सोचने, भविष्य के संबंध में सोचने और उसे देखने तथा भविष्य की प्रत्याशाओं और इच्छाओं संबंधी विचार और चित्र बनाने की योग्यताएँ आवश्यक होती हैं। इसके लिए ऐसी बौद्धिक योग्यताओं की भी जरूरत पड़ती है कि उपलब्ध होने वाले अवसरों और पर्यावरण के खतरों को पहले से जाना जा सके, समस्याओं को समझा जा सके, अपनाए जाने वाले विकल्पी मार्गों को विकसित किया जा सके तथा उचित मार्ग के चुनाव के लिए उनका विश्लेषण किया जा सके।

9) **प्रयोजनात्मक, कार्योन्मुखन (Pragmatic action & orientation)** : यद्यपि नियोजन एक बौद्धिक चिंतन प्रक्रिया है फिर भी यह मुख्यतः प्रयोजनात्मक और कार्योन्मुखी होता है। कार्य करने से पहले ही नियोजन करना होता है और इसलिए कहा जाता है कि नियोजन का अर्थ है पहले से ही कार्य की व्यवस्था कर देना। कार्य करने से पहले सोचना और निर्णय लेना नियोजन योजना की विशेषता है। केन्द्रबिन्दु तो नियोजन की व्यवहार्यता अर्थात् कार्यान्वित होने की उसकी योग्यता होती है। नियोजन यथार्थ-उन्मुख भी होता है।

10) **निर्णयन (Decision making), के रूप में नियोजन** : नियोजन के अंतर्गत समस्या समाधान और निर्णय लेने के कार्य आते हैं। विषयों और समस्याओं को समझने, आवश्यक सूचना एकत्रित करने, विकल्पी मार्गों का मूल्यांकन करने तथा सर्वसमुचित विकल्प का चयन करने की यह एक प्रक्रिया है। संगठन के उद्देश्यों, युक्तियों, नीतियों कार्यक्रम कार्यविधियों तथा अन्य योजनाओं के संबंध में निर्णय लिए जाते हैं। ये सभी विकल्पों में से चुने जाते हैं। इनके अंतर्गत संसाधनों के जुटाव, वितरण और सुपुर्दगी तथा विशेष दिशाओं में किए गए प्रयास शामिल होते हैं।

11) **नियोजन आधारिका (Planning premises)** : भविष्य में क्या घटनाएँ होंगी तथा परिवेश में किस प्रकार की स्थितियाँ होगी, उनसे संबंधित कुछ धारणाओं और अनुमानों पर नियोजन आधारित होता है। औपचारिक रूप से इन्हें "नियोजन आधारिका" कहा जाता है जिन्हें पूर्वानुमान की प्रक्रिया से निकाला जाता है। इन धारणाओं के अभाव में नियोजन अटकल का विषय बन कर रह जाता है। नियोजन कार्य के लिए प्रबंधक भविष्य की घटनाओं के संबंध में आधारिकाएँ तथा धारणाएं (premises and assumptions) इसलिए बनाते हैं कि अनिश्चितताओं तथा परिवेश की जटिलताओं के बीच सुरक्षा तथा निश्चितता की भावना पैदा की जा सके।

12) **गतिकता (Dynamism)** : नियोजन गतिक प्रक्रिया है। यह ऐसी प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत कोई संगठन बाह्य परिवेश में होने वाले परिवर्तनों के अनुरूप ही अपने आप में भी परिवर्तन लाकर कार्य करता है। यह एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा कोई संगठन अपनी कार्यवाहियों में लचीलापन तथा अनुकूलता लाता है। इसके अतिरिक्त यह वह प्रक्रिया भी है जिसके अधीन संगठन के लक्ष्यों, संसाधनों, निर्देशों अवसरों और समस्याओं का निरंतर मूल्यांकन और पुनर्मूल्यांकन किया जाता है और उन्हें इसकी आवश्यकताओं के अनुरूप बना लिया जाता है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

13) **नियोजन के स्तर** : नियोजन के क्षेत्र, महत्व और समय अवधि के अनुरूप ही इसका विभाजन प्रायः कुछ स्तरों में किया जाता है। कार्यक्षेत्र के आधार पर इसके दो स्तर होते हैं: (i) निगम नियोजन (corporate planning) जिसके अंतर्गत समस्त संगठन आ जाता है। तथा (ii) उपनिगम नियोजन या कार्यमूलक नियोजन (functional planning) जो विभिन्न कार्यमूलक इकाइयों या विभागों के अंतर्गत ही कार्यान्वित किया जाता है। महत्व के आधार पर परियोजन का विभाजन सामरिक नियोजन और युक्तिपूर्ण या कार्यमूलक नियोजन के बीच किया जा सकता है। समय अवधि के आधार पर दो स्तर होते हैं: (i) दीर्घावधि नियोजन जिसके अंतर्गत प्रायः एक वर्ष से अधिक की अवधि होती है और (ii) अल्पावधि नियोजन जिसके अंतर्गत एक वर्ष या इससे भी कम की अवधि होती है। अनेक स्तरों में नियोजन के विभाजन से उसके आयामों (dimensions) और महत्वपूर्ण तत्वों के विश्लेषण का कार्य सरल हो जाता है। फिर भी यह स्मरणीय है कि नियोजन एक सुबद्ध कार्य (integrated function) है, अतः इसके विभिन्न स्तरों के लिए संतुलित तथा समन्वित होना आवश्यक होता है जिससे कि वे एक दूसरे की सहायता कर सके।

14) **योजना के प्रकार** : नियोजन की प्रक्रिया के दौरान ही अनेक प्रकार की योज़नाएँ उत्पन्न हो जाती हैं जिन्हें निर्णयों और कायक्रमों की श्रेणी या क्रम कहा जा सकता है। इसके अंतर्गत उद्देश्य या लक्ष्य, विधियाँ, नीतियाँ, कार्यक्रम बजट सूचियाँ, कार्यप्रणालियाँ, नियम आदि आते हैं। इनमें से उद्देश्य और बजट जैसी योजनाएँ नियोजन प्रक्रिया के अनिवार्य तत्व का कार्य करते हैं जबकि नीतियाँ, कार्यप्रणालियाँ, नियम और विधियाँ निर्बाध नियोजन को सरल बनाने वाले यंत्र का कार्य करते हैं। सभी प्रकार की योजनाओं का विभाजन दो मुख्य वर्गों में किया जाता है: (i) एकल उपयोग की योजनाएँ (single use plans) तथा (ii) स्थायी योजनाएँ (standing plans) एकल उपयोग योजनाएँ विशिष्ट, अनावर्ती (non-repetitive) और विशेष स्थितियों के लिए बनाई जाती हैं जबकि स्थायी योजनाएँ प्रायः स्थिर प्रकार की होती हैं और इनका उपयोग दीर्घावधि में उत्पन्न होने वाली आवर्ती स्थितियों से निपटना होता है।

## 12.4 नियोजन का महत्व

नियोजन के संबंध में अब तक आप जो कुछ पढ़ चुके हैं उससे आप इसके महत्व को भलीभांति समझ गए होंगे। आइये, अब नियोजन कार्य के महत्व को अध्ययन करें :

1) **निर्देशन प्रदान करता है** : संगठन की क्रियाओं तथा प्रबंधकों आदि के कार्यों के संबंध में नियोजन मार्ग-निर्देश प्रदान करता है। संगठन किस ओर और किसलिए जा रहा है, चुने हुए मार्ग पर किस प्रकार से संगठन को चलाया जाए और इसके लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किस प्रकार से समुचित कदम उठाए जाएँ इन सब को समझने में नियोजन से सहायता प्राप्त होती है।

2) **विकल्प कार्य-योजनाओं के विश्लेषण के लिए अवसर प्रदान करता है** : एक अन्य प्रकार से नियोजन का महत्व यह है कि इससे प्रबंधकों को यह समझने और विश्लेषण करने में सहायता मिलती है कि विकल्प कार्य-योजनाओं का परिणाम क्या होगा। निर्णय लेने या कोई कार्य करने के संबंध में यदि प्रबंधक विकल्प कार्य-योजनाओं के संभावित भावी परिणाम को अच्छी तरह से समझ लेंगे तो उपयुक्त तथा समुचित कार्य योजना के चुनाव के संबंध में निर्णय लेने में उन्हें आसानी हो जाएगी।

3) **अनिश्चितताओं को कम करता है** : नियोजन प्रबंधकों को आलस्य और संकीर्ण दृष्टिकोण को छोड़ने को बाध्य करता है। इससे उन्हें इस बात की भी प्रेरणा मिलती है कि वे अपने आज-कल तथा तत्काल की समस्याओं के आगे की बातों को भी सोचें। यह उन्हें प्रोत्साहित करता है कि वे परिवेश की जटिलताओं और अनिश्चितताओं की छानबीन करें तथा परिवर्तन के तत्व पर नियंत्रण कायम करें।

4) **आवेगी और मनमाने (Impulsive and arbitrary) निर्णयों को कम करता है** : नियोजन आवेगी और मनमाने निर्णयों तथा तदर्थ कार्यों (ad hoc actions) के प्रभावों को कम करता है, तथा भाग्य और संयोग के तत्वों पर निर्भरता को दूर करता है, प्रबन्धन कार्यों में बड़ी त्रुटियों और असफलताओं की संभावना को घटाता है। यह प्रबन्धन संबंधी सोच विचार और संगठनात्मक कार्य में अनुशासन लाता है। यह संगठन को इस लायक बनाता है कि वह संभावित खतरों का सामना कर सके। स्पष्ट सीमाओं के अंतर्गत वह प्रबंधकों की स्वतन्त्रता तथा लचीलेपन को बढ़ाता है।

5) **प्रमुख कार्य (Kingpin function)** : जैसा कि पहले बताया जा चुका है, नियोजन वह मुख्य प्रबंधन कार्य है जो अन्य प्रबंधन कार्यों के लिए आधार तैयार करता है। कार्य के संगठनात्मक ढाँचे तथा अधिकार की भूमिका का निर्माण संगठनात्मक नियोजनों के इर्द-गिर्द होता है। अभिप्रेरणा पर्यवेक्षण, नेतृत्व और संचार संबंधी कार्यों की योजनाओं को कार्यान्वित करने तथा संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए किया जाता है। प्रबंधन नियोजन के अभाव में प्रबंधन नियंत्रण का कोई अर्थ नहीं होता। इस प्रकार हम देखते हैं कि नियोजन वह प्रमुख कार्य है जिसके इर्द-गिर्द अन्य कार्यों को किया जाता है।

6) **संसाधनों का वितरण** : संगठन के महत्वपूर्ण लक्ष्यों को यथा संभव उपायों से प्राप्त करने के लिए तथा संगठन के महत्वपूर्ण और दुर्लभ साधनों को समुचित ढंग से वितरण के लिए नियोजन एक साधन का काम करता है। महत्वपूर्ण संसाधनों के अंतर्गत धन, अत्यधिक सक्षम प्रबंध, तकनीकमूलक प्रतिभा, सरकार के साथ अच्छा संपर्क, एकमात्र विक्रेता व्यवस्था आदि आते हैं। यदि किसी संगठन के पास ये सभी साधन हैं तब इन साधनों को ऐसे क्षेत्रों के बीच बाँटने के लिए अत्यंत सतर्क योजना की आवश्यकता होती है ताकि प्रतियोगिता की दृष्टि से संगठन की शक्ति बढ़े।

7) **संसाधन उपयोग कुशलता (Resource use efficiency)** : नियोजन किसी संगठन की विभिन्न कार्य-इकाइयों को अधिक कुशलतापूर्ण ढंग से कार्य सम्पादित करने में मदद करता है। संगठन की वर्तमान परिसंपत्तियों, संसाधनों और क्षमताओं का उपयोग बेहतर रूप में होता है। नियोजन प्रबंधकों को इस बात के लिए प्रेरित करता है कि वे कमियों व त्रुटियों को दूर करें तथा धन सामग्री, मानव प्रयास और कुशलता की बराबरी से होने वाली हानि भी जिससे संसाधन उपयोग को कम करें जिससे कुशलता में सुधार आ सके।

8) **अनुकूली-प्रतिक्रिया (Adaptive response)** : नियोजन संगठन की योग्यता बढ़ाने में मदद करता है ताकि यह प्रभावपूर्ण ढंग से बाह्य वातावरण में होने वाले परिवर्तनों के अनुकूल अपने कार्यों की दिशाओं में सामन्जस्य स्थापित कर सकें। कोई संगठन अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बनाए रखे इसके लिए आवश्यक होता है कि उसका अनुकूली व्यवहार हो। उदाहरणार्थ, किसी व्यवसाय संगठन प्रौद्योगिकी, बाजार उत्पाद आदि के संबंध में अनुकूली व्यवहार आवश्यक होता है।

9) **पूर्वकल्पी क्रिया (Anticipative action)** : बाह्य जगत में हुए परिवर्तन के कारण अपने को उसके अनुकूल बनाना एक प्रकार का प्रत्युत्तर (response) तो है फिर भी कुछ स्थितियों में वह पर्याप्त नहीं होता। इसलिए प्रबंधकों को नियोजन इस बात के लिए प्रेरित करता है कि वे अपना कार्य करें, साहस के साथ पहल करें, संकट और खतरे का पूर्वानुमान लगाएँ और उन्हें दूर करने का प्रयास करें, अपने प्रतियोगियों से पहले ही अवसरों का पता लगाकर उनसे लाभ उठाएँ तथा प्रतिस्पर्धा की दौड़ में उनसे आगे निकल जाएँ। उदाहरणार्थ, कुछ उद्यम अपनी नियोजन प्रणाली के अंग के रूप में परिवेश विश्लेषण तंत्र (environmental scanning mechanism) का उपयोग करते हैं। अतः इस प्रकार का उद्यम परिवर्तन की बाह्य शक्तियों से निर्देशित और नियंत्रित करने की स्थिति में हो जाते हैं।

10) **एकीकरण (Integration)** : नियोजन एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्रबंधकों के विभिन्न निर्णयों और कार्यों में केवल एक समय पर ही नहीं बल्कि एक समयावधि के अंतर्गत प्रभावपूर्ण एकीकरण लाया जाता है। नियोजन द्वारा बनाए हुए ढाँचे के संदर्भ में ही प्रबंधक संगठन के कार्यों संबंधी प्रमुख निर्णय सुसंगत रूप में लेते हैं।

**बोध प्रश्न 1**

1) निम्नलिखित में से कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत।

   i) अन्य बातों के साथ-साथ नियोजन से अभिप्राय होता है विकल्पों के बीच से किए जाने वाले कार्य का निर्धारण।

   ii) नियोजन का स्थान अन्य सभी प्रबंधन कार्यों के बाद आता है।

   iii) नियोजन भविष्य-उन्मुखी नहीं हो सकता क्योंकि भविष्य सदा ही अनिश्चित होता है।

   iv) नियोजन में औपचारिक और अनौपचारिक दोनों ही तत्व होते हैं।

   v) नियोजन प्रबंधन में बहुत बड़ी त्रुटियों की संभावना को कम कर देता है।

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

   i) नियोजन ................................ उद्देश्यों को निर्धारित करने की प्रक्रिया है।

   ii) नियोजन कार्यों के ......................... और ...................................... प्रबंधन तंत्र के भिन्न-भिन्न स्तरों पर भिन्न-भिन्न होते हैं।

   iii) अनौपचारिक नियोजन ...................................... प्रक्रिया से किया जाता है।

   iv) चूंकि नियोजन में कुछ संकल्पनात्मक विश्लेषात्मक कौशल की आवश्यकता पड़ती है। अतः इसे .................................... प्रक्रिया माना जाता है।

   v) भविष्य की घटनाओं संबंधी धारणाओं और अनुमानों को नियोजन ................... ...............................के नाम से जाना जाता है।

   vi) योजनाएँ विशिष्ट और अनोखी स्थितियों के लिए बनाई जाती हैं उन्हें .......... ............................... कहा जाता है।

   vii) नियोजन संसाधनों के विवेकपूर्ण ...................................... का साधन है।

   viii) नियोजन प्रबंधन को ............................................. उत्तेजित (stimulate) करने को प्रेरित करता है।

## 12.5 नियोजन की सीमाएँ

आपने नियोजन की प्रकृति और महत्व के संबंध में पढ़ा। अब हम इसकी सीमाओं के संबंध में चर्चा करेंगे।

1) **यह कुछ धारणाओं पर आधारित होती है** : नियोजन कुछ ऐसी धारणाओं या आधारिकाओं (assumption and premises) पर आधारित होती है जो संबद्ध भावी घटनाओं और चरों के संभावित व्यवहार के संबंध में पूर्वानुमान से ली जाती है। यदिं ये धारणाएँ या आधारिकाएँ सही सिद्ध नहीं हो जाती तो नियोजन का आधार उससे प्रभावित होता है। ऐसा इसलिए कि पूर्वानुमान की क्रिया परिशुद्ध विज्ञान (exact science) नहीं है।

2) **अपूर्ण सूचना** : नियोजन के लिए आवश्यक सूचना प्रायः अपूर्ण होती है। यह समय पर उपलब्ध नहीं होती और उसकी विश्वसनीयता प्रायः संदेहपूर्ण होती है। अनेक स्थितियों में प्रबंधकों को किंचित अज्ञानता के आधार पर नियोजन संबंधी निर्णय लेने होते हैं क्योंकि सूचना प्राप्त होने में कुछ समय लग जाता है और प्राप्त सूचना पूर्णतः विश्वसनीय नहीं होती।

3) **नियंत्रण की कमी** : बाह्य परिवेश के अनेक तत्वों के संबंध में प्रबंधकों को कम ज्ञान होता है तथा उन पर उनका नियंत्रण भी कम ही होता है। बाह्य स्थितियों को नियोजन के अनुशासन के अंतर्गत लाने का प्रायः कोई साधन नहीं होता। संगठनात्मक क्रियाओं एवं योजनाओं पर अनेक बाह्य घटनाओं का प्रभाव पड़ता है जैसे प्राकृतिक विपदाएँ, अचानक हड़तालें होना, सरकार की नीति में परिवर्तन आदि।

4) **बदलते हुए परिवेश के साथ-साथ परिवर्तन में कठिनाई** : बाह्य परिवेश में हो रहे तेजी से परिवर्तन की स्थितियों में नियोजन का कार्य कठिन हो जाता है। कार्यान्वित होने के पूर्व ही योजनाएँ पुरानी तथा असंगत हो जाती हैं। कुछ स्थितियों में तो लचीली योजनाएँ कुछ सहायक भी हो सकती हैं परन्तु संगठनात्मक योजनाओं में लचीलेपन को एक सीमा के अन्दर ही लाया जा सकता है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

5) **सपरिवर्ती प्रक्रिया (Fluid Process)** : नियोजन वास्तव में इस अर्थ में सुपरिवर्ती प्रक्रिया है जो सदैव परिवर्तन की स्थिति में होती है। ऐसा इसलिए होता है कि समय बीतता जाता है और भविष्य के आने के साथ-साथ सूक्ष्म रूप में परिवर्तन होते जाते हैं। भविष्य सदा ही गतिशील लक्ष्य होता है। नियोजन कार्य के लिए भूत, वर्तमान और भविष्य का समाकलित और संयुक्त दृश्य प्रस्तुत करना सरल नहीं होता।

6) **कार्यान्वयन में बिलंब** : चूंकि नियोजन से अभिप्राय होता है कार्य करने के पूर्व सोचना और निर्णय करना। अतः इस कारण कार्य में विलंब भी हो सकता है। चिंतन और निर्णय की प्रक्रिया बौद्धिक कार्य हैं। अनेक प्रबंधकों के पास इस कार्य के लिए न तो समय होता है और न ही इस संबंध में उनकी रुचि होती है। इसके अतिरिक्त प्रबंधक कार्यान्वयन को और वह भी समय पर कार्यान्वयन को अधिक महत्व देते हैं जिसके लिए अत्यधिक सक्रियता और गतिकता की आवश्यकता होती है।

7) **अनम्यता (Rigidity)** : नियोजन की प्रक्रिया से बनाई गई योजना संगठन की कार्यप्रणाली में अनम्यता ला देती है। प्रबंधक पूर्वनिर्धारित योजना के सख्ती से पालन करने पर जोर दे सकते हैं। कभी-कभी इसका अर्थ यह हो सकता है कि नए अवसरों और बेहतर विकल्पों को छोड़ दिया जाए। योजना का सख्ती से पालन का अर्थ हो सकता है कि सुनिश्चित क्रम से आगे पहल न की जाए।

8) **योजना केवल कागजी रह सकती है :** दूसरी ओर यह भी संभव है कि योजना ऐसी कागजी वस्तु मात्र बनकर रह जाए जिसका सम्मान किया जाता है तथा जिसे सुरक्षित रखा जाता है परन्तु उसका न तो पालन किया जाता है और न ही उसे कार्यान्वित किया जाता है। ऐसी योजनाएँ वास्तविकता से इतनी दूर होती हैं कि प्रबंधक इन्हें "अस्पृश्य" (untouchables) मानने लगते हैं। इसके विपरीत प्रबंधक नाजुक स्थितियों से निपटने में इस प्रकार उलझे रहते हैं कि सुनियोजित मार्ग पर चलने का इन्हें समय नहीं मिल पाता।

9) **इकाई के स्तर पर कार्यान्वित करना कठिन है :** कंपनी के स्तर पर व्यापक योजनाओं को बनाना तो सरल है परन्तु कठिनाई तब आ सकती है जब प्रबंधक इकाइयों के इसे कार्यान्वित करने के लिए वस्तुओं और वित्तीय रूप में विस्तृत योजना बनाने लगा है। विस्तृत योजना यदि बनाई भी जाती है तो भी वह व्यापक योजना के उद्देश्यों को संगत (consistent) रूप में प्रतिबिम्बित नहीं भी कर सकती है।

## 12.6 नियोजन की प्रक्रिया

पहले बताया जा चुका है कि नियोजन ऐसी प्रक्रिया है जिसमें कुछ चरण (steps) या क्रमिक क्रियाएँ होती हैं। नियोजन प्रक्रिया के लिए प्रायः कोई निर्धारित या मानक नमूना नहीं होता। विभिन्न लेखकों ने अपने ही अनुसार नियोजन प्रक्रिया की संकल्पना दी है। अब हम नियोजन प्रक्रिया की संकल्पनात्मक योजना का वर्णन करते हैं।

1) **नियोजन की योजना :** नियोजन न तो अपने आप बन जाता है और न मुख्य प्रबंधक (Chief Executive) के आदेश से इसके संबंध में निर्णय ठीक प्रकार से और सावधानीपूर्वक लेना होता है और इसी प्रकार योजना भी बनानी होती है। संगठन के प्रबंधक के लिए आवश्यक होता है कि वह प्रबंधक के प्रत्येक स्तर के व्यक्तियों के बीच नियोजन की अनिवार्यता और गुणों तथा इसमें सन्निहित दर्शन और तकनीकों को उजागर करके उनमें नियोजन की संस्कृति लाए। नियोजन की कार्यप्रणाली के संबंध में प्रशिक्षण प्रोग्रामों और सम्मेलनों का आयोजन करके प्रबंधकों को शिक्षित करना होता है ताकि योजना को कार्यान्वित करने के संबंध में वे और अधिक सक्षम बन सकें। आवश्यक नियोजन प्रणाली को तैयार करके उसे सक्रिय करना होता है। नए संगठनों के संबंध में ऐसा करना और भी आवश्यक होता है।

2) **आंतरिक स्थिति का मूल्यांकन :** इस चरण में मुख्य प्रबंधकों को अन्य प्रबंधकों के सहयोग से संगठन की वर्तमान स्थितियों अर्थात् इसकी वर्तमान योजनाओं, प्रक्रियाओं, कार्य निष्पादन स्तरों, उपलब्धियों तथा समस्याओं का विश्लेषण करना होता है। संगठन के कार्यक्षेत्र के अंतर्गत उसकी विशिष्ट शक्तियों और कमजोरियों के संबंध में विस्तारपूर्वक पुनर्विचार करना आवश्यक होता है। जैसे कि इसके द्वारा पूर्ति किए जाने वाले माल एवं सेवाएँ, वित्तीय स्थिति, जनशक्ति और प्रबंधक संसाधन, प्रतिस्पर्धा स्थिति, लाभ-स्तर, बाजार-छवि, विनिर्माण और अन्य सुविधाएँ, अनुसंधान और विकास (R & D) लाभ, पूँजी ढाँचा आदि। प्रबंधक वर्ग को उपर्युक्त क्षेत्रों में संगठन के कार्यों की भावी स्थिति और दिशाओं के संबंध में पूर्वानुमान भी करना होता है तथा उनके संबंध में खाका भी बनाना होता है।

3) **बाह्य स्थिति का मूल्यांकन :** संगठन का उच्च प्रबंधक नियोजन प्रक्रिया हेतु वातावरण के विश्लेषण से महत्वपूर्ण रूप से सम्बन्धित होता है। इससे उन्हें संगठन के बाहर के उन तत्वों और घटनाओं को समझने में सुविधा हो जाती है जो इसके वर्तमान और

भावी कार्य संचालन पर प्रभाव डालते हैं। संगठन के आर्थिक, सामाजिक, प्रौद्योगिकीय आदि साधनों में परिवेश संबंधी प्रवृत्तियों के मूल्यांकन की प्रक्रिया को निरंतर होना आवश्यक होता है। वर्तमान ही नहीं बल्कि संभावित भावी प्रवृत्तियों का मूल्यांकन विधिपूर्वक परीक्षण और पूर्वानुमान तंत्र के द्वारा करना होता है। इस प्रकार संगठन वर्तमान और भावी अवसरों को तथा विभिन्न बाह्य तत्वों के खतरों की पहचान कर पाता है जिसके साथ उसका प्रत्यक्ष रूप से संबंध होता है।

4) **नियोजन के प्रमुख क्षेत्रों और विषयों की परिभाषा :** आंतरिक और बाह्य वातावरण संबंधी स्थितियों के मूल्यांकन से प्रबंधक वर्ग यह जानने की स्थिति में हो जाता है कि संगठन को किस प्रकार की अस्थायी नियोजन की आवश्यकता है। प्रबंधकों को अपने आप से यह प्रश्न पूछना होता है कि बाह्य मूल्यांकन की दृष्टि से क्या वर्तमान व्यवसाय, उत्पाद, बाज़ार, प्रक्रियाएँ तथा पद्धतियाँ संगत हैं और इनमें से किस पक्ष को कायम रखना, सशक्त बनाना सही करना तथा संशोधित करना है। विश्लेषण से यह भी पता चल सकता है कि संगठन की प्रतिस्पर्धी स्थिति को मजबूत बनाने तथा संगठन और बाह्य वातावरण के बीच संबंध को बेहतर बनाने के लिए नई दिशा देने की आवश्यकता है। इसके फलस्वरूप नए व्यवसायों, नई प्रौद्योगिकियों, नए उत्पादों और नए बाजारों की भी संभावना होगी। उपर्युक्त मूल्यांकन का प्रमुख परिणाम होता है नए संभावित उपायों की पहचान जो उन वातावरणीय सुविधाओं और खतरों के लिए आवश्यक होते हैं जो संगठन के कार्यों और प्रगति में सहायक होते हैं या उनमें बाधा डालते हैं।

5) **मूल्यांकन और चुनाव के लिए विकल्पी योजनाओं का विकास :** इस स्थिति में नियोजन की आवश्यकताओं के अनुमान के आधार पर प्रबंधकों को अपने सर्जनात्मक और नए कौशलों का उपयोग करना होता है जिससे विकल्पी योजनाएँ बनाई जा सकें। ऐसी योजना के अंतर्गत आते हैं कार्य उद्देश्य, विधियाँ, नीतियाँ और कार्यक्रम। ये प्रायः निगम व्यापी होती हैं और परिस्थितियों के अनुसार इनका स्वरूप दीर्घकालिक होता है, जैसे 5 से 10 वर्ष का। विकल्पी योजनाओं के विकास के लिए प्रबंधकों को अत्यंत चिंतन और खोज करना होता है। उदाहरणार्थ, अपनी आर्थिक शक्ति और लाभ बढ़ाने के लिए व्यावसायिक उद्यमों के सम्मुख अनेक विकल्प होते हैं वर्तमान बाजारों में अपने उत्पादों की बिक्री में वृद्धि, नए बाजारों की तलाश, किसी अन्य वस्तु का उत्पादन, किसी अन्य उद्यम को अपने अधीन करना आदि। कोई उद्यम उपर्युक्त विकल्पी विधियों में से किसी एक या अनेक के संयोजन के द्वारा अपनी आर्थिक शक्ति को बढ़ा सकता है।

   इस अवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग है विकल्पी योजनाओं के संदर्भ में उनके तुलनात्मक गुणों और दोषों का मूल्यांकन जिसके बाद कुछ पूर्वनिर्धारित चयन मापदंडों के आधार पर विकल्पों के बीच से ही करना होता है। ये चयन प्रबंधकों के निर्णय होते हैं जो किसी संगठन के मार्ग का एक विशिष्ट अवधि तक निर्देशन करते हैं।

6) **मध्यकालिक तथा अल्पकालिक योजनाओं का निर्माण :** संगठनात्मक योजनाओं का दीर्घकालीन सेट विशिष्ट प्रकार के मंध्यकालिक तथा अल्पकालिक योजनाओं के निर्माण हेतु आधार प्रदान करता है। मध्यकालिक योजनाओं की अवधि प्रायः एक वर्ष से अधिक और तीन वर्षों तक की होती है। अल्पकालिक योजनाओं की अवधि एक वर्ष या उससे कम की होती है। मध्यकालिक तथा अल्पकालिक योजनाएँ दीर्घकालिक योजनाओं से क्रमशः अधिक विशिष्ट प्रकार की होती हैं। अल्पकालिक योजनाओं को

संक्रियात्मक योजना भी कहा जाता है और उनके निर्माण की प्रक्रिया को संक्रियात्मक नियोजन (operational planning) कहा जाता है। मध्यकालिक और अल्पकालिक योजनाएँ प्रायः विनिर्माण, विपणन, क्रय कर्मचारी वर्ग, वित्त, अनुसंधान और विकास (R & D) आदि क्षेत्रों में बनाई जाती हैं। फिर इनका विभाजन अनुभागीय और एकक योजनाओं में किया जाता है जो संगठन की मूल इकाइयों के प्रचालन हेतु वैध होता है।

7) **योजना को कार्यान्वित करने की व्यवस्था :** योजनाओं को कारगर ढंग से कार्यान्वित करना योजना प्रक्रिया की सबसे कठिन समस्या है। चूंकि योजनाओं को कार्यान्वित करने का भार प्रबंधकों तथा अनेक स्तरों पर काम करने वाले अन्य व्यक्तियों पर होता है। अतः मुख्य प्रबंधक वर्ग के लिए आवश्यक हो जाता है कि वह इस कार्य के लिए उनका सहयोग, सहभागिता तथा प्रतिबद्धता प्राप्त करें। योजनाओं को कार्यान्वित करने, संसाधनों को जुटाने और उनका वितरण करने, दिन-प्रतिदिन निर्णय लेने, पहल करने, संगठन में संचार प्रणाली को सक्रिय बनाने आदि कार्य के लिए विभिन्न प्रबंधकों के बीच अधिकार और उत्तरदायित्व को निश्चित करना आवश्यक हो जाता है।

## 12.7 पूर्वानुमानः नियोजन के एक तत्व के रूप में

पहले बताया जा चुका है कि पूर्वानुमान (forecasting) नियोजन प्रक्रिया का आवश्यक तत्व है। पूर्वानुमान शब्द से अभिप्राय होता है भविष्य की स्थितियों और घटनाओं के संबंध में किसी निश्चित अवधि के लिए विधिपूर्वक लेकिन अस्थायी रूप से अनुमान लगाना। यह अवधि आगे आने वाले कुछ महीनों की हो सकती है या कुछ वर्षों की। यह उन प्रासंगिक भावी स्थितियों के संबंध में पूर्व कथन की प्रक्रिया है जिनका संगठन के कार्यों पर प्रभाव पड़ने की संभावना होती है। यह भविष्य को देखने और वातावरण के संगत चरों के व्यवहार के संबंध में अस्थायी रूप से अनुमान लगाने और प्रक्षेपों (projections) को बनाने का प्रयास करता है।

चूंकि नियोजन भविष्य उन्मुखी होता है अतः पूर्वानुमान नियोजन प्रक्रिया का प्रमुख अंग होता है। पूर्वानुमान से प्रबंधकों को इस बात का संकेत मिलता है कि भविष्य में संगठन के लिए कौन सी समस्याएँ तथा प्रत्याशाएँ हो सकती हैं। पूर्वानुमान के माध्यम से प्रबंधक वातावरण के आर्थिक, सामाजिक, प्रौद्योगिकीय और राजनीतिक जैसे अनेक आयामों और पक्षों के संबंध में ऐसी सूचनाएँ एकत्र कर लेते हैं जिनका संगठन के कार्य संचालन और समृद्धि के साथ सीधा संबंध होता है और जो योजनाओं तथा प्रबंधकों के निर्णय, पहल और प्रतिक्रिया को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। प्रबंधकों को योजना के लिए प्रमुख आगतें (inputs) मिल सके तथा संगठन के वर्तमान और भविष्य के कार्यों पर पड़ने वाले बाह्य शक्तियों के प्रभाव को वे जान सकें। इसके लिए भी पूर्वानुमान की आवश्यकता पड़ती है। संगठन की योजनाएँ उन वास्तविक तथा विश्वसनीय सूचनाओं पर आधारित होती हैं जिन्हें प्रबंधक पूर्वानुमान तथा अन्य साधनों से प्राप्त करते हैं।

उदाहरणार्थ, व्यावसायिक उद्यमों की भावी प्रवृत्ति के अनेक पक्षों को पूर्वानुमान के माध्यम से जाना जा सकता है। इसके अंतर्गत आते हैंः भावी मांग, पूर्ति, लागत और प्रतिस्पर्धी स्थितियों के अनुमान पर आधारित मोल की भावी विक्रय प्रवृत्तियाँ, नए उत्पादों के आने की संभावना, नई प्रक्रियाएँ और नए बाज़ार, जनसंख्या के स्वरूप में संभावित परिवर्तन, उनकी आय का स्तर, जीवन पद्धति, क्रय ढाँचा आदि। अलग-अलग उद्यमों को उपर्युक्त सूचना के कुछ अंश अन्य एजेन्सियों द्वारा किए गए पूर्वानुमान के आधार पर मिल सकते हैं। ये

एजेन्सियाँ हैं– सरकार, व्यापार संग, शैक्षिक एवं अनुसंधान संस्थाएँ, परामर्शदाता फर्में आदि। परन्तु विक्रय लाभ, बाजार शेयर, लागत प्रवृत्ति आदि आंतरिक चरों के संबंध में पूर्वानुमान कार्य स्वयं उद्यम को ही करना होता है।

### पूर्वानुमान करना (Forecasting) और आधारिका बनाना (Premising) :

योजनाएँ बनाने के लिए प्रबंधकों को भावी घटनाओं संबंधी मूल्यांकनों, प्राक्कलनों और प्रोजेक्शनों का रूपांतरण कुछ सार्थक धारणाओं में करना होता है जिन्हें नियोजन आधारिका (planning promises) के नाम से जाना जाता है। इस रूपांतरण प्रक्रिया को "आधारिका बनाना" (premising) कहा जाता है। नियोजन आधारिकाएँ संगठन की योजनाओं की नींव होती हैं। इनका स्वरूप विशिष्ट भावी प्रवृत्तियों के संबंध में प्रबंधकों का अवगत अनुमान होता है। योजना आधारिकाओं के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं :

क) अगले 4 वर्षों तक उद्यम अपनी प्रतिस्पर्धी शक्ति को कायम रखेगा।

ख) अगले 5 वर्षों में टी. वी. प्रौद्योगिकी में क्रांतिकारी विकास होंगे।

ग) बड़े-बड़े व्यावसायिक उद्यमों के संबंध में सरकार की आर्थिक और औद्योगिक नीति और भी उदार होगी।

नियोजन आधारिकाओं का वर्गीकरण अनेक प्रकार से किया जाता है। बाह्य आधारिकाओं का संबंध आम आर्थिक और व्यावसायिक स्थितियों तथा सामाजिक राजनीतिक प्रौद्योगिकीय एवं अन्य प्रवृत्तियों के साथ होता है। **आंतरिक आधारिकाएँ** उद्यम के कार्य तक ही सीमित रहती हैं, जैसे कि नकदी प्रवाह (cash flows), उत्पादों और सेवाओं की लागत लाभप्रदता आदि। मूर्त आधारिकाओं (tangible premises) का स्वरूप मात्रात्मक होता है, जैसे कि 50 करोड़ रुपए का विक्रय। **अमूर्त आधारिकाएँ (intangible premises)** गुणात्मक होती हैं, जैसे कि किसी संगठन के प्रबंधकों की सक्षमता और उनका चरित्र। **नियंत्रकीय आधारिकाएँ (controllable premises)** वे हैं जो कि किसी उद्यम द्वारा प्रबंधक के योग्य हों (जैसे कि विज्ञापन व्यय)। अनियंत्रनीय आधारिकाओं का संबंध उन दैवी या मानवीय कार्यों के साथ होता है जिनके संबंध में औद्योगिक उद्यम कुछ कर नहीं पाते (उदाहरणार्थ, किसी प्लांट में भयानक रूप से आग लगना, सरकारी नीति आदि)। पूर्वानुमान और नियोजन आधारिकाएँ योजनाओं से भिन्न होती हैं। पूर्वानुमान से पता चलता है कि भविष्य में क्या हो सकता है जबकि नियोजन आधारिकाएँ बताती हैं कि उद्यम को भविष्य में क्या करना चाहिए। इसके अतिरिक्त पूर्वानुमान तथा नियोजन आधारिकाएँ भविष्य की जटिलता और अनिश्चितता को कम नहीं करतीं। वे तो भविष्य की घटनाओं की जटिलता और अनिश्चितता को समझने और दृढ़ विश्वास के साथ उनका सामना करने में प्रबंधकों की केवल सहायता करती हैं।

यह सच है कि पूर्वानुमान के पूर्णतया सही होने की संभावना बहुत ही कम होती है तथा वास्तव में यह अत्यन्त कठिन कार्य होता है, विशेषतः ऐसी स्थिति में जबकि बाह्य स्थितियों में बड़ी तेजी से परिवर्तन हो रहा हो। पूर्वानुमान जो केवल सन्निकटन (approximations) और प्राक्कलन (estimates) होते हैं। प्रबंधक जैसा पूर्वानुमान करते हैं और आधारिकाएँ बनाते हैं। ठीक उन्हीं के अनुरूप भावी घटनाएँ नहीं भी हो सकतीं। फिर भी योजनाओं को बनाने के पूर्व पूर्वानुमान की क्रिया से तो गुज़रना ही होता है। सुबोध और व्यवस्थित पूर्वानुमान के अभाव में संगठन ही होता है। सुबोध और व्यवस्थित पूर्वानुमान के अभाव में संगठन की योजनाएँ केवल प्रत्याशा और आकांक्षा (expectations and wishes) बन कर रह जाएंगी।

**बोध प्रश्न 2**

1) रिक्त स्थानों की पूर्ति करें :

   i) नियोजन के लिए आवश्यक सूचना प्रायः .................................... होती है और, वह ............................................ नहीं भी हो सकती।

   ii) नियोजन की सीमाओं में से एक यह है कि यह अनिवार्य रूप से .................. प्रक्रिया होती है।

   iii) बाहरी ............................................ का मूल्यांकन नियोजन प्रक्रिया के लिए अत्यन्त आवश्यक होता है।

   iv) पूर्वानुमान से प्रबंधकों को भावी समस्याओं और प्रत्याशाओं के संबंध में अत्यंत ..................................... प्राप्त होते हैं।

   v) भविष्य में होने वाला अनुमानित विक्रय किसी कंपनी के प्रबंधकों के लिए ..... ..................................... आधारिका है।

2) निम्नलिखित में से कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत ?

   i) नियोजन के कारण विलंब होता है क्योंकि इसके संबंध में पहले से सोचने-विचारने की आवश्यकता होती है।

   ii) विकल्पी योजनाओं का विकास कार्य स्तर पर योजना के लिए अत्यन्त आवश्यक होता है।

   iii) नियोजन के लिए पूर्वानुमान करना और आधारिका बनाना एक ही वस्तु हैं।

   iv) नियोजन आधारिकाएँ तथा पूर्वानुमान भविष्य की अनिश्चितताओं और जटिलताओं को कम कर देते हैं।

   v) मध्यकालिक योजनाएँ एक वर्ष से अधिक अवधि की होती हैं।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

## 12.8 नियोजन के प्रकार

कुछ चरों के आधार पर नियोजन का विभाजन कई वर्गों में किया जा सकता है। यहाँ पर हम व्यापकता की मात्रा और समय अवधि नामक दो चरों के आधार पर नियोजन कार्य को चार वर्गों में बाँटेंगे। व्यापकता के आधार पर नियोजन को सामरिक नियोजन और युक्ति नियोजन के बीच बाँटा जाता है और समय अवधि के आधार पर इसे दीर्घकालीन नियोजन और अल्पकालीन नियोजन के बीच बाँटा जा सकता है। अब हम इन चार प्रकार की नियोजनों के संबंध में चर्चा करेंगे।

**सामरिक नियोजन (Strategic planning)** : सामरिक नियोजन से अभिप्राय होता है एकीकृत संगठन के निर्धारण की प्रक्रिया अर्थात् संगठन के मुख्य लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किए जाने वाले अनेक उपाय। यह शब्द सैन्य विज्ञान से लिया गया है जहाँ पर इसका उपयोग देश की रक्षा करने और शत्रु सेना को पराजित करने के सैनिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सैनिक अभियान की प्रक्रिया के संदर्भ में किया जाता है। सेना की बोलचाल की भाषा में सामरिक नियोजन के अंतर्गत जो पक्ष आते हैं वे हैं शत्रु पर किस प्रकार और कितनी ओर से आक्रमण किया जाए, भू-सेना, वायुसेना और नौसेना का आकार और संयोजन, उपयोग में लाए जाने वाले साधनों की मात्रा, विभिन्न गतिविधियों का उचित समय, मोर्चाबंदी तथा रक्षा किए जाने वाले क्षेत्र आदि यह शब्द अब गैर सैनिक क्षेत्रों में भी काफी महत्वपूर्ण हो गया है। राष्ट्रीय और क्षेत्रीय स्तर पर पंचवर्षीय योजनाओं के लक्ष्यों को प्राप्त

करने की युक्ति गाँवों में पेय जल समस्या को समाधान की युक्ति, जनसंख्या दर में वृद्धि को रोकने की युक्ति आदि शब्द अक्सर ही सुनने में आते हैं। व्यावसायिक उद्यमों के संदर्भ में सामरिक नियोजन के अंतर्गत उन युक्तियों का निर्माण आता है जो वातावरण में प्रतिस्पर्धी तथा अन्य बाह्य शक्तियों पर काबू करने के लिए की जाती हैं। इसके अंतर्गत उन प्रमुख उपायों और गतिविधियों को अस्थायी रूप से बनाना होता है जो उद्यम की शक्ति और अशक्तता के संदर्भ में अवसरों का पता लगाने और उनसे लाभ उठाने तथा खतरों और प्रतिबंधों का सामना करने के लिए आवश्यक होती है।

उद्यम के शीर्षस्थ प्रबंधक वर्ग के सामने जो प्रश्न उपस्थित होते हैं और सामरिक नियोजन में उन्हें जिनका उत्तर मिलता है वे हैं: कौन से अत्यंत महत्वपूर्ण बाजार तथा अन्य अवसर हैं और उद्यम के साथ उनका किस प्रकार से संबंध है ? उद्यम के चलते किस प्रकार और कितनी जटिल बाहरी समस्याएँ, खतरे और प्रतिबंध उपस्थित होते हैं ? इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए उद्यम अवसरों का लाभ कैसे उठाता है तथा खतरों और प्रतिबंधों का सामना किस प्रकार से करता है (उदाहरणार्थ, विरोधी उद्यम द्वारा की गई कीमत कटौती, आक्रमण विज्ञापन अभियान, नए और उत्कृष्ट प्रकार के उत्पादों का प्रस्तुतीकरण आदि)? किन विशिष्ट क्षेत्रों और व्यवसायों में अपने प्रभुत्व को जमाने और उसे कायम रखने का प्रयास उद्यम ने किया? किसी उद्यम को अपने कार्यों का विस्तार किन नए व्यवसायों में करना चाहिए?

सामरिक नियोजन उद्योग के अन्य वर्तमान और संभावी प्रतिद्वंदी के मुकाबले में उद्यम के प्रतिस्पर्धी स्थिति में सुधार लाने का एक साधन है। यह एक कार्य योजना (action plan) है जिसके अंतर्गत उद्यम के महत्वपूर्ण संसाधनों (निवेश-राशि, ग्राहक की साख और निष्ठा, वितरण व्यवस्था अनुसंधान और विकास सुविधाएँ आदि) का उपयोग कैसे, कहाँ और कब किया जाए तथा संवृद्धि, विविधीकरण, अधिक लाभ प्रतिस्पर्धी शक्ति और अच्छे आजार संबंधी उद्यम के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रमुख निर्णयों और पहलों के संयोजन, क्रम और समय क्या हो, आते हैं।

**युक्तिपूर्ण नियोजन (Tactical planning)** : युक्तिपूर्ण नियोजन से अभिप्राय होता है उद्यम् की युक्तियों को कार्यान्वित करने के लिए अधिक स्पष्ट और कार्यात्मक उपयोजनाओं के निर्माण की प्रक्रिया। इस नियोजन का क्षेत्र अधिक सीमित होता है और इसके अंतर्गत ऐसे विस्तृत निर्णय और कार्य आते हैं जिनकी शुरुआत निचले स्तर के प्रबंधकों द्वारा इसलिए की जाती है कि उपयुक्त स्थिति के आने पर उससे लाभ उठाया जाए तथा स्थानीय और प्रचालन संबंधी समस्याओं से निपटा जाए। इसका स्वरूप उपनिग़मीय प्रकार का होता है। युक्तिपूर्ण नियोजन छोटे-छोटे तथा क्रमिक चरणों का रूप लेता है या ऐसी गतिविधियाँ जो सम्मिलित रूप में ली जाती हैं। युक्तिपूर्ण निर्णयों का संबंध जिनके साथ होता है वे हैं कौन से कार्य और किस प्रकार किए जाएँ, कौन से कार्य मापदंड बनाए जाएँ, संसाधनों का उपयोग कुशलतापूर्वक कैसे किया जाए, आदि। युक्तिपूर्ण नियोजन का कार्यान्वयन सामरिक नियोजन की अपेक्षा अधिक सूचना के आधार पर कम जोखिम वाली स्थितियों में तथा अधिक निर्मित विधियों द्वारा किया जाता है। युक्तिपूर्ण नियोजन विभिन्न कार्यों का विस्तृत रूप में विशेष विवरण का आधार तैयार करता है जिसका पालन उद्यम समन्वित और समयबद्ध आधार पर करते हैं।

एक उदाहरण द्वारा इसे स्पष्ट किया जा सकता है। मान लें कि उद्योग-वस्तुओं का निर्माण करने वाले उद्यम के प्रमुख प्रबंधक वर्ग को मुख्य लक्ष्य अगले चार वर्षों में बिक्री की मात्रा को दोगुना करके उद्यम में बड़ी तेजी से संवृद्धि लाना है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए यह उद्यम जिन युक्तियों को काम में लाता है उनमें एक है उपभोक्ता वस्तुओं के विनिर्माण में

विशिष्टिकरण को लाना। इस युक्ति को कार्यान्वित करने के लिए इस उद्यम ने बनाओ या खरीदो आंतरिक संवृद्धि बनाम अधिकरण या विलयन (internal growth or acquisitions or mergers) विदेशी सहयोग आदि के संबंध में विशेष नीतियों को बनाती हैं। उपर्युक्त युक्तियों और नीतियों के ढाँचे के अंतर्गत प्रचालन के आकार, उत्पाद के प्रकार, किस्में, ग्राहक सेवा, वितरण माध्यम आदि पक्षों के संबंध में युक्तिपूर्ण योजना बनाई जाती है और निर्णय लिए जाते हैं।

सामरिक नियोजन और युक्तिपूर्ण नियोजन के बीच का अंतर क्षेत्र और प्रभाव से संबंधित होता है, कई बार तो ये दोनों ही प्रकार के नियोजन एक जैसे ही लगते हैं। फिर भी ये एक दूसरे पर निर्भर होते हैं।

**दीर्घकालिक नियोजन** : दीर्घकालिक नियोजन शब्द से अभिप्राय होता है संगठन के दीर्घकालिक लक्ष्यों को बनाने की प्रक्रिया और ऐसे लक्ष्यों तक पहुँचने के लिए साधनों (ways and means) का निर्धारण। "दीर्घकाल" शब्द से आशय होता है भावी समय का विस्तार तथा ऐसी लम्बी अवधि जिसकी कल्पना कोई संगठन अस्थायी लक्ष्य के रूप में कर सके। दीर्घकाल .की अवधि और सीमा अलग-अलग उद्यमों तथा स्थितियों में अलग-अलग होती है। कुछ उद्योगों के लिए 3-5 वर्ष का समय काफी लम्बा समय माना जाता है जबकि कुछ अन्य के लिए 25-30 वर्ष या उससे भी लम्बी अवधि को योजना के लिए आवश्यक माना जाता है। योजना की दीर्घ अवधि का निर्धारण उद्यम के व्यवसाय का स्वरूप, उसका आकार और संवृद्धि दर, वातावरण में परिवर्तनशीलता की मात्रा, प्रमुख निर्णयों को कार्य रूप देने के लिए आवश्यक समय आदि को ध्यान में रखक़र किया जाता है।

दीर्घकालिक नियोजन उद्यम की परिसंपत्तियों या बिक्री और लाभप्रदता की वांछित संवृद्धि दर, भविष्य में नए कार्य, प्रमुख नए निवेश, विकास के क्षेत्र और विनिवेश जैसे महत्वपूर्ण लक्ष्यों के निर्धारण के लिए ढाँचा प्रस्तुत करता है। जैसा कि पीटर ड्रकर ने कहा है जटिल और गतिक प्रकार के बाह्य परिवेशों के संदर्भ में प्रत्येक उद्यम को अपने आपसे ऐसे और इस प्रकार के प्रश्न पूछने चाहिए। व्यवसाय तथा अन्य संगठन यह आशा नहीं कर सकते कि उनके आज के व्यवसाय, उत्पादन-धंधे और कार्य, प्रौद्योगिकी, लाभ स्तर और बाज़ार भविष्य में भी संगत बने रहेंगे। दीर्घकालिक नियोजन का उद्देश्य इस प्रकार की सजगता लाना और प्रबंधकों को इस योग्य बनाना होता है कि वे प्रमुख निर्णयों को, लेते समय भविष्य पर भी नज़र रखें।

**अल्पकालिक नियोजन** : अल्पकालिक नियोजन से अभिप्राय होता है अल्पकालिक लक्ष्यों के निर्माण की प्रक्रिया और उन कार्यों या योजनाओं के संबंध में निर्णय लेना जिनसे उन लक्ष्यों की प्राप्ति की जा सकती है। अल्पकालिक नियोजन एक वर्ष या उससे कम की अवधि के लिए बनाया जाता है। आमतौर पर इसे दीर्घकालिक नियोजन के ढाँचे के ही अंतर्गत तथा दीर्घकालिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए क्रमशः चलाया जाता है। अल्पकालिक नियोजन दीर्घकालिक नियोजन को सुसम्बद्ध और व्यवहार्य कार्यक्रमों के रूप में तोड़ने का प्रयास करता है। अल्पकालिक नियोजन अधिक कार्य उन्मुखी, अधिक विस्तृत, विशिष्ट और मात्रात्मक होता है। उदाहरणार्थ, किसी उद्यम का दीर्घकालिक लक्ष्य यदि अगले 5 वर्षों में बिक्री की मात्रा में 50% की वृद्धि करना है तब अगले वर्ष के लिए उसे ऐसी अल्पकालिक योजना बनानी होगी कि उसकी कुल बिक्री में 20% की वृद्धि हो। इस कार्य के लिए उसे विस्तृत बजट का निर्माण करना होगा जिसमें अल्पकालिक लक्ष्य, निष्पादन लक्ष्य, क्रियाएँ तथा समयबद्ध ढंग से संसाधनों के वितरण, कार्यों के निर्धारण, समुचित योजना की रूपरेखा, कार्यान्वयन और प्रोग्राम मूल्यांकन प्रणाली के लिए आधार की व्यवस्था करता है। इस प्रकार दीर्घकालिक नियोजनों का कार्यान्वयन बजट और अनुसूची बनाने के प्रयासों

और संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए आवश्यक कार्यों के लिए किया जाता है। यह ध्यान देने की बात है कि युक्तिपूर्ण नियोजन और अल्पकालिक नियोजन को संक्रियात्मक नियोजन (operational planning) भी कहा जाता है क्योंकि वे मध्यम और पर्यवेक्षण स्तर पर निम्न स्तर के प्रबंधकों के विस्तृत प्रचालनों की योजना का प्रतिनिधित्व करते हैं।

## 12.9 नियोजन के सिद्धांत

चूंकि नियोजन प्रबंधन का कार्य है, अतः इसे कुछ सिद्धांतों पर आधारित होना चाहिए जिससे उपक्रम का मार्ग निदेशन सही ढंग से हो सके। योजना के सिद्धांतों को नीचे दिया जा रहा है।

1) **शीर्षस्थ प्रबंधक वर्ग की रुचि का सिद्धांत** : संगठन के मुख्य कार्यपालक (Chief Executive) को योजना में रुचि होनी चाहिए, उसे योजना की सीमाओं के अंतर्गत कार्य करना चाहिए और अपने अधीन व्यक्तियों में भी इसी प्रकार की भावना लानी चाहिए।

2) **दीर्घकालिक दृष्टिकोण का सिद्धांत** : सभी प्रबंधकों को चाहिए कि वे निर्णय लेने के पूर्व उसके दीर्घकालीन भावी परिणाम के संबंध में भली-भांति विश्लेषण कर लें तथा सभी तथ्यों के संबंध में सोच-विचार कर लें।

3) **लक्ष्यों में योगदान का सिद्धांतः** योजना को उद्देश्यपूर्ण होना चाहिए। संगठन के लक्ष्यों या वांछित परिणामों को प्राप्त करने के प्रति इसका प्रत्यक्ष योगदान होना चाहिए।

4) **योजना की प्रमुखता का सिद्धांत** : जैसा कि पहले बताया जा चुका है, प्रबंधन प्रक्रिया में योजना का प्रमुख स्थान होता है। इसे प्रबंधकों का प्रथम कार्य माना जाता है जिससे अन्य सभी कार्यों की शुरुआत होती है।

5) **लचीलेपन (flexibility) का सिद्धांत** : इस सिद्धांत से पता चलता है कि योजना के लचीले होने से बाह्य घटनाओं में तीव्र और अनपेक्षित (rapid and unforeseen) परिवर्तनों का सामना करने में संगठन को मदद मिलती है। पूर्व निर्धारित योजनाओं को छोड़े बिना या प्रतिकूल परिणामों का सामना किए बिना ही इसे प्राप्त किया जा सकता है।

6) **मार्ग-निर्देश परिवर्तन का सिद्धांत** : इस सिद्धांत का संबंध लचीलेपन के सिद्धांत के साथ होता है। यह बताता है कि योजनाओं के पुनर्विलोकन तथा संशोधन (review and revision) के साथ ही साथ बाह्य घटनाओं की दिशा में निर्देशन की प्रक्रिया भी नियमित रूप से चलनी चाहिए जिससे वांछित लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। यह कार्य वैसा ही है जैसे कि कोई नौचालक (navigator) जलधारा के प्रवाह के अनुकूल अपने जहाज के मार्ग को बदल लेता है।

7) **प्रतिबद्धता का सिद्धांत** : यह सिद्धांत योजना अवधि के निर्धारण में सहायक होता है। योजना के लिए उतनी अवधि आवश्यक होती है जो निर्णय को कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक हो। उदाहरणार्थ, कोई छात्र यदि बी. काम. (आनर्स) करने का निर्णय लेता है तो उसका योजनाकाल तीन वर्ष का होगा।

8) **प्रतिबंधक कारक का सिद्धांत (Limiting factor)** : प्रतिबंधक कारक उसे कहते हैं जो वांछित लक्ष्य की प्राप्ति में बाधक सिद्ध होता है। जो कारक लक्ष्यों की प्राप्ति के मार्ग में बाधक सिद्ध होते हैं उन्हें दूर करने के प्रति प्रबंधकों को समुचित ध्यान देना चाहिए।

**बोध प्रश्न 3**

1) निम्नलिखित में से कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत है ?

   i) सामरिक योजना के अंतर्गत समस्त संगठन के लिए युक्तियों को बनाने का काम आता है।

   ii) युक्तिपूर्ण नियोजन सामरिक नियोजन की तुलना में अधिक जोखिम वाली स्थितियों में कार्यान्वित किया जाता है।

   ii) संक्रियात्मक नियोजन के अंतर्गत दीर्घकालिक तथा अल्पकालिक ये दोनों ही प्रकार के नियोजन आते हैं।

   iv) नियोजन के लचीलेपन के सिद्धांत से यह पता चलता है कि जितनी बार हो सके उतनी बार योजनाओं में परिवर्तन किया जाना चाहिए।

   v) प्रतिबद्धता का सिद्धांत योजना अवधि के निर्धारण में सहायक सिद्ध होता है।

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति करें :

   i) ....................................... के आधार पर सामरिक नियोजन और युक्ति नियोजन की व्याख्या की जाती है।

   ii) प्रतिस्पर्धी तथा अन्य बाह्य शक्तियों को अपने काबू में लाने के लिए जिन कार्यों की योजना बनाई जाती है उसे .............................................. कहा जाता है।

   iii) सामरिक नियोजन की अपेक्षा युक्तिपूर्ण नियोजन में अधिक .............................. विधियों की आवश्यकता पड़ती है।

   iv) महत्वपूर्ण लक्ष्यों के निर्धारण कार्य में दीर्घकालिक नियोजन ...................... की व्यवस्था करता है।

   v) वांछित लक्ष्य की प्राप्ति में जो कारक बाधक सिद्ध होता है उसे ................. कारक कहा जाता है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

## 12.10 सारांश

नियोजन भावी लक्ष्यों को निर्धारित करने तथा उनकी प्राप्ति के लिए साधनों (ways and means) के संबंध में निर्णय लेने की प्रक्रिया है। इसका अर्थ होता है कि पहले से ही निर्णय कर लिया जाए कि भविष्य में एक निश्चित अवधि तक क्या करना है और इस निर्णय को कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक कदम उठाए जाएँ। नियोजन का स्थान अन्य सभी प्रबंधक कार्यों के पहले आता है। यह प्रबंध प्रक्रिया की एक उप-प्रक्रिया है। यह सभी स्तरों और प्रबंध की सभी शाखाओं में व्याप्त होता है। यह अनिवार्य रूप से भविष्य-उन्मुखी होता है, लेकिन इसे पुरानी प्रवृत्तियों, वर्तमान स्थितियों और भावी संभावनाओं से मदद भी मिलती है। यह उद्देश्य प्रबुद्ध प्रबंधन कार्य है। इसमें औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों ही प्रकार के तत्व होते हैं परन्तु इसके साथ ही नियोजन एक बौद्धिक प्रक्रिया है और इसके लिए कुछ विश्लेषणात्मक और संकल्पनात्मक कौशलों की आवश्यकता होती है। मुख्यतः यह प्रयोजनात्मक और क्रिया उन्मुखी कार्य होता है। नियोजन के अंतर्गत समस्या समाधान तथा निर्णय लेने की प्रक्रियाएँ आती हैं। इसके आधार कुछ अनुमान (assumptions) होते हैं। यह एक गतिक प्रक्रिया है।

क्षेत्र, महत्व और समय अवधि के आधार पर नियोजन का विभाजन कुछ स्तरों में किया जाता है जैसे निगम योजना और कार्य मूलक़ योजना, सामरिक नियोजन और युक्तिपूर्ण नियोजन,

दीर्घावधि नियोजन और अल्पावधि नियोजन। सभी प्रकार योजनाओं का विभाजन दो मुख्य वर्गों में किया जा सकता है एकल उपयोग योजना और स्थायी योजना। नियोजन का महत्व इससे होने वाले विभिन्न प्रकार के लाभ के फलस्वरूप होता है। नियोजन से संगठन के कार्यों तथा प्रबंधकों एवं अन्य व्यक्तियों के कार्य व्यवहार को दिशा मिलती है। नियोजन के फलस्वरूप प्रबंधक वर्ग विकल्पी मार्गों का परीक्षण करने और उनके संभावित परिणामों को जानने की स्थिति में हो जाता है। नियोजन प्रबंधकों को अपने आलस्य को छोड़ने को बाध्य करता है तथा उन्हें इस बात के लिए प्रेरित करता है कि वे निकट वर्तमान के आगे की बातों के संबंध में विचार करें। यह आवेगी और मनमाने निर्णयों तथा तदर्थ कार्यों के प्रभाव को कम करता है। नियोजन सभी प्रकार के प्रबंधन कार्यों के लिए आधार की व्यवस्था करता है। यह संगठन के महत्वपूर्ण और दुर्लभ संसाधनों के विवेकपूर्ण वितरण का साधन है तथा इसके चलते संसाधनों के उपयोग में कुशलता बढ़ती है। इसके अतिरिक्त नियोजन संगठन की क्षमता को बढ़ाकर उसे इस योग्य बनाता है कि वह बाह्य परिवेश में परिवर्तनों के अनुसार अपने को बना सके और अपने कार्यों को उसके अनुकूल कर सके। यह प्रबंधक वर्ग को साहसपूर्ण पहल करने, संकटों और खतरों का पहले से अनुमान लगाने और उन्हें दूर करने तथा अपने प्रतिस्पर्धियों से पहले ही अवसरों को पहचानने और उनसे लाभ उठाने के लिए प्रेरित करता है।

नियोजन की सीमाएँ इस प्रकार हैं। जो धारणाएँ तथा पूर्वानुमान योजना के आधार होते हैं वे गलत भी हो सकते हैं। आवश्यक सूचना विश्वसनीय नहीं भी हो सकती है तथा वह समय पर उपलब्ध भी नहीं होती। बाह्य परिवेशों में होने वाले परिवर्तन कभी-कभी प्रबंधन के ज्ञान और नियंत्रण के बाहर होते हैं। विशेषकर तेज़ी से होने वाले परिर्वतन की स्थिति में ऐसा होता है। इसके अतिरिक्त परिवेश में निरंतर और सूक्ष्म रूप से होने वाले परिवर्तन के कारण योजना सदा ही परिवर्तनों के निरंतर क्रम की स्थिति में होती है। नियोजन के कारण विलंब हो सकता है क्योंकि इसके संबंध में पहले से चितंन करने और निर्णय लेने की आवश्यकता पड़ती है कभी-कभी नियोजन के कारण प्रबंधकों के कार्यों में अनम्यता (rigidity) आ जाती है। इसके विपरीत नियोजन यथार्थ से बहुत दूर हो सकती है। अतः इसे कार्यान्वित करना कठिन होता है। विस्तृत योजनाओं के संबंध में ऐसा विशेषतः होता है।

नियोजन की प्रक्रिया के अंतर्गत नियोजन की योजना, आंतरिक स्थितियों और बाह्य परिवेशों का मूल्यांकन, नियोजन के प्रमुख क्षेत्रों और विषयों की परिभाषा, मूल्यांकन और चुनाव के लिए विकल्पी योजनाओं का विकास, मध्यकालिक और अल्पकालिक योजनाओं का निर्माण और योजनाओं को कार्यान्वित करना शामिल है। पूर्वानुमान नियोजन प्रक्रिया का आवश्यक तत्व है। यह तत्व आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक परिवेशों से संबंधित अनेक आयामों के बारे में सूचना एकत्रित करके प्रबंधकों को महत्वपूर्ण संकेत प्रदान करता है। यह भावी घटनाओं के संबंध में अनुमान और प्रक्षेपों (projections) की भी व्यवस्था करता है।

पूर्वानुमान से प्राप्त मूल्यांकनों, अनुमानों और प्रक्षेपों को सार्थक धारणाओं के रूप में बदला जाता है जिन्हें नियोजन आधारिका (planning premises) के नाम से जाना जाता है। ये आधारिकाएँ विभिन्न वर्गों की हो सकती हैंः बाह्य, आंतरिक, मूर्त, अमूर्त, नियंत्रणीय और अनियंत्रणीय।

व्यापकता और समय अवधि के आधार पर नियोजन को चार वर्गों में बाँटा जाता है। ये हैंः सामरिक नियोजन, युक्तिपूर्ण नियोजन, दीर्घकालिक नियोजन और अल्पकालिक नियोजन, युक्तिपूर्ण और अल्पकालिक नियोजन को "संक्रियात्मक नियोजन" (operational planning) भी कहा जाता है।

प्रबंधन कार्य के रूप में कुछ सिद्धांतों के आधार पर कार्यान्वित करना चाहिए। ये सिद्धांत हैं: शीर्षस्थ प्रबंधकं वर्ग की रुचि का सिद्धांत, दीर्घकालिक दृष्टिकोण का सिद्धांत, लचीलेपन का सिद्धांत, मार्ग-निर्देश परिवर्तन का सिद्धांत, प्रतिबद्धता का सिद्धांत और प्रतिबंधक कारक का सिद्धांत।

## 12.11 शब्दावली

| | |
|---|---|
| **पूर्वानुमान** | व्यवसाय की इकाइयों को प्रभावित करने वाले चरों के भावी व्यवहार के सम्बन्ध में अनुमान लगाना। |
| **दीर्घकालिक नियोजन** | दीर्घकालिक लक्ष्यों का निर्माण और उन लक्ष्यों को प्राप्त करने संबंधित साधन। |
| **लक्ष्य** | उद्देश्य या प्रयोजन जिसकी प्राप्ति के लिए व्यवसाय-कार्य किए जाते हैं। |
| **संक्रियात्मक नियोजन** | प्रबंधन के मध्य या पर्यवेक्षण स्तरों पर विस्तृत क्रियाओं का आयोजन। |
| **नियोजन** | भावी, लक्ष्यों के निर्धारण और उन्हें प्राप्त करने के लिए साधनों के संबंध में निर्णय की प्रक्रिया। |
| **नीतियाँ** | निर्णय लेने और कार्रवाई करने के मार्गदर्शी सिद्धांत। |
| **सामरिक नियोजन** | नियोजन की वह प्रक्रिया जिसके अंतर्गत परिवेश में होने वाले परिवर्तनों और आंतरिक संसाधनों के संदर्भ में उत्पाद तथा बाजार निर्णय आते हैं। |
| **युक्तियाँ** | प्रतिस्पर्धी तथा परिवेश संबंधी अन्य कारकों पर काबू करने के लिए किए गए कार्य। |
| **युक्तिपूर्ण नियोजन** | महत्वपूर्ण योजना को कार्यान्वित करने के लिए विशेष प्रकार की तथा कार्यात्मक उपयोजनाओं को बनाने की प्रक्रिया। |

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

## 12.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

**बोध प्रश्न 1**

1) i), सही, ii) गलत, iii) गलत, iv) सही, v) सही

2) i) भविष्य, ii) विषय-वस्तु, किस्म, iii) सहजबोधनीय, iv) बौद्धिक, v) आधारिकाएँ, vi) एकल उपयोग योजनाएँ, vii) वितरण, viii) साहसपूर्ण पहल

**बोध प्रश्न 2**

1) i) अपूर्ण, विश्वसनीय, ii) सुपरिवर्ती (fluid), iii) परिवेश iv) संकेत, v) मूर्त

2) i) सही, ii) गलत, iii) गलत, iv) गलत, v) सही

**बोध प्रश्न 3**

1) i) सही, ii). गलत, iii) गलत, iv) गलत, v) सही

2) i) व्यापकता, ii) युक्तियाँ, iii) निश्चित (structured), iv) ढाँचा, v) प्रतिबंधक

## 12.13 अभ्यास के लिए प्रश्न

1) नियोजन की संकल्पना की व्याख्या करें तथा उसकी मुख्य विशेषताएँ बताएँ।

2) निम्नलिखित कथनों के संबंध में अपना मत प्रकट करें:

   क) नियोजन एक व्यापक प्रक्रिया है।

   ख) तेजी से बदलते हुए वातावरण की स्थिति में नियोजन निरर्थक कार्य होता है।

   ग) नियोजन करना तथा निर्णय लेना एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

3) क्या आप इस विचार से सहमत हैं कि नियोजन के कारण संगठन को अवश्य सफलता मिलती है? कारण बताएँ।

4) क्या नियोजन बनाने की क्रिया आवश्यक होती है ? इसे स्पष्ट करें।

5) नियोजन की सीमाएँ इतनी गंभीर हैं कि इनके कारण इसे विश्वसनीय नहीं माना जा सकता। क्या आप इस कथन से सहमत हैं ? क्यों ?

6) सामरिक नियोजन और दीर्घकालिक नियोजन के बीच क्या अंतर है?

7) नियोजन की प्रक्रिया का विवेचन करें।

8) नियोजन आधारिकाएँ (Premises) क्या हैं ? नियोजन के साथ उनका किस प्रकार से संबंध है?

9) नियोजन के लिए पूर्वानुमान को क्यों महत्वपूर्ण माना जाता है ?

10) नियोजन के सिद्धांत की व्याख्या करें।

11) दीर्घकालिक नियोजन से अभिप्राय है, भविष्य को बेहतर बनाने के लिए वर्तमान में निर्णय लेना। इस संबंध में अपना मत प्रकट करें।

12) नियोजन की प्रक्रिया में शीर्षस्थ प्रबंधक वर्ग का क्या योगदान है ?

**टिप्पणी** : ये प्रश्न आपको इस इकाई को अधिक अच्छी तरह समझने में सहायक होंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयत्न कीजिए किन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

# इकाई 13 संगठन : आधारभूत संकल्पनाएँ

**इकाई की रूपरेखा**

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 संगठन कार्य की प्रकृति

  13.2.1 संगठन की विशेषताएँ

  13.2.2 संगठन का महत्व

13.3 संगठन– एक तंत्र के रूप में

13.4 संगठन प्रक्रिया में निहित सोपान

13.5 संगठन ढाँचा

  13.5.1 संगठन ढाँचे का महत्व

  13.5.2 संगठन ढाँचे का प्रकार

13.6 संगठन के सिद्धांत

13.7 नियंत्रण का विस्तार

13.8 संगठन चार्ट

13.9 संगठनात्मक नियम-पुस्तिका

  13.9.1 नियम-पुस्तिकाओं का महत्व

  13.9.2 नियम-पुस्तिकाओं के प्रकार

  13.9.3 नियम-पुस्तिका के गुण और दोष

13.10 औपचारिक और अनौपचारिक संगठन

  13.10.1 औपचारिक और अनौपचारिक संगठनों में अंतर

  13.10.2 अनौपचारिक संगठन की विशेषताएँ

  13.10.3 अनौपचारिक संगठन के कार्य

  13.10.4 अनौपचारिक संगठन की समस्याएँ

13.11 सारांश

13.12 शब्दावली

13.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.14 अभ्यास के लिए प्रश्न

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

## 13.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- संगठन के महत्व को समझ सकेंगे;
- संगठन शब्द की विभिन्न व्याख्याओं का वर्णन कर सकेंगे;
- संगठन ढाँचे के विभिन्न प्रकारों, जैसे कार्यात्मक, खंडीय एवं अनुकूली, में अंतर कर सकेगे;
- किसी भी संगठन के औपचारिक और अनौपचारिक आयामों का विश्लेषण कर सकेंगे; और

- पर्यवेक्षण क्षमता की सीमा, संगठन चार्ट और नियम-पुस्तिका के महत्व को समझ सकेंगे।

## 13.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपको नियोजन के महत्वपूर्ण तत्वों जैसे नीतियाँ, योजनाएँ, कार्यसूचियाँ, और कार्यविधियों के अर्थ और प्रकृति से परिचित कराया गया था। वर्तमान इकाई प्रबंधन के संगठन कार्य और इसके आंगिक पहलुओं (integral aspects) जैसे संगठन ढाँचा, चार्टों, नियम पुस्तिकाओं, औपचारिक और अनौपचारिक संगठन, संगठन के स्वरूप और नियंत्रण-क्षमता की सीमा से संबंधित हैं।

## 13.2 संगठन कार्य की प्रकृति (Nature of Organising Function)

प्रबंधन को एक कार्य के रूप में संगठन बनाने का तात्पर्य ऐसी प्रक्रिया से है जिसमें किये जाने वाले कार्यकलाप को तय करना और वर्गीकृत करना, परिभाषित करना, और अधिकार-दायित्व संबंधों को स्थापित करना सम्मिलित है। इसके परिणामस्वरूप उद्यम के सदस्य इसके उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये मिलकर प्रभावपूर्ण ढंग से कार्य करते हैं। सामान्य अर्थ में, संगठन बनाने में एक उद्यम द्वारा अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये आवश्यक कर्मचारी, सामग्री, मशीन और अपेक्षित धन एवं व्यवस्था सम्मिलित हैं। एक सीमित एवं कार्यात्मक. (operational) अर्थ में, संगठन शब्द का अर्थ नियुक्त व्यक्तियों के कार्यों एवं दायित्वों को परिभाषित करना और यह निश्चित करना है कि उनके कार्यकलाप किस प्रकार आपस में संबंधित हैं। संगठन बनाने का अंतिम परिणाम है विभिन्न पदों पर काम करने वाले व्यक्तियों के कर्त्तव्यों एवं दायित्वों का एक ढाँचा जिसमें वर्गीकरण कार्यकलाप की समानता एवं परस्पर संबंधित प्रकृति के आधार पर किया जाता है। दूसरे शब्दों में, संगठन प्रक्रिया का परिणाम एक संगठन है जिसमें व्यक्तियों का एक समूह आपस में मिलकर एक या अधिक सामान्य उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये कार्य करता है।

### 13.2.1 संगठन की विशेषताएँ

संगठन की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :

1) **व्यक्तियों का समूह** : एक संगठन का निर्माण उस समय होता है जब व्यक्तियों का एक समूह किसी सामान्य उद्देश्य के लिए अपने प्रयत्नों को एक साथ मिला देता है और उसी सामान्य उद्देश्य के लिए स्वेच्छापूर्वक सामान्य प्रबंधन करता है।

2) **काम का विभाजन** : संगठन की स्थापना में सम्पूर्ण काम का विभिन्न कार्यकलाप एवं कार्यों में विभाजन तथा इनका विभिन्न व्यक्तियों को उनकी निपुणता, योग्यता एवं अनुभव के अनुसार सौंपना सम्मिलित है।

3) **सामान्य उद्देश्य** : प्रत्येक संगठन का प्रादुर्भाव उद्यम के लक्ष्यों के आधार पर होता है और ये लक्ष्य नियुक्त व्यक्तियों के व्यक्तिगत लक्ष्यों से अलग होते हैं। संगठन का सामान्य उद्देश्य ही संगठन के सदस्यों में सहयोग का आधार प्रदान करता है।

4) **लम्बवत एवं क्षैतिजिक संबंध** : एक संगठन विभिन्न विभागों एवं खंडों के अतिरिक्त वरिष्ठों एवं अधीनस्थों में सहकारिता संबंध स्थापित करता है। विभिन्न कार्यों एवं कार्यकलाप जैसे, उत्पादन, विपणन, वित्त, आदि का एकीकरण समुचित समन्वय प्राप्त करने के लिये किया जाता है। प्रत्येक विभाग अथवा खंड में वरिष्ठों एवं अधीनस्थों के

कार्यों एवं दायित्वों का भी एकीकरण किया जाता है ताकि उनके संयुक्त प्रयत्नों का उद्देश्य सफल हो सके।

5) **आदेश की श्रृंखला (Chain of Command)** : एक संगठन में वरिष्ठ-अधीनस्थ संबंधों की स्थापना उच्च स्तर के प्रबंधन से अगले निचले स्तर के प्रबंधन को चलाने वाले प्राधिकार के आधार पर होती है जो एक सोपानिक श्रृंखला को जन्म देती है। इसे ही आदेश की श्रृंखला के रूप में जाना जाता है जो सम्प्रेषण की रेखा भी निश्चित करता है।

6) **संगठन की गतिशीलता (Dynamics of Organisation)** : व्यक्तियों में संरचनात्मक संबंधों के अलावा उनके कार्यकलाप एवं कार्यों के आधार पर एक संगठनात्मक अंतःक्रिया भी होती है जो व्यक्तियों और व्यक्ति-समूहों की भावनाओं, रुझानों (attitudes) एवं व्यवहार पर आधारित है। संबंध के पहलू संगठन के कामकाज में एक गतिशील तत्व प्रदान करते हैं। ये समय-समय पर परिवर्तित होते रहते हैं।

### 13.2.2 संगठन का महत्व

एक सुदृढ़ संगठन उद्यम की निरंतरता और सफलता में अत्यधिक योगदान देता है। इसके महत्व की चर्चा नीचे दी गई है :

1) **प्रशासन को सुविधाजनक बनाता है** : सुदृढ़ संगठन प्रबंधन व्यवस्था में वर्णित संसाधनों के व्यापक उद्देश्यों को निरन्तर गति प्रदान करता है। यह एक समुचित मंच प्रदान करता है जहां से प्रबंध व्यवस्था नियोजन, निदेशन, समन्वय, अभिप्रेरण एवं नियंत्रण के कार्यों को पूरा कर सकता है।

2) **विकास एवं विविधीकरण को सुविधाजनक बनाता है** : यह संगठन के विस्तारण में मदद करता है। कार्यकलाप का विकास एवं विविधता, काम का स्पष्ट विभाजन, प्राधिकारों के समुचित प्रत्यायोजन आदि से आसान हो जाता है। जब संगठन एक उचित अनुपात तक विस्तार पाता है तो कार्यात्मक संगठन को एक और लोचदार विकेन्द्रीकृत संगठन द्वारा पुनर्स्थापित किया जा सकता है।

3) **संसाधनों का अनुकूलतम प्रयोग सम्भव बनाता है** : सुदृढ़ संगठन तकनीकी एवं मानवीय संसाधनों का अनुकूलतम प्रयोग करने में सहायक होता है। संगठन नवीनतम तकनीकी सुधारों जैसे कम्प्यूटर, समंकों के प्रक्रियाकरण की विद्युत-तरंग वाली मशीनों (Electronic Data Processing Machine) आदि को अपना अंग बना सकता है। यह विशिष्टीकरण के माध्यम से मानवीय प्रयत्नों का अनुकूलतम प्रयोग सम्भव बनाता है। यह प्रशिक्षण और पदोन्नति के समुचित अवसर प्रदान करके व्यक्तियों का विकास भी करता है। इस प्रकार संगठन एक कंपनी को पूर्वानुमानित आवश्यकताओं की बदली हुई दशाओं का सामना करने के लिए हर सम्भव शक्ति प्रदान करता है।

4) **रचनात्मकता को उत्तेजित (stimulate) करता है** : विशिष्टीकरण सदस्यों को सुस्पष्ट कर्त्तव्यों, प्राधिकार की स्पष्ट रेखाओं एवं दायित्व प्रदान करता है। सुदृढ़ संगठन संरचना प्रबंधकों को इस योग्य बनाती है कि वे नैत्यक एवं पुनरावृत्त कार्यों को सहायक पदों को दे सकें और उन महत्वपूर्ण मामलों पर ध्यान दे सकें जहां वे अपनी योग्यता का अधिक अच्छा प्रयोग कर सकते हैं। इस प्रकार, यह व्यक्तियों की रचनात्मकता को प्रोत्साहित करता है।

5) **मानवतावादी दृष्टिकोण को प्रोत्साहित करता है :** व्यक्ति कार्य-दलों में काम कर सकते हैं न कि रॉबट या मशीनों की भांति। संगठन कार्य के चक्रानुक्रम (job rotation) एवं कार्य विस्तार (job enlargement) तथा समृद्धि (enrichment) प्रदान करता है। कार्यों को मानवीय आवश्यकताओं के अनुरूप सार्थक और दिलचस्प बनाया जाता है। संगठन कर्मचारियों के चयन, प्रशिक्षण, पारिश्रमिक और पदोन्नति की कुशल पद्धतियों को अपनाता है। समुचित प्रत्यायोजन (proper delegation) और विकेन्द्रीकरण प्रेरक कार्यकारी माहौल और प्रजातांत्रिक तथा भागीदारी नेतृत्व कर्मचारियों को अपने काम में अधिकाधिक संतोष प्रदान करते हैं। यह प्रबंधन के विभिन्न स्तरों में अंतःक्रिया को बढ़ाता है।

यद्यपि हमने ऊपर संगठन के महत्व का विवेचन किया है लेकिन एक सुदृढ़ संगठन ढाँचा अपने आप में सफलता की गारंटी नहीं दे सकता है। प्रोफेसर ड्रकर के अनुसार अच्छा संगठन ढाँचा अपने आप अच्छा निष्पादन नहीं दे सकता है– ठीक उसी प्रकार जैसे एक अच्छा संविधान महान राष्ट्रपति अथवा अच्छे कानून अथवा एक नैतिक समाज की गारंटी नहीं दे सकता है। परंतु एक अक्षम (poor) संगठन ढाँचा अच्छा निष्पादन असम्भव बना देता है, चाहे संगठन के सदस्य कितने भी अच्छे क्यों न हों।

## 13.3 संगठन– एक तंत्र के रूप में (Organisation as a System)

तंत्र की अवधारणा यह मानती है कि संगठन ऐसी उप-इकाइयों से बनते हैं जिनमें से प्रत्येक की खास विशेषताएँ, योग्यताएँ और आपसी संबंध होते हैं। यह तंत्र के महत्व को और अधिक मानता है और इस बात पर जोर देता है कि विभिन्न अवयवों से बना एक समग्र इसके अवयवों के साधारण गणितीय योग से बिल्कुल भिन्न होगा। "तंत्र" शब्द की विभिन्न परिभाषाएँ दी गई हैं। अधिकांश परिभाषाएँ "जटिल समग्र", "अधिकारों का समूह, संबंधों का समूह", "संसाधन नेटवर्क" "परस्पर संबंधित हिस्सों का पिंड'' आदि शब्दों का प्रयोग करती हैं। अपने विश्लेषण के लिए हम तंत्र की परिभाषा इस प्रकार दे सकते हैं: तंत्र विभिन्न भागों के बीच के संबंधों का समूह हैं जिसका प्रचालन एक पूर्ण रूप में होता है। एक संगठन जिसे तंत्र के रूप में देखा जाता है वह बहुत से परस्पर निर्भर तथा परस्पर संबंधित अवयवों से बना है जिसे उपतंत्र कहा जाता है। प्रत्येक उपतंत्र अपने आप में एक तंत्र है जो छोटे-छोटे अंतर्संबंधित अवयवों या उपतंत्रों से बना होता है।

### एक संगठन के अवयव

एक सामाजिक तंत्र के रूप में संगठन के निम्नलिखित अवयव हैं:

1) आगत (**Inputs**) : जैसा चित्र 13.1 में दिखाया गया है, तंत्र पर्यावरण से निश्चित आगतों को लेता है। ये आगत हैं: मानवीय संसाधन, भौतिक संसाधन, ऊर्जा एवं सूचना।

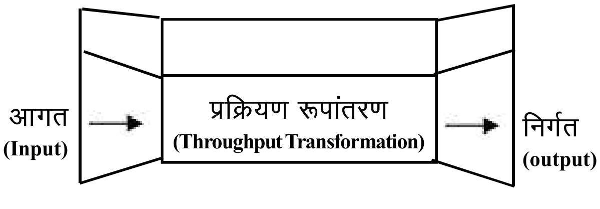

चित्र 13.1 : संगठन एक तंत्र के रूप में

2) **प्रक्रिया** : प्रक्रिया अथवा प्रक्रियण (processer) के माध्यम से संस्था में निवेशों का उपयोग वांछित निर्गतों को उत्पादित करने के लिये किया जाता है। प्रक्रिया अर्थात् प्रक्रियण के लिये कई उपतंत्रों, जैसे उत्पादन, विपणन, वित्त, कर्मचारी और शोध तथा विकास को बनाना आवश्यक है। प्रत्येक उपतंत्र को पुनः उपतंत्रों में विभाजित किया जा सकता है। व्यक्तिगत कर्मचारी भी एक उपतंत्र है जो बहुसंख्यक भौतिक एवं मनोवैज्ञानिक उपतंत्रों से बना है। विभिन्न उपतंत्रों के परस्पर संबंध को सर्वत्र ध्यान में रखना आवश्यक है।

3) **निर्गत (Output)** : एक संगठन का निर्गत अभीष्ट और गैर-अभीष्ट (unintended) दोनों ही हो सकता है। अभीष्ट निर्गत सामान्यतः वर्गीकृत उद्देश्य होते हैं। उदाहरण के लिये, उच्च उत्पादकता एक वर्गीकृत उद्देश्य है। निर्गत वस्तुएँ या सेवाएँ दोनों ही हो सकता है। एक गैर-अभीष्ट निर्गत दल के सदस्यों के बीच अनौपचारिक संबंध हो सकता है।

4) **प्रबंधन व्यवस्था** : तंत्र का प्रबंधकीय अवयव अभीष्ट निर्गत को प्राप्त करने के लिये प्रक्रिया के कार्यों के निश्चयन और क्रियान्वयन से संबंधित है। प्रबंधन के अंतर्गत नियोजन संगठन, नियुक्तियाँ, निर्देशन और नियंत्रण के कार्य सम्मिलित हैं। प्रबंधन करने के लिये, तंत्र के निर्गत की किस्म, लागत, मात्रा और समय से संबंधित पुनः निवेशन आवश्यक है। प्रबंधकों के लिये यह आवश्यक है कि वे किस्म, मात्रा, लागत और समय के पुनः निवेशन (feedback) द्वारा वांछित परिणामों से सम्बद्ध मानकों का निश्चयन एवं क्रियान्वयन करें। पुनः निवेशन क्रिया (feed-back-initiation activity) को सक्रिय बना कर भी प्रबंधकों को वांछित परिणामों से सम्बद्ध मानकों का निश्चयन एवं क्रियान्वयन करना चाहिए। यदि पूर्वनिर्धारित मानकों के अनुसार निर्गत अनुपयुक्त अथवा अपर्याप्त लगते हैं तो सुधारक उपाय, जैसे कर्मचारियों का पथप्रदर्शन अथवा उन्हें चेतावनी, आयोजन और संगठन में सुधार, मानकों का पुनरीक्षण आदि, किये जा सकते हैं।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

## 13.4 संगठन प्रक्रिया में निहित सोपान

संगठन में निम्नलिखित अंतर्संबंधित सोपान सम्मिलित हैं :

1) **उद्देश्यों का निर्धारण** : संगठन का संबंध हमेशा किन्हीं उद्देश्यों से होता है। इसलिए प्रबंध व्यवस्था के लिये यह आवश्यक है कि कोई भी कार्य प्रारम्भ करने से पहले वह उद्देश्यों को निर्धारित कर ले। यह प्रबंधन को कर्मचारियों एवं सामग्री के चुनाव में सहायता देगा जिससे वह अपने उद्देश्यों को प्राप्त कर सकता है। उद्देश्य प्रबंध व्यवस्था और कार्यकर्त्ताओं के लिए पथप्रदर्शक का काम भी करते हैं। वे संगठन में निर्देशन की एकता को लाएँगे।

2) **कार्यकलाप का तादात्मीकरण एवं वर्गीकरण** : यदि दल के सदस्य अपने प्रयत्नों को प्रभावपूर्ण ढंग से इकट्ठा करना चाहते हैं तो प्रमुख कार्य का उचित विभाजन होना आवश्यक है। प्रत्येक काम का उचित विभाजन एवं वर्गीकरण आवश्यक है। इससे सदस्य यह जान सकेंगे कि दल के सदस्य के रूप में उनसे क्या आशा की जाती है और इससे प्रयत्नों के दोहरेपन से भी बचा जा सकता है। उदाहरण के लिए, एक व्यक्तिगत औद्योगिक संगठन के कुल कार्यों को प्रमुख कार्यों में जैसे उत्पादन, क्रय, विपणन और वित्त में विभाजित किया जा सकता है और ऐसे प्रत्येक कार्य को पुनः कई भिन्न कामों में बांटा जा सकता है। इसके पश्चात् प्रत्येक काम क़ा विभाजन एवं

वर्गीकरण किया जा सकता है ताकि दूसरे कदमों का प्रभावपूर्ण कार्यान्वयन किया जा सके।

3) **कर्त्तव्यों का आवंटन** : कार्यों को विभिन्न भागों में वर्गीकृत और समूहीकृत कर लेने के बाद उन्हें व्यक्तियों को आवंटित किया जाना चाहिए ताकि वे उनका प्रभावशाली निष्पादन कर सकें। प्रत्येक व्यक्ति को उसकी क्षमता के अनुसार विशिष्ट काम करने के लिये दिया जाना चाहिए और उसे उसके लिये उत्तरदायी बनाया जाना चाहिए। उसे जो काम सौंपा गया है उसे पूरा करने के लिये पर्याप्त अधिकार भी उसे दिए जाने चाहिए।

4) **संबंधों को विकसित करना** : चूँकि एक ही संगठन में बहुत से व्यक्ति काम करते हैं। अतः संगठन में संबंधों का ढाँचा स्थापित करना प्रबंध की जिम्मेदारी है। प्रत्येक व्यक्ति को यह स्पष्ट रूप से पता होना चाहिए कि वह किसके प्रति उत्तरदायी है। यह प्राधिकार और दायित्व के प्रत्यायोजन को सुविधाजनक बनाकर उद्यम के निर्विघ्न परिचालन में सहायता करता है।

5) **कार्यों के इन वर्गों का एकीकरण** : सारे दल के कार्यों में एकीकरण निम्न ढंग से प्राप्त किया जा सकता है – (क) प्राधिकार संबंधों के माध्यम से – क्षैतीजीय, लम्बवर्तीय और पाश्विक रूप से, तथा (ख) संगठित सूचना या सम्प्रेषण व्यवस्था के माध्यम से, अर्थात्, प्रभावपूर्ण समन्वय एवं सम्प्रेषण की सहायता से। विभिन्न कार्यों के एकीकरण द्वारा हम उद्देश्यों की एकता, टीम-कार्य एवं टीम-भावना प्राप्त कर सकते हैं।

## 13.5 संगठन ढाँचा (Organisation Structure)

संगठन ढाँचे को किसी संगठन के अवयव भागों के बीच में संबंधों के स्थापित प्रतिरूप के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इस अर्थ में संगठन ढाँचे से तात्पर्य किसी संगठन के विभिन्न सदस्यों एवं पदों के बीच में संबंधों के तंत्र से है। यह संगठन की संरचना को बतलाता है। जिस प्रकार मानव शरीर में अस्थि पंजर समष्टिज (parameters) को परिभाषित करते हैं उसी प्रकार संबंधों का ढाँचा संगठन के समष्टिज को परिभाषित करता है। यह एक भवन की वास्तुकला की योजना के समान है। जिस प्रकार वास्तुशिल्पी एक अच्छा ढाँचा तैयार करते समय विभिन्न तत्वों, जैसे लागत, स्थान आवश्यक विशिष्ट विशेषताओं आदि पर ध्यान देता है। उसी प्रकार प्रबंधकों को भी संगठन ढाँचा तैयार करने से पहले विभिन्न तत्वों जैसे विशिष्टीकरण के लाभ, सम्प्रेषण की समस्याएँ, प्राधिकार-स्तरों की रचना में कठिनाइयों, आदि पर विचार करना जरूरी है।

प्रबंधक किसी काम को पूरा कराने के लिये संबंधित कार्यों को निश्चित करता है, कार्य-विवरण लिखता है और व्यक्तियों को दलों में संगठित करता है तथा उन्हें वरिष्ठों के साथ लगाता है। तत्पश्चात वह लक्ष्यों एवं सीमा रेखा और निष्पादन के मानक निर्धारित करता है। कार्यों का नियंत्रण एक सूचना-व्यवस्था के द्वारा किया जाता है। सम्पूर्ण संगठन ढाँचा एक पिरामिड का रूप लेता है। संरचनात्मक संगठन में निम्नलिखित तत्व निहित हैं :

i) सुपरिभाषित कर्त्तव्यों और दायित्वों के साथ औपचारिक संबंध

ii) संगठन के अंतर्गत वरिष्ठों एवं अधीनस्थों के बीच सोपानिक संबंध

iii) विभिन्न व्यक्तियों एवं विभागों को काम सौंपना

iv) विभिन्न कामों और कार्यकलाप का समन्वय

v) निष्पादन के मूल्यांकन के लिये नीतियों, कार्यविधियों, मानकों एवं तरीकों का एक सेट बनाना जिन्हें व्यक्तियों और उनके कार्यकलाप के पथप्रर्शन के लिये बनाया जाता है।

जानबूझकर बनाई गई व्यवस्था ही संगठन का औपचारिक ढाँचा है। परंतु व्यक्तियों के वास्तविक कार्यकलाप और व्यवहार सदा संबंधों के औपचारिक ढाँचे द्वारा नियंत्रित नहीं होते हैं। इस प्रकार औपचारिक व्यवस्था प्रायः सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक शक्तियों द्वारा परिवर्तित कर दी जाती है और कार्यरत ढाँचा संगठन का आधार प्रस्तुत करता है।

### 13.5.1 संगठन ढाँचे का महत्व

संगठन ढाँचा संगठनों की सुचारू कार्यप्रणाली में निम्नलिखित ढंग से योगदान करता है :

1) **सुस्पष्ट प्राधिकार संबंध** : संगठन ढाँचा प्राधिकार और दायित्व का आवंटन करता है। यह सुनिश्चित करता है कि कौन किसे निर्देश देगा और कौन किस परिणाम के लिये उत्तरदायी है। ढाँचा संगठन के प्रत्येक सदस्य को यह जानने में सहायता करता है कि उसकी भूमिका क्या है और अन्य भूमिकाओं से यह किस प्रकार संबंधित है।

2) **सम्प्रेषण का प्रतिरूप** : संगठन ढाँचा सम्प्रेषण और समन्वय का प्रतिरूप प्रदान करता है। कार्यों और व्यक्तियों का वर्गीकरण करके ढाँचा अपने रोजगार कार्यों में लगे व्यक्तियों में सम्प्रेषण को सुविधाजनक बनाता है। जिन व्यक्तियों की संयुक्त समस्याएँ होती हैं प्रायः उन्हें सुलझाने के लिए सूचनाओं के आदान-प्रदान की आवश्यकता होती है।

3) **निर्णय केन्द्रों का स्थान** : संगठन ढाँचा संगठन में निर्णय लेने के केन्द्रों का स्थल निर्धारित करता है। उदाहरण के लिये, एक विभागीय भण्डार एक ऐसा ढाँचा अपना सकता है जिसमें कीमत निर्धारण, विक्रय प्रवर्तन तथा अन्य मामले अधिकांशतः व्यक्तिगत विभागों के सुपुर्द कर दिये जाते हैं ताकि विभिन्न विभागीय दशाओं पर विचार सुनिश्चित किया जा सके।

4) **समुचित संतुलन** : संगठन ढाँचा समुचित संतुलन बनाता है और वर्गीकृत कार्यों के समन्वय पर बल देता है। उद्यम की सफलता के लिये अधिक नाजुक पहलुओं को संगठन में अधिक वरीयता दी जा सकती है। उदाहरण के लिए, दवाइयों की एक कंपनी में शोध कार्य को पृथक किया जा सकता है ताकि इसकी निष्पादन सूचना कंपनी के सामान्य प्रबंधक अथवा प्रबंध संचालक को दी जाए। तुलनीय महत्व के कार्यकलापों को ढाँचे में लगभग समान स्तर प्रदान किया जा सकता है ताकि उन पर बराबर बल दिया जा सके।

5) **रचनात्मकता को प्रोत्साहित करना** : सुदृढ़ संगठन ढाँचा अधिकारों के सुपरिभाषित प्रतिरूप को प्रदान कर संगठन के सदस्यों में रचनात्मक चिंतन एवं पहल को प्रोत्साहित करता है। प्रत्येक व्यक्ति, यह जानता है कि वह किस क्षेत्र में विशेषज्ञ है और कहाँ उसके प्रयत्नों की प्रशंसा की जाएगी।

6) **वर्धन को प्रोत्साहित करना** : एक संगठन ढाँचा ऐसी संरचना प्रदान करता है जिसके अंतर्गत एक उद्यम कार्य करता है। यदि यह लोचनीय है तो वर्धन की चुनौतियों का सामना करने एवं अवसर प्रदान करने में यह सहायता करेगा। एक सुदृढ़ संगठन कार्यकलाप के बढ़े हुए स्तर को सम्भालने की उद्यम की क्षमता को बढ़ाकर इसके वर्धन को सुविधाजनक बनाता है।

7) **प्रौद्योगिकी सुधारों का प्रयोग करना** : एक सुदृढ़ संगठन ढाँचा जो परिवर्तनों के अनुरूप हो सकता है, नवीनतम प्रौद्योगिकी (latest technology) का सर्वोत्तम सम्भव प्रयोग कर सकता है। यह प्रौद्योगिकीय सुधारों के साथ वर्तमान प्राधिकार-दायित्व संबंधों के प्रतिरूप में परिवर्तन कर देगा।

संक्षेप में, बेहतर प्रबंधन के लिए एक अच्छे संगठन ढाँचे का होना आवश्यक है। समुचित रूप से बनाया गया संगठन एक ऐसी संरचना प्रदान करता है जो टीम वर्क और उत्पादकता को सुधारने में सहायता कर सकता है, जिसमें व्यक्ति एक साथ मिलकर सर्वाधिक प्रभावशाली ढंग से काम कर सकते हैं। इसलिए संगठन के व्यक्तियों की आवश्यकताओं के अनुसार संगठन ढाँचा का विकास किया जाना चाहिए।

### 13.5.2 संगठन ढाँचे के प्रकार

कार्यों के विन्यास के आधार पर विभिन्न प्रकार के संगठन ढाँचों में अंतर किया जा सकता है। इस प्रकार संगठनात्मक स्वरूपों के तीन प्रमुख प्रकार हैं :

1) कार्यात्मक
2) खंडीय और
3) अनुकूली

**कार्यात्मक ढाँचा (Functional Structure)** : जब एक संगठन में इकाइयाँ और उप-इकाइयाँ कार्यों के आधार पर बनायी जाती हैं तो इसे कार्यात्मक ढाँचा कहा जाता है। इस प्रकार किसी भी औद्योगिक संगठन में निर्माण, विपणन, वित्त एवं कार्मिक जैसे विशिष्ट कार्य संगठन की अलग इकाई के रूप में बनाए जाते हैं। ऐसे प्रत्येक कार्य से संबंधित सभी कार्यकलाप एक ही इकाई में सम्मिलित किये जाते हैं। जैसे-जैसे कार्यकलाप की मात्रा बढ़ती जाती है, प्रत्येक इकाई में निचले स्तरों पर उप-इकाइयाँ बना दी जाती हैं और विभिन्न स्तरों पर प्रत्येक प्रबंधक के अधीन व्यक्तियों की संख्या बढ़ जाती है। इसके परिणामस्वरूप परस्पर संबंधित पद एक पिरामिड के आकार के हो जाते हैं। नीचे चित्र में एक मध्यम आकार के संगठन का कार्यात्मक ढाँचा दिखाया गया है:

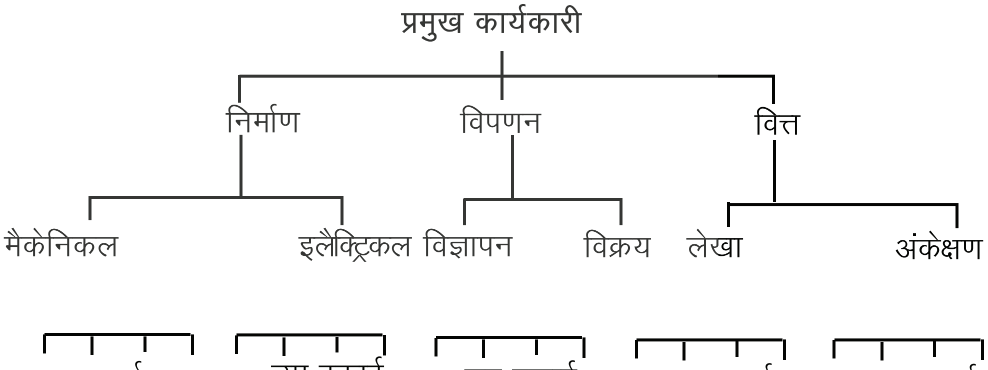

चित्र 13.2 : कार्यात्मक ढाँचा

संगठन के कार्यात्मक ढाँचे का प्रमुख लाभ प्रत्येक इकाई में होने वाला कार्यात्मक विशिष्टीकरण है, जिससे काम पर लगे व्यक्तियों की कार्यक्षमता में वृद्धि होती है और सम्पूर्ण संगठन, क्रियाओं के विशिष्टीकरण का लाभ प्राप्त करता है। कार्यात्मक इकाइयों के प्रधान प्रमुख कार्याधिकारी के सम्पर्क में होते हैं जो अंतर्विभागीय समस्याओं का समाधान कर

सकता है और परस्पर संबंधित कार्यों का समन्वय कर सकता है। प्रमुख कार्याधिकारी निचले स्तर के अधीनस्थों के भी प्रत्यक्ष सम्पर्क में होता है जिससे उसे संगठन की गतिविधियों के बारे में पूर्ण जानकारी हो जाती है।

तथापि कभी-कभी कार्यात्मक विन्यास लघु एवं मध्य आकार के संगठनों के लिये उपयुक्त हो सकता है। यह एक ऐसे संगठन की समस्याओं से निपटने में असमर्थ होता है जैसे ही आकार और जटिलता में वृद्धि होती है – निचले स्तरों की उप-इकाइयों की समस्याओं पर उच्च स्तरीय प्रबंधक पर्याप्त ध्यान नहीं दे पाते जबकि कुछ कार्यकलाप पर अधिक बल दिया जाता है।

कार्यात्मक इकाइयों का प्रबंधन एवं नियंत्रण उस समय अधिक कठिन हो जाता है जब बहुत सी उप-इकाइयों में विविध प्रकार के कार्य किये जाते हैं। वरिष्ठों एवं अधीनस्थों में व्यक्तिगत सम्पर्क दुर्लभ हो जाता हैं एवं सम्प्रेषण का प्रवाह धीमा पड़ जाता है जिसके परिणामस्वरूप समन्वय एवं नियंत्रण में कठिनाइयाँ आ जाती हैं।

**खंडीय ढाँचा (Divisional Structure)** : खंडीय संगठन ढाँचा बहुत बड़े उद्यमों के लिये, विशेषकर उनके लिये जो एक से अधिक विशिष्ट बाजारों में काम करने के लिये विविध उत्पादों में लेन-देन करते हैं अधिक उपयुक्त है। तत्पश्चात् संगठन को छोटी-छोटी व्यावसायिक इकाइयों में बाँट दिया जाता है और इन्हें विभिन्न उत्पादों अथवा विभिन्न बाजार-क्षेत्रों से संबंधित व्यवसाय सौंप दिया जाता है। दूसरे शब्दों में, स्वतंत्र खंडों (उत्पाद खंड या बाज़ार खंड) की रचना प्रधान कार्यालय के व्यापक नियंत्रण के अंतर्गत की जाती है। प्रत्येक खंडीय प्रबंधक को एक निश्चित उत्पाद, बाज़ार खंड, या क्षेत्रीय बाज़ार से संबंधित सभी कार्यों को चलाने के लिये स्वायत्ता प्रदान की जाती है। इस प्रकार, प्रत्येक खंड के जिम्में कई एक सहायक कार्य भी हो सकते हैं।

एक खंडीय ढाँचे में दो या अधिक उत्पाद खंड या बाजार या क्षेत्रीय खंड हो सकते हैं, जैसा कि चित्र 13.3 और 13.4 में दिखाया गया है।

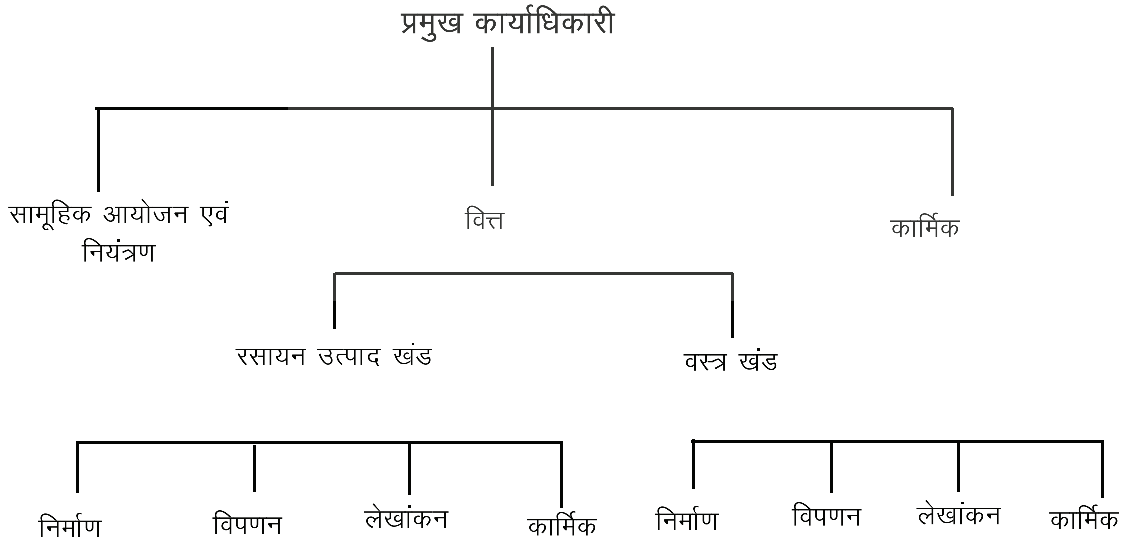

चित्र 13.3 : उत्पाद खंडीकरण

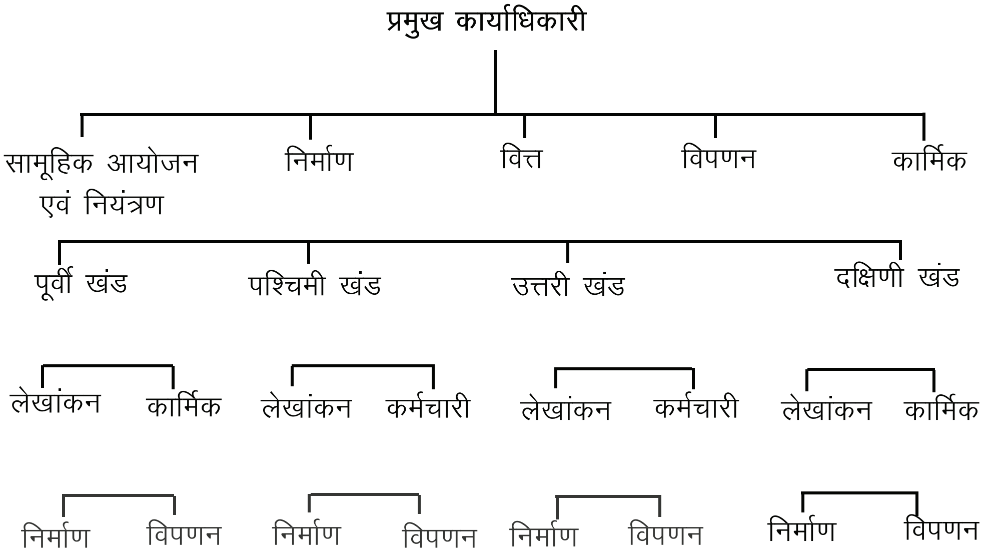
प्रमुख कार्याधिकारी
सामूहिक आयोजन एवं नियंत्रण
निर्माण
वित्त
विपणन
कार्मिक
पूर्वी खंड
पश्चिमी खंड
उत्तरी खंड
दक्षिणी खंड
लेखांकन
कार्मिक
लेखांकन
कर्मचारी
लेखांकन
कर्मचारी
लेखांकन
कार्मिक
निर्माण
विपणन
निर्माण
विपणन
निर्माण
विपणन
निर्माण
विपणन

चित्र 13.4 : क्षेत्रीय खंडीकरण

एक खंडीय ढाँचे में प्रत्येक खंड संगठन को नियोजित लाभ का योगदान देता है, परंतु सभी मामलों में एक स्वतंत्र व्यवसाय की भांति कार्य करता है। कार्यात्मक इकाइयों के प्रधान प्रबंधक होते हैं जबकि अंतिम अधिकार खंडीय प्रबंधक के हाथ में होता है जो खंड की विभिन्न कार्यात्मक इकाइयों के कार्यकलापों का समन्वय एवं नियंत्रण करता है। संगठन का सर्वोच्च अधिकारी धन प्रदान करने के अलावा संगठन के लक्ष्यों को निर्धारित करता है और कार्य-नीतियों को बनाता है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

खंडीय ढांचे की प्रमुख विशेषता प्राधिकार का विकेन्द्रीकरण है। इस प्रकार यह प्रबंधकों को शीघ्र निर्णय लेने एवं खंडों के अनुरूप समस्याओं के समाधान करने में समर्थ बनाता है। यह खंडीय प्रबंधकों को अपने अधिकार क्षेत्र से सम्बन्धित मामलों में पहल करने के अवसर भी प्रदान करता है। परंतु इस प्रकार के ढाँचे की वित्तीय लागत बहुत ज्यादा होती है क्योंकि इसमें खंडों के लिये सहायक कार्यकारी इकाइयों का दोहरापन होता है। साथ ही, इसमें विभिन्न खंडों एवं उनकी कार्यात्मक इकाइयों को सम्भालने के लिए पर्याप्त संख्या में प्रबंधकों की आवश्यकता होती है।

**अनुकूली ढाँचा (Adaptive Structure)** : संगठन ढाँचों की रचना प्रायः उपक्रम और परिस्थिति की विलक्षण प्रकृति का सामना करने के लिये की जाती है। इस प्रकार का ढाँचा अनुकूली ढाँचा कहलाता है। इस प्रकार के ढाँचे दो निम्न प्रकार के हैं :

1) प्रोजेक्ट संगठन
2) मैट्रिक्स संगठन

1) **प्रोजेक्ट संगठन (Project Organisation)** : जब एक उद्यम कोई विशिष्ट एवं समय-बद्ध ऐसा काम लेता है जिसमें लम्बी अवधि में काम एक ही बार में पूरा किया जाना है तो प्रोजेक्ट संगठन सर्वाधिक उपयुक्त पाया जाता है। ऐसी स्थिति में प्रचलित संगठन एक विशेष इकाई की रचना करता है ताकि संगठन के नियमित कार्य में विघ्न डाले बिना प्रोजेक्ट के काम को किया जा सके। यह उस समय आवश्यक हो जाता है जब उसके बिना विशिष्ट काम या प्रोजेक्ट का पूरा किया जाना सम्भव नहीं है। प्रचलित संगठन ढाँचे के अंतर्गत, प्रोजेक्ट में एक नये उत्पाद का विकास, एक प्लांट का लगाना, एक कार्यालय संकुल का निर्माण, आदि सम्मिलित हो सकते हैं। प्रोजेक्ट

संगठन का प्रधान प्रोजेक्ट प्रबंधक होता है जो मध्य स्तर का प्रबंधक है और सीधे प्रमुख कार्याधिकारी को प्रतिवेदन करता है। प्रोजेक्ट संगठन के लिये अन्य प्रबंधक और कार्मिक मूल संगठन के कार्यात्मक विभागों से लिये जाते हैं और प्रोजेक्ट के पूरा हो जाने पर वे अपने मूल विभागों में वापस चले जाते हैं।

इस प्रकार की संरचना व्यवस्था का प्रमुख लाभ यह है कि इससे नियमित व्यवसाय में कोई बाधा नहीं आती है। यह केवल प्रोजेक्ट के काम को समय पर एवं उसके लक्ष्यों के संगत निष्पादन मानकों के अनुसार पूरा करने से सम्बद्ध है। प्रोजेक्ट के कार्यों का बेहतर प्रबंधन और नियंत्रण होता है क्योंकि प्रोजेक्ट प्रबंधक को आवश्यक अधिकार मिले होते हैं और वह अकेले ही परिणामों के लिये उत्तरदायी होता है। लेकिन प्रोजेक्ट संगठन समस्याओं को भी पैदा कर सकता है। कार्यात्मक प्रबंधक कार्यात्मक क्षेत्रों में प्रोजेक्ट प्रबंधक के अधिकार के प्रयोग में लाने से प्रायः नाराज होते हैं और इस प्रकार संघर्ष उत्पन्न होता है। समय-समय पर कार्मिकों के प्रोजेक्ट के काम से स्थानान्तरण से कार्यात्मक विभागों के स्थायित्व में विघ्न पड़ता है। कर्मचारियों को एक प्रोजेक्ट से दूसरे प्रोजेक्ट पर बदलते रहने के कारण उनका विशिष्ट क्षेत्र के विकास में बाधा पड़ती है।

2) **मैट्रिक्स संगठन (Matrix Organisation)** : यह अनुकूली संगठन ढाँचे का दूसरा प्रकार है जिसका उद्देश्य स्वायत्त प्रोजेक्ट संगठन और कार्यात्मक विशिष्टीकरण के लाभों को एक साथ प्राप्त करना है। मैट्रिक्स संगठन ढाँचे में कार्यात्मक विभाग होते हैं जिनमें विभिन्न प्रोजेक्टों में काम करने के लिये विशिष्ट कर्मचारी प्रतिनियुक्त किये जाते हैं। कई बार ये कर्मचारी एक से अधिक प्रोजेक्टों में प्रोजेक्ट प्रबंधक के व्यापक निर्देशन एवं पथप्रदर्शन में काम करते हैं। जब एक प्रोजेक्ट का काम पूरा हो जाता है तो इसमें लगे व्यक्ति अपने कार्यात्मक विभागों में वापस चले जाते हैं जहां से उन्हें फिर किसी अन्य प्रोजेक्ट में भेज दिया जाता है। यह विन्यास उन स्थितियों में उपयुक्त पाया जाता है जहां संगठन ठेके वाले प्रोजेक्ट कार्य में लगा है और अनेकों प्रोजेक्टों का प्रबंधन किया जाता है, जैसे कि एक बड़ी भवन निर्माण कंपनी या इंजीनियरिंग इकाई में।

मैट्रिक्स संगठन परिवर्तनीय दशाओं की आवश्यकताओं के लिए आदर्श रूप से उपयुक्त एक लोचनीय ढाँचा देता है। यह विभिन्न विभागों से विशिष्ट एवं तकनीकी कार्मिकों को एक जगह मिलाने में सुविधा प्रदान करता है ताकि इन्हें कई प्रोजेक्टों में प्रतिनियुक्त किया जा सके। उन्हें प्रोजेक्ट के काम में विविध जटिल समस्याओं से निपटने का बहुमूल्य अनुभव होता है। इससे सूचनाओं और निर्णयों का तत्काल आदान-प्रदान होता है। क्योंकि वे प्रोजेक्ट प्रबंधक के समन्वय-अधिकार के अंतर्गत काम करते हैं।

मैट्रिक्स संगठन का सबसे बड़ा दोश यह है कि विशिष्ट कार्यात्मक विभागों से लिये गये कर्मचारी दोहरी सत्ता के अधीन होते हैं – कार्यात्मक प्रधानों एवं प्रोजेक्ट प्रबंधकों के। इस प्रकार आदेश की एकता सिद्धांत का उल्लंघन होता है। यह प्रोजेक्ट प्रबंध में दबाव एवं तनाव पैदा करता है क्योंकि यहाँ एक ही व्यक्ति एक साथ कई प्रोजेक्टों में लगा होता है।

**बोध प्रश्न 1**

1) निम्नलिखित में से कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत।

   i) संगठन प्रक्रिया का परिणाम एक संगठन है, जो सामान्य लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए एक साथ मिलकर काम करने वाले व्यक्तियों के एक दल से बनता है।

   ii) आदेश की श्रृंखला सम्प्रेषण का समय इंगित नहीं करती है।

   iii) एक संगठन का औपचारिक ढाँचा सामाजिक अथवा मनोवैज्ञानिक शक्तियों द्वारा प्रभावित नहीं होता है।

   iv) संगठन का खंडीय ढाँचा प्राधिकार के विकेन्द्रीकरण द्वारा प्रतिलक्षित होता है।

   v) प्रोजेक्ट संगठन समय-बद्ध एक बार किये जाने वाले कार्यों से संबंधित है।

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

   i) एक तंत्र के रूप में, एक संगठन .......................................... भागों से बनता है जिन्हें उप-तंत्र कहा जाता है।

   ii) वह संगठन प्रक्रिया ही है जिसके द्वारा व्यक्तियों के .................................... और .................................................................... निश्चित होते हैं।

   iii) संगठन ढाँचा .......................................... और ............................................. के बीच सोपानिक संबंधों की स्थापना करता है।

   iv) कार्यों की मात्रा में वृद्धि के साथ एक कार्यात्मक संगठन में .......................... इकाइयों पर उप-इकाइयों को बढ़ाने की आवश्यकता होती है।

   v) संगठन का खंडीय ढाँचा ....................................................... उद्यमों के लिये अधिक उपयुक्त है।

## 13.6 संगठन के सिद्धांत

संगठन के सिद्धांत एक कार्यक्षम संगठन ढाँचे के आयोजन में पथप्रदर्शक हैं। हम अब संगठन के महत्वपूर्ण सिद्धांतों का विवेचन करेंगे।

1) **उद्देश्यों की रूपता (Unity of objectives)** : एक उद्यम कुछ ख़ास उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास करता है। संगठन और इसका प्रत्येक अंग उद्देश्यों की प्राप्ति की ओर निर्देशित होना चाहिए। संगठन के प्रत्येक सदस्य को इसके लक्ष्यों एवं उद्देश्यों से, परिचित होना चाहिए। संगठन में उद्देश्यों की एकता का होना आवश्यक है ताकि सभी प्रयत्न निर्धारित लक्ष्यों पर केन्द्रित किये जा सकें। इस सिद्धांत में इस बात की आवश्यकता है कि उद्देश्यों को स्पष्टतः प्रतिपादित किया जाए और अच्छी तरह समझा जाए।

2) **काम का विभाजन और विशिष्टीकरण** : संगठन में सम्पूर्ण काम को विभिन्न भागों में बाँटना चाहिए ताकि प्रत्येक व्यक्ति केवल एक काम के निष्पादन के लिये उत्तरदायी हो यह विशिष्टीकरण को सुविधाजनक बनाता है, जिससे कार्यक्षमता एवं गुणवत्ता में वृद्धि होती है। परंतु विशिष्टीकरण का प्रत्येक क्षेत्र सभी विभागों के सभी कार्यों में समन्वय के द्वारा सम्पूर्ण एकीकृत तंत्र से परस्पर संबंधित होना चाहिए।

3) **जॉब की परिभाषा** : संगठन में प्रत्येक पद संगठन के अन्य पदों के संदर्भ में स्पष्टतः परिभाषित होना चाहिए। प्रत्येक पद को सौंपे गये कर्त्तव्यों और दायित्वों और इसका

अन्य पदों से संबंध इस प्रकार परिभाषित किया जाना चाहिए कि कार्यों में दोहरापन न हो जाए।

4) **रेखा और स्टाफ कार्यों में अलगाव (Separation of line and staff functions)** : जब भी संभव हो, रेखा कार्यों को स्टाफ कार्यों से अलग करना चाहिए। रेखा कार्य वे हैं जो कंपनी के प्रमुख उद्देश्यों को पूरा करते हैं। अनेकों निर्माण कंपनियों में निर्माण एवं विक्रय विभागों को मुख्य उद्देश्य को प्राप्त करने वाले विभाग के रूप में समझा जाता है और इसीलिए इन्हें रेखा कार्य कहा जाता है। कार्मिक, प्लांट का रखरखाव, वित्त, कानून आदि जैसे अन्य कार्य सहायक कार्य माने जाते हैं।

5) **आदेश की श्रृंखला या सौपानिक सिद्धांत (Chain of command or scalar principle)** : संगठन के शीर्ष भाग से निम्नतम भाग तक जाती हुई प्राधिकार रेखा स्पष्ट होनी चाहिए। प्राधिकार का अर्थ है निर्णय लेना, निर्देश देने और समन्वय करने का अधिकार। संग़ठन ढाँचा ऐसा होना चाहिए जो प्राधिकार के प्रत्यायोजन को आसान बनाए। शीर्ष पद से कार्यकारी पद तक स्तरों अथवा श्रेणियों में प्रत्यायोजन से स्पष्टता प्राप्त होती है। प्राधिकार रेखा प्रमुख कार्याधिकारी से विभागीय प्रबंधकों, पर्यवेक्षकों या फोरमैनों और अंतःकर्मचारियों तक जा सकती है। आदेश की यह श्रृंखला संगठन के सोपानिक सिद्धांत के नाम से भी जानी जाती है।

6) **प्राधिकार और दायित्व की एकरूपता या सामन्जस्य का सिद्धांत** : दायित्व सर्वदा प्राधिकार के अनुरूप होना चाहिए। प्रत्येक अधीनस्थ के पास पर्याप्त प्राधिकार होने चाहिए ताकि वह अपने दायित्व को ठीक ढंग से निभा सके। इस सिद्धांत के अनुसार यदि एक बहु-प्लांट संगठन एक प्लांट प्रबंधक को सभी कार्यों के लिए उत्तरदायी ठहराया जाता है तो अपने दिन प्रति दिन के कार्यों के लिए उसे कंपनी मुख्यालय से आदेश प्राप्त करने के लिए बाध्य नहीं होना चाहिए।

7) **आदेश की एकरूपता** : संगठन में किसी भी व्यक्ति को एक से अधिक रेखा पर्यवेक्षक को प्रतिवेदन नहीं करना चाहिए। संगठन में प्रत्येक व्यक्ति को यह पता होना चाहिए कि उसे किसे प्रतिवेदन करना है और उसे कौन प्रतिवेदन करता है। साधारण शब्दों में, प्रत्येक व्यक्ति का केवल एक ही प्रधान होना चाहिए। कई पर्यवेक्षकों से निर्देश प्राप्त करने से सम्भ्रांति, दुर्व्यवस्था, संघर्ष एवं कार्यवाही की कमी उत्पन्न हो सकती है।

8) **निर्देशन की एकरूपता** : इस सिद्धांत के अनुसार सामान्य लक्ष्यों और कार्यों के समूह का प्रबंधन एक व्यक्ति के द्वारा किया जाना चाहिए। विभिन्न कार्यविधियों के एक सामान्य उद्देश्य के लिए एक प्रधान और एक ही योजना होनी चाहिए। इससे व्यापक संगठनात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में अबाध-गति से आगे बढ़ा जा सकता है।

9) **अपवाद के सिद्धांत** : इस सिद्धांत के अनुसार उच्च स्तरीय प्रबंधकों को केवल अपवादिक मामलों पर ध्यान देना चाहिए। सभी रोज़मर्रा के निर्णय निचले स्तरों पर लिये जाने चाहिए जबकि असामान्य मामलों से संबंधित समस्याएँ और नीति निर्णय उच्च स्तर के प्रबंधकों के सुपुर्द करने चाहिए।

10) **पर्यवेक्षण क्षमता का विस्तार** : पर्यवेक्षण क्षमता की सीमा से तात्पर्य व्यक्तियों की उस संख्या से है जिसे एक प्रबंधक या पर्यवेक्षक निर्देशित कर सकता है। एक प्रबंधक उपलब्ध समय और क्षमता की सीमाओं में जितने व्यक्तियों का प्रभावपूर्ण प्रबंधन कर सकता है उसे उससे अधिक अधीनस्थों के पर्यवेक्षण की जिम्मेदारी नहीं दी जानी

चाहिए। वास्तविक संख्या काम की प्रकृति एवं पर्यवेक्षण की गहनता अथवा आवृत्ति के अनुसार परिवर्तित हो सकती है।

11) **संतुलन का सिद्धांत** : संगठन के विभिन्न अंगों में समुचित संतुलन होना चाहिए और किसी भी कार्य को दूसरे कार्यों के मूल्य पर अनुचित महत्व नहीं दिया जाना चाहिए। केन्द्रीयकरण और विकेन्द्रीकरण; पर्यवेक्षण क्षमता की सीमा और सम्प्रेषण की रेखा, तथा विभागों और विभिन्न स्तर के कार्मिकों में आवंटित प्राधिकार में भी संतुलन रखना चाहिए।

12) **सम्प्रेषण** : एक संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये सम्प्रेषण का एक अच्छा तंत्र आवश्यक है। निःसंदेह प्राधिकार की रेखा अधोमुखी और उपरिमुखी सम्प्रेषण माध्यम उपलब्ध कराती है फिर भी अनेकों संगठनों में सम्प्रेषण में कुछ बाधायें उठ खड़ी होती हैं। वरिष्ठ अधिकारी का अपने अधीनस्थों में विश्वास और द्विदिशा सम्प्रेषण ऐसे तत्व हैं जो एक संगठन को प्रभावपूर्ण कार्यकारी तंत्र के रूप में जोड़ते हैं।

13) **लोच** : संगठन ढाँचा लोचदार होना चाहिए ताकि इसे सरलता और मितव्ययता पूर्वक कार्य की प्रकृति में परिवर्तनों एवं प्रौद्योगिकीय नवीकरणों के अनुकूल बनाया जा सके। संगठन ढाँचे में लोच मूल डिजाइन में गड़बड़ी किये बिना पर्यावरण के अनुसार परिवर्तन की क्षमता को सुनिश्चित करता है।

14) **निरंतरता** : परिवर्तन प्रकृति का नियम है। संगठन से बाहर अनेकों परिवर्तन होते हैं। ये परिवर्तन संगठन में भी प्रतिबिम्बित होने चाहिए। इस उद्देश्य के लिए संगठन ढाँचे का स्वरूप ऐसा होना चाहिए जो उद्यम की आवश्यकताओं को पूरा कर सके और लम्बी अवधि के लिये इसके उद्देश्यों को प्राप्त कर सके।

## 13.7 नियंत्रण का विस्तार (Span of Control)

"नियंत्रण के विस्तार" को "पर्यवेक्षण क्षमता की सीमा" या "प्राधिकार की सीमा" के नाम से भी जाना जाता है। साधारण शब्दों में, यह व्यक्तियों की उस संख्या की ओर संकेत करता है जिसका एक प्रबंधक प्रभावपूर्ण पर्यवेक्षण कर सकता है। इस प्रकार, यह उम्मीद की जाती है कि नियंत्रण क्षमता की सीमा, अर्थात् एक वरिष्ठ को प्रत्यक्ष रूप से प्रतिवेदित करने वाले अधीनस्थों की संख्या, सीमित रखी जानी चाहिए ताकि पर्यवेक्षण और नियंत्रण को प्रभावशाली बनाया जा सके। इसका कारण यह है कि कार्याधिकारियों के पास सीमित समय और क्षमता होती है।

कभी-कभी यह सुझाव दिया जाता है कि नियंत्रण क्षमता की सीमा न तो बहुत विस्तृत और न ही बहुत संकुचित होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में, अधीनस्थों की संख्या बहुत अधिक या बहुत कम नहीं होनी चाहिए। कुछ विशेषज्ञों के अनुसार, आदर्श क्षमता सीमा ऊँचे स्तरों पर चार और निचले स्तरों पर आठ से बारह है। परंतु अधीनस्थों की संख्या आसानी से निश्चित नहीं की जा सकती है, क्योंकि कार्यों की प्रकृति और व्यक्तियों की क्षमता एक संगठन से दूसरे संगठन में बदलती रहती है। साथ ही, पर्यवेक्षण की वास्तविक क्षमता सीमा संगठन को विभिन्न ढंगों से प्रभावित करती है। विस्तृत क्षमता सीमा पर्यवेक्षण के छोटे स्तरों तक होती है और सम्प्रेषण को आसान बनाती है। परंतु सीमित समय के कारण इससे केवल सामान्य पर्यवेक्षण ही होता है। दूसरी ओर, संकुचित क्षमता सीमा में बहुस्तरीय पर्यवेक्षण की आवश्यकता होती है और इसलिए सम्प्रेषण में अधिक समय लगता है। यह अधिक खर्चीला है और सम्प्रेषण की प्रक्रिया को जटिल बनाता है। फिर भी संकुचित क्षमता सीमा प्रबंधकों को सूक्ष्म पर्यवेक्षण और नियंत्रण करने के योग्य बनाती है।

**नियंत्रण के विस्तार को प्रभावित करने वाले तत्व :** यद्यपि नियंत्रण क्षमता की सीमा की कुछ मर्यादाएँ हैं परंतु हाल के वर्षों में पूर्ण संख्या न बताने की प्रवृत्ति पायी गयी है क्योंकि यह मान लिया गया है कि आदर्श क्षमता सीमा कई तत्वों पर आधारित है। इनमें से कुछ अधिक महत्वपूर्ण तत्वों का विवेचन नीचे किया गया है :

1) **काम क़ी प्रकृति** : यदि काम सरल और बार-बार दोहराया जाने वाला है तो नियंत्रण क्षमता की सीमा विस्तृत हो सकती है। परंतु यदि काम में सूक्ष्म पर्यवेक्षण की आवश्यकता है तो नियंत्रण क्षमता की सीमा संकुचित होनी चाहिए।

2) **प्रबंधक की क्षमता** : कुछ प्रबंधक बड़ी संख्या में व्यक्तियों के पर्यवेक्षण में अन्य प्रबंधकों की तुलना में अधिक योग्य होते हैं। इस प्रकार एक ऐसे प्रबंधक के लिए जिसके पास नेतृत्व का गुण, निर्णय लेने की क्षमता, और सम्प्रेषण दक्षता अधिक मात्रा में है, तो नियंत्रण क्षमता की सीमा विस्तृत हो सकती है।

3) **संगठन की कार्यकुशलता** : जिन संगठनों में कार्य तंत्र कुशल हैं और कर्मचारी सक्षम हैं नियंत्रण क्षमता, की सीमा ज्यादा हो सकती है।

4) **सहायक व्यक्तियों की उपलब्धता** : जहाँ पर सहायक व्यक्तियों की नियुक्ति है वहाँ वरिष्ठों और अधीनस्थों के बीच के सम्पर्क को कम और क्षमता सीमा को विस्तृत किया जा सकता है।

5) **पर्यवेक्षण के लिए उपलब्ध समय** : उच्च स्तरों पर नियंत्रण क्षमता की सीमा संकुचित कर दी जानी चाहिए क्योंकि शीर्ष प्रबंधकों के पास पर्यवेक्षण के लिए कम समय होता है उन्हें अपने काम का प्रमुख भाग नियोजन, संगठन, निर्देशन और नियंत्रण में लगाना होता है।

6) **अधीनस्थों की क्षमता** : काम पर नये लगे व्यक्ति प्रशिक्षित व्यक्तियों की तुलना में, जो काम का अनुभव प्राप्त कर चुके हैं, एक पर्यवेक्षक का अधिक समय लेते हैं। वे अधीनस्थ जिनके पास अच्छा सुविचारित निर्णय, पहल और उत्तरदायित्वों की समझ है वरिष्ठ अधिकारी से कम पथप्रदर्शन लेते हैं।

7) **विकेन्द्रीकरण की मात्रा** : उस कार्याधिकारी की तुलना में जो केवल प्रोत्साहन और समयानुसार निर्देशन प्रदान करता है, एक ऐसा कार्याधिकारी जो व्यक्तिगत रूप से अनेकों निर्णय लेता है कम व्यक्तियों का पर्यवेक्षण करने में समर्थ होता है।

यह स्पष्ट होना चाहिए कि नियंत्रण क्षमता की सीमा का आकार अनेकों चरों से संबंधित है और कोई एक सीमा सभी स्थितियों में लागू नहीं होती। किसी एक विशेष संगठन में नियंत्रण क्षमता की अनुकूलतम सीमा में सम्मिलित कर्मचारियों की संख्या को विविध प्रकार के तत्व प्रभावित कर सकते हैं।

**बोध प्रश्न 2**

1) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

   i) आदेश की श्रृंखला संगठन के .................................... सिद्धांत पर आधारित है।

   ii) सामन्जस्य का सिद्धांत अधिकार और दायित्व की .................................. का सुझाव देता है।

   iii) उच्च स्तरीय प्रबंधकों को केवल ....................................... मामलों पर ध्यान देने की आवश्यकता होनी चाहिए।

iv) संगठन ढाँचा ............................................. होना चाहिए ताकि इसे परिवर्तन के अनुकूल बनाया जा सके।

v) एक विस्तृत नियंत्रण क्षमता सीमा का परिणाम पर्यवेक्षण का ............................. स्तर होता है।

2) निम्नलिखित में से कौन सा कथन सही है और कौन सा गलत :

i) एक संकुचित क्षमता सीमा एक विस्तृत क्षमता सीमा की तुलना में कम खर्चीली है।

ii) आदेश की एकता का अर्थ है कि एक प्रबंधक को अपने सभी अधीनस्थों को एक समान निर्देश ही जारी करने चाहिए।

iii) कार्मिक कार्य रेखा नहीं बल्कि सहायक कार्य है।

iv) यदि ज्यादा सहायक व्यक्ति हैं तो नियंत्रण क्षमता की सीमा को विस्तृत किया जा सकता है।

v) एक विभाग के लिए, जिसमें सभी नव-नियुक्त कर्मचारी हैं, क्षमता सीमा को विस्तृत रखना आवश्यक है।

## 13.8 संगठन चार्ट

एक संगठन चार्ट एक संगठन की प्रमुख क्रियाओं और उनके संबंधों सहित महत्वपूर्ण पहलुओं का आरेखीय प्रदर्शन है। यह कंपनी संगठन, इसके कार्यों, प्राधिकार की रेखाओं और पदों की स्थिति की रूपरेखा प्रस्तुत करता है। दूसरे शब्दों में, यह उद्यम में पदों और उनमें निहित उत्तरदायित्व की औपचारिक रेखाओं का रेखाचित्रीय वर्णन है। यह एक उद्यम के विभिन्न विभागों या खंडों के आपसी संबंधों और साथ ही विभिन्न स्तरों के कार्याधिकारियों और अधीनस्थों के बीच के संबंधों को एक विहंगम दृष्टि प्रदान करता है। यह प्रत्येक कार्याधिकारी और कर्मचारी को यह समझने योग्य बनाता है कि संगठन में उसकी क्या स्थिति है और वह किसके प्रति उत्तरदायी है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि एक संगठन चार्ट में निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं :

1) यह एक आरेखीय प्रदर्शन है।

2) यह संगठन में प्राधिकार की प्रमुख रेखाओं को दर्शाता है।

3) यह विभिन्न कार्यों और संबंधों की अन्योन्य क्रिया को दर्शाता है।

4) यह सम्प्रेषण के माध्यमों की ओर इंगित करता है।

संगठन चार्ट और संगठन ढाँचे में संभ्रान्तियाँ नहीं होनी चाहिए। एक संगठन चार्ट केवल एक अभिलेख मात्र है जो उस औपचारिक संगठनात्मक संबंधों को स्पष्ट करता है जिसे प्रबंध बनाये रखना चाहती है। इसलिए यह प्रधानतः प्रदर्शन की एक तकनीक है। यह विभिन्न व्यक्तियों और पदों के बीच प्राधिकार और दायित्व की रेखाओं को आरेखीय रूप में प्रस्तुत करता है। यह एक कार्मिक चार्ट अथवा कार्यात्मक चार्ट हो सकता है। कार्मिक संगठन चार्ट विभिन्न व्यक्तियों के पदों में संबंध प्रदर्शित करता है। कार्यात्मक संगठन चार्ट संगठन में प्रत्येक इकाई और उप-इकाई के कार्य अथवा कार्यकलाप दर्शाता है।

### संगठन चार्ट के लाभ

एक संगठन चार्ट के निम्नलिखित लाभ हैं :

1) यह प्रशासन का एक औज़ार है जो रेखाचित्र के माध्यम से कर्मचारियों को यह

बतलाता है कि सम्पूर्ण संगठन में उनके पद किस प्रकार ठीक बैठते हैं और वे किस प्रकार एक दूसरे से संबंधित हैं।

2) यह एक दृष्टि में प्राधिकार और दायित्व की रेखाओं को दिखलाता है। यह एक विश्वसनीय रेखाचित्र है जो यह दिखाता है कि पदों का विन्यास किस प्रकार किया गया है। इससे विभिन्न व्यक्ति अपने प्राधिकार की सीमा का बोध कर सकते हैं और यह देख सकते हैं कि उनके सहयोगी कौन हैं, उन्हें किन को प्रतिवेदन करना है, और किन से उन्हें आदेश प्राप्त करना है।

3) यह नए कर्मचारियों के लिए संगठन ढाँचा और इसकी विभिन्न इकाइयों और उप इकाइयों में परस्पर संबंध समझने में एक बहुमूल्य प्रदर्शक के रूप में कार्य करता है।

4) यह कार्मिक वर्गीकरण और मूल्यांकन व्यवस्था की रूपरेखा प्रस्तुत करता है।

5) असंगतियों और कमियों को दर्शा कर यह संगठनात्मक सुधारों में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। चित्र में दर्शाए सम्पूर्ण संगठन पर दृष्टिपात से प्रबंधन काम और कार्यों के वितरण में अभीष्ट अंतरों और अतिव्याप्ति आदि का पता लगा सकता है।

### संगठन चार्ट की सीमाएँ

यद्यपि संगठन चार्ट प्रबंधन का एक महत्वपूर्ण औज़ार है, इसका होना अपने आप ही संगठन की प्रभावोत्पादकता को सुनिश्चित नहीं करता है क्योंकि इसकी निम्नलिखित सीमाएँ हैं :

1) संगठन चार्ट केवल औपचारिक संबंधों को दर्शाता है और संगठन के अंतर्गत के अनौपचारिक संबंधों को दिखाने में असमर्थ होता है। आधुनिक उद्यमों में अनौपचारिक संबंध संगठनों के परिचालन को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करते हैं।

2) यह प्राधिकार की रेखाओं को दिखाता है, परंतु एक विशेष कार्याधिकारी किस सीमा तक प्राधिकार का प्रयोग कर सकता है, वह अपने कार्यों के लिए किस सीमा तक उत्तरदायी है, आदि प्रश्नों के उत्तर देने के योग्य नहीं है।

3) यह संबंधों में दृढ़ता पैदा करता है। सम्पूर्ण व्यवस्था में विघ्न डाले बिना नवीनीकरण सम्भव नहीं है।

4) दोषपूर्ण संगठन चार्ट के सदस्यों में सम्भ्रान्ति एवं गलतफहमी पैदा कर सकता है। इसके अलावा यह वरिष्ठता और निकृष्टता की भावना को जन्म देता है जिससे संगठन पैदा होता है।

5) यह उन संबंधों को नहीं दिखाता जो संगठन में वास्तव में होते हैं बल्कि, ''तथाकथित संबंधों'' को दिखाता है।

## 13.9 संगठनात्मक नियम-पुस्तिका (Organisational Manual)

एक संगठन चार्ट से पता चलता है कि कौन किस पर अधिकार रखता है; परंतु संगठन में प्रत्येक व्यक्ति के जॉब पद द्वारा लागू कर्त्तव्यों के प्राधिकार की सीमा स्पष्ट नहीं करता। इसीलिए बड़े संगठन नियम पुस्तिकाएँ बनाते हैं जिसमें संगठन चार्टों के अतिरिक्त जॉब का विवरण एवं अन्य सूचनाएँ सम्मिलित होती हैं। जॉब विवरणों में कर्त्तव्यों और दायित्वों के संदर्भ में जॉब विषयों के तथ्यपूर्ण कथन होते हैं। एक संगठनात्मक नियम-पुस्तिका संगठन के सदस्यों के लिये प्राधिकारिक प्रदर्शक है। इसमें उच्च प्रबंधकीय निर्णयों, मानक कार्यप्रणालियों और कार्यविधियों के अभिलेख तथा विभिन्न जॉबों का विवरण होता है। नियम

पुस्तिका में इस प्रकार की सूचनाओं के उपलब्ध होने के कारण कर्मचारियों को निर्देश एवं पथ-प्रदर्शन के लिए अपने वरिष्ठों के पास जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती है, जिसके कारण काम में बाधा पड़ती है और परिणामतः वरिष्ठों एवं अधीनस्थों के समय और शक्ति की क्षति होती है।

### 13.9.1 नियम-पुस्तिकाओं का महत्व

एक नियम-पुस्तिका प्रबंधन की बहुमूल्य सहायक हो सकती है और यह पुस्तिका के बनाने में लगने वाले मेहनत और धन को उचित ठहराता है। एक अच्छी नियम-पुस्तिका की उपलब्धि व्यक्तियों को अपने काम के दायित्वों एवं इनके संगठन में अन्य कामों से संबंध को निश्चित करने में सहायता पहुंचाती है। इससे अधिकार-क्षेत्र से सम्बद्ध संघर्ष और दोहरेपन से बचा जा सकता है। इससे अधिकार के स्रोत और सीमाएँ भी स्पष्ट होती हैं। इस प्रकार यह निर्देशों को निश्चितता प्रदान करने में सहायक हो सकती है और स्पष्ट करती है कि किस प्रकार प्रत्येक कर्मचारी और उसका काम सम्पूर्ण संगठन में ठीक बैठता है और किस प्रकार वह संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति में योगदान कर सकता है और अन्य कर्मचारियों से अच्छे संबंध बनाये रख सकता है। नियम-पुस्तिका के संदर्भ में गलतफहमियों को शीघ्रता से हटाया जा सकता है। यह प्रबंधकों को एक ही सूचना के बार-बार दोहराने से छुटकारा दिलाता है। यह कार्यविधियों एवं व्यवहारों को एकरूपता और संगति प्रदान करता है। इसमें कामों से संबंधित निश्चित परिपाटी और कार्यव्यवहार लिखित रूप में होते हैं इसलिए यह नये कर्मचारियों का प्रशिक्षण आसान बनाता है। चूंकि नियम-पुस्तिकाएँ आवधिक रूप से या प्रत्येक प्रमुख परिवर्तनों के बाद संशोधित की जाती हैं, ये उन कर्मचारियों के लिए प्रभावपूर्ण पुनश्चर्या पाठयक्रम के रूप में काम करती हैं जो संस्था में कुछ समय से काम कर रहे हैं। नियम-पुस्तिकाओं के प्रयोग से प्राधिकार के प्रत्यायोजन और प्रबंध को अपवाद स्वरूप बढ़ावा मिलता है।

### 13.9.2 नियम-पुस्तिकाओं के प्रकार

एक संगठन विभिन्न सामग्री और उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए नियम-पुस्तिकाएँ बना सकता है, जैसे 1) नीति नियम-पुस्तिका, 2) कार्य नियम-पुस्तिका, 3) संगठन नियम-पुस्तिका, 4) नियम और विनियम नियम-पुस्तिका, और 5) विभागीय नियम-पुस्तिका। इनका विवरण नीचे दिया जा रहा है।

1) **नीति नियम-पुस्तिका** : यह उद्यम की नीतियों को बतलाने के लिये बनाई जाती हैं। यह कार्य का मूल पथप्रदर्शक़ है। नीति नियम-पुस्तिका व्यापक रूपरेखा का वर्णन करती है जिसके अंतर्गत ही कार्यकलाप किये जाते हैं और इस प्रकार कुछ निश्चित स्थितियों में उठाये जाने वाले प्रबंधकीय कार्यों को विस्तृत दिशा प्रदान करता है। इसमें उद्यम के प्रबंधकों के निर्णय, प्रस्ताव और उद्घोषणाएँ सन्निहित हैं।

2) **कार्य नियम-पुस्तिका** : नियम-पुस्तिका का उद्देश्य कर्मचारियों को स्थापित विधियों, कार्यविधियों और निष्पादन के इच्छित मानकों के बारे में सूचित करना है। यह अधिकृत उपायों की एक सूची प्रदान करता है और उन्हें प्रत्येक विभाग और खंड के रेखाचित्र, संक्षिप्त विवरण; चार्ट, आदि से अनुपूरित करता है।

3) **संगठन नियम-पुस्तिका** : यह विभिन्न विभागों और उनके उपखंडों के कार्यों और दायित्वों को इंगित करते हुए संगठन की व्यवस्था को बतलाता है। यह उद्यम में काम करने वाले विभिन्न व्यक्तियों के दायित्वों और अधिकारों की औपचारिक श्रृंखला का प्रदर्शन है। संगठन में संघर्षो से बचने के उद्देश्य से प्रत्येक कार्याधिकारी के अधिकार

और दायित्व का स्तर नियम-पुस्तिका में दिखाया जाता है। संगठन नियम-पुस्तिका में पदोन्नति के चार्ट भी सम्मिलित किये जा सकते हैं जो यह दिखायें कि सम्पूर्ण संगठन में पदोन्नति के सम्भावित मार्ग क्या हैं।

4) **नियम और विनियम नियम-पुस्तिका** : यह नियम-पुस्तिका कार्य संबंधी नियमों और रोज़गार विनियमों से संबंधित सूचना प्रदान करता है। इसमें काम के घंटे, कार्य समय, छुट्टी लेने की कार्यविधि आदि से संबंधित विनियम होते हैं। यह वास्तव में रोजगार नियमों की हस्तपुस्तिका है। इसमें पुस्तकालय, जलपान गृह, मनोरंजन क्लब आदि के प्रयोग से संबंधित नियमों सहित कर्मचारियों के लाभ की विभिन्न योजनाएँ भी सम्मिलित हो सकती हैं।

5) **विभागीय नियम-पुस्तिका** : इस नियम-पुस्तिका में विभागीय कार्यों से सम्बद्ध कार्यविधियाँ सम्मिलित होती हैं। यह विभाग की आंतरिक नीतियों और कार्यकारी नियमों को विस्तृत रूप में बताता है। यह चार्ट और रेखाचित्रों द्वारा अंतर्विभागीय संबंधों को स्पष्ट करता है। उदाहरण के लिए, फाइलिंग नियम-पुस्तिका फाइलिग विभाग का संगठन, विभिन्न कामों के दायित्व, कर्मचारियों में परस्पर संबंध, और विभिन्न क्रियाओं के लिये मानक कार्यविधियाँ सम्मिलित होती हैं। इसी प्रकार, अन्य विभागों की भी ऐसी नियम-पुस्तिकाएँ हो सकती हैं।

### 13.9.3 नियम-पुस्तिका के गुण और दोष

नियम-पुस्तिका के गुण :

1) इसमें कार्यविधि संबंधी नियम एवं विनियम तथा विभिन्न अन्य सूचनाएँ लिखित रूप में होती हैं। इन्हें बार-बार कर्मचारियों को समझाने की आवश्यकता नहीं होती है।

2) यह उद्यम के आंतरिक संगठन से सम्बद्ध प्रमुख निर्णयों के लिये एक तत्पर संदर्भ प्रस्तुत करता है।

3) यह प्राधिकार के स्रोतों को सही ढंग से दिखाकर अधिकार संबंधी संघर्षों को रोकता है।

4) यह नये कर्मचारियों को मानक कार्यविधि और व्यवहार कम से कम समय में सीखने लायक बनाता है। उन्हें अपने कामों के दायित्वों और उनके अन्य कार्यों से संबंधों की स्पष्ट समझ होती है।

5) यह शीघ्र निर्णय सम्भव बनाता है क्योंकि निर्देश एवं नीतियाँ निश्चित रूप में बतला दी जाती हैं।

नियम-पुस्तिका के दोष

1) छोटे उद्यम नियम-पुस्तिका नहीं रख सकते क्योंकि यह खर्चीली और समय लगने वाली प्रक्रिया है।

2) नियम-पुस्तिकाएँ संगठन के कार्यों में अपरिवर्तनीयता पैदा कर सकती हैं क्योंकि इसमें मानक कार्यविधि और व्यवहार लिखित रूप में होते हैं। यह व्यक्तिगत पहल और स्वनिर्णय को बहुत कम अवसर देती हैं।

3) नियम-पुस्तिकाएँ उन संबंधों को लिखित रूप में प्रस्तुत कर सकती हैं जिन्हें कोई भी स्पष्ट नहीं देखना चाहेगा।

## 13.10 औपचारिक और अनौपचारिक संगठन (Formal and Informal Organisation)

औपचारिक संगठन एक नियोजित ढाँचा है जो व्यक्तियों, दलों, वर्गों, इकाइयों, विभागों और खंडों में संबंधों के औपचारिक रूप से स्थापित प्रारूप को प्रदर्शित करता है ताकि उद्यम के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। विशिष्टतः इसे चार्ट के रूप में दिखाया जाता है, और इसे संगठन नियम-पुस्तिकाओं, स्थिति विवरणों और अन्य औपचारिक प्रलेखों में सम्मिलित किया जाता है। औपचारिक संगठन एक विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुत करता है और कुछ नियम कार्यों का और उनके आपसी संबंधों का सीमांकन करता है। औपचारिक संगठन को किसी दिये गये उद्देश्य की पूर्ति की दिशा में दो या अधिक व्यक्तियों के कार्यकलाप के चेतनायुक्त समन्वित तंत्र के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यह एक साथ मिलकर काम करने वाले व्यक्तियों का एक दल है जो एक ऐसे उद्देश्य की पूर्ति के लिये प्रयास करते हैं और इन व्यक्तियों और संगठन दोनों के लिये ही लाभकारी हैं। साथ ही, स्थायी और संगत संबंधों को बढ़ावा देते हैं और नियोजन और नियंत्रण के कार्यों को सुविधाजनक बनाते हैं। औपचारिक संगठन की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है।

1) औपचारिक संबंधों और कर्त्तव्यों, संगठन चार्टों, जॉब विवरणों और पथ-प्रदर्शकों के प्रतिरूप के रूप में, और

2) औपचारिक संबंधों की संरचना के अंतर्गत कर्मचारी आचरण का पथप्रदर्शन करने के लिये प्रबंधन द्वारा अपनाये गये औपचारिक नियमों, नीतियों, कार्यविधियों और ऐसे ही अन्य तरीकों के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है। औपचारिक संगठन उद्देश्यों और नीतियों का निर्धारण सुविधाजनक बनाता है। सम्प्रेषण, प्राधिकार के प्रत्यायोजन, और समन्वय, निहित रूप के अनुसार होता है। वास्तव में, औपचारिक ढाँचा संगठन में काम करने वाले व्यक्तियों के कार्यक्षेत्र को निश्चित रूप से परिभाषित करके सीमित है।

अनौपचारिक संगठन व्यक्तियों के परस्पर संबंधों को रुचि, व्यक्तिगत अभिवृत्ति, पूर्वधारणा पसंद, नापसंद, काम का स्थान, काम की समानता, आदि के आधार पर उल्लेख करता है। अनौपचारिक संगठन औपचारिक ढाँचे की सीमाओं के कारण जन्म लेता है। यह काम की परिस्थितियों में व्यक्तियों का प्राकृतिक रूप से दलों में बँटना इंगित करता है। एक संगठन में छोटे दलों का प्रादुर्भाव प्राकृतिक घटना है। अनौपचारिक दलों में दोहरापन सम्भव है क्योंकि एक ही व्यक्ति दो या अधिक अनौपचारिक दलों का सदस्य हो सकता है। अनेक स्थितियों में, अनौपचारिक दल औपचारिक संगठन के सहायक और अनुपूरक के रूप में आते हैं। वास्तव में, औपचारिक और अनौपचारिक संगठन एक दूसरे से जटिल रूप से संबंधित हैं। संगठनात्मक जीवन के इन दो पहलुओं में अंतर केवल विश्लेषणात्मक है और इसे अनावश्यक महत्व नहीं दिया जाना चाहिए।

### 13.10.1 औपचारिक और अनौपचारिक संगठनों में अंतर

औपचारिक और अनौपचारिक संगठनों में निम्नलिखित आधारों पर अंतर किया जा सकता है :

1) **उद्यम** : औपचारिक संगठन सजग प्रबंधकीय निर्णयों द्वारा बनाये जाते हैं। परंतु व्यक्तियों के एक दूसरे से संबंधित होने एवं परस्पर अंतःक्रिया की प्राकृतिक प्रवृत्ति के कारण अनौपचारिक संगठन औपचारिक संगठन के अंतर्गत स्वतः ही बन जाते हैं। अनौपचारिक दलों के बनने या समाप्त होने में प्रबंध का कोई हाथ नहीं होता है।

2) **उद्देश्य** : औपचारिक संगठन किन्हीं सुपरिभाषित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये बनाये जाते हैं। परंतु अनौपचारिक संगठन, संगठन के सदस्यों द्वारा अपनी सामाजिक और मनोवैज्ञानिक संतुष्टि के लिये बनाये जाते हैं।

3) **कार्यकलाप** : औपचारिक संगठन की स्थिति में कार्यकलाप का पृथक्ककरण एवं एकीकरण उद्यम के उद्देश्यों के संदर्भ में किया जाता है और उन्हें समान्तर आधार पर कार्य इकाइयों या विभागों का औपचारिक रूप दिया जाता है। अनौपचारिक संगठन की स्थिति में कोई विशिष्ट कार्यकलाप नहीं होते हैं। वे समय-समय पर व्यक्तियों की अंतःक्रियाओं और भावनाओं के परिणामस्वरूप सामने आते हैं। अनौपचारिक दल सामान्य मूल्यों, भाषा, संस्कृति या अन्य ऐसे ही तत्वों पर आधारित हो सकते हैं।

4) **ढाँचा** : औपचारिक संगठन का ढाँचा सौपानिक एवं पिरामिड-स्वरूप है जिसमें सुपरिभाषित पद, भूमिका एवं वरिष्ठ-अधीनस्थ संबंध होते हैं। यह नीतियों, कार्यविधियों और नियमों के एक सेट द्वारा संगठन में अनुशासन लागू करता है और अधिकार पर आधारित पदों का पृथक्क़ीकरण, अधोमुखी और बहिर्मुखी सम्प्रेषण व्यवस्था, आदि पर बल देता है। दूसरी ओर, अनौपचारिक संगठन गैर-सौपानिक होता है, यह अंतर्व्यक्तिगत संबंधों के एक जटिल सामाजिक तंत्र के समान दिखाई देता है। अनौपचारिक संगठन का ढाँचा अस्पष्ट होता है जिसमें व्यवहार के सिद्धान्त गैर-लिखित होते हैं और उन्हें केवल सहमति द्वारा लागू किया जा सकता है। सम्प्रेषण अनौपचारिक एवं बहु-आयामीय होता है। इसमें स्पष्ट रूप से पदों में अंतर नहीं किया जाता है।

5) **सदस्यता** : एक औपचारिक संगठन में प्रत्येक व्यक्ति केवल एक कार्य दल का सदस्य होता है और एक ही वरिष्ठ के अधीन कार्य करता है। लेकिन एक अनौपचारिक संगठन में एक व्यक्ति अपनी इच्छानुसार एक से अधिक दलों का सदस्य हो सकता है। वह एक दल में नेता एवं दूसरे में अनुगामी हो सकता है। इसमें सदस्यता के कठोर नियम नहीं हैं।

6) **पूर्वाभिमुखीकरण** : औपचारिक संगठन की स्थिति में मूल्य, लक्ष्य और काम प्रधानतः आर्थिक और तकनीकी होते हैं और उनका संबंध उत्पादकता, लाभकारिता, कार्य कुशलता, उत्तरजीविता और विकास से होता है। परंतु अनौपचारिक संगठन की स्थिति में मूल्य, लक्ष्य और काम प्रधानतया मनोवैज्ञानिक-सामाजिक होते हैं और व्यक्तियों तथा दलों की संतुष्टि, आत्मीयता, एकसमता और भिन्नता के इर्द-गिर्द केन्द्रित होते हैं।

7) **आचरण के मानक** : एक औपचारिक संगठन में व्यक्ति अपने काम के दौरान नियत तरीके से आचरण करने के लिये बाध्य होते हैं। उनसे विवेकपूर्ण आचरण की आशा की जाती है। आचरण में मानकों के विचलनों पर संगठनों के नियमों और विनियमों के अनुसार विचार किया जाता है। संगठन में पुरस्कार और दंड की भी व्यवस्था होती है। लेकिन अनौपचारिक संगठन की स्थिति में व्यक्तिगत और दलगत आचरण एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। इसके अलावा, आचरण और अधिक प्राकृतिक और सामाजिक होता है। अनौपचारिक दल अपने अलग आचरण के मानक और पुरस्कार एवं दंड की व्यवस्था विकसित करते हैं। पुरस्कार दल की निरंतर सदस्यता, सामाजिक स्तर, पहचान, आदि का रूप ले सकता है। दूसरी ओर, दंडों में दल के द्वारा आलोचना, दल से अलगाव, आदि सम्मिलित हैं।

### 13.10.2 अनौपचारिक संगठन की विशेषताएँ

अनौपचारिक संगठन में प्राधिकार-दायित्व संबंध, सम्प्रेषण के माध्यम, समन्वय का प्रतिरूप, आदि पूर्व नियत नहीं होते हैं। इस प्रकार का संगठन बिना किसी संरचित व्यवस्था के कार्य करता है। अनौपचारिक संगठन प्रायः औपचारिक संगठन के साथ अंतःक्रिया करता है। यह औपचारिक संगठन को प्रभावित करता है और उससे प्रभावित होता है। औपचारिक संगठन की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं :

1) **प्राधिकार** : अनौपचारिक संगठन में संबंधों का एक जाल होता है जो संबंधों के औपचारिक रूप से निर्धारित प्रतिरूप के आर-पार जा सकता है। अनौपचारिक संगठन की अपनी स्वयं की आचार संहिता, सम्प्रेषण तंत्र, और पुरस्कार एवं दंड की व्यवस्था होती है। एक अनौपचारिक संगठन में प्राधिकार व्यक्तिगत होता है न कि पदगत, जैसा कि एक औपचारिक संगठन में पाया जाता है। अनौपचारिक संगठन में अधिकार या शक्ति अर्जित की जाती है अथवा दी जाती है न कि प्रत्यायोजित की जाती है। इसलिए यह आदेश की अधिकारिक श्रृंखला का अनुगमन नहीं करती है। इसमें समान स्तर पर काम करने वाले व्यक्तियों के आने की संभावना अधिक है, तुलना में औपचारिक सोपान में वरिष्ठों के आने से और यह संगठनात्मक अधिकार रेखा को आर-पार करते हुए अन्य विभागों में जा सकता है। प्रायः यह औपचारिक प्राधिकार की तुलना में अधिक अस्थायी है क्योंकि यह लोगों की भावनाओं पर आधारित है। इसकी व्यक्तिनिष्ठ प्रकृति के कारण प्रबंध व्यवस्था द्वारा इसका, औपचारिक संगठन की भांति, नियंत्रण नहीं हो सकता।

2) **उद्देश्य** : अनौपचारिक दल अपना लक्ष्य स्वयं बनाते हैं जो इनके विशेष हितों को प्रतिबिम्बित करता है। दल के सदस्य दल के उद्देश्यों के लिए समर्पित होते हैं। दलगत संयोगशीलता के परिणामस्वरूप दल एकीकृत रूप में कार्य करता है। यह संयोगशीलता दलगत उद्देश्यों द्वारा व्यक्तिगत आवश्यकताओं की संतुष्टि में दी जाने वाली सहायता की सीमा का परिणाम है। इसलिए दलगत उद्देश्यों को दल के सदस्यों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं से संबंधित किया जाना चाहिए।

3) **सम्प्रेषण** : अनौपचारिक संगठन के बनने का प्रमुख कारण औपचारिक सम्प्रेषण-माध्यम की कमजोरियाँ हैं। औपचारिक सम्प्रेषण-माध्यम अपर्याप्त हो सकते हैं अथवा धीमे हो सकते हैं तेज़ सम्प्रेषण की आवश्यकता अनौपचारिक सम्प्रेषण-माध्यम को जन्म दे सकती है। अनौपचारिक सम्प्रेषण बहुत ही तेज़ हो सकता है परंतु इसका सबसे बड़ा खतरा यह है कि इससे अफवाहें पैदा हो सकती हैं। अफवाहें संगठन के हितों के लिये नुकसानदायक सिद्ध हो सकती हैं।

4) **नेतृत्व** : अनौपचारिक दल का अपना अलग नेता होता है। एक अनौपचारिक नेता का, जिसके अंतर्गत दल के सदस्य काम कर रहे हैं, वरिष्ठ होना जरूरी नहीं है। एक अनौपचारिक दल का नेता निम्नलिखित कार्य करता हैः 1) वह दल के सदस्यों में सहमति को आसान बनाता है, 2) वह कार्य प्रारम्भ करता है, और 3) वह बाह्य जगत के साथ सम्पर्क बनाता है। यदि औपचारिक नेता इन कार्यों को करने में समर्थ है तो वह एक अनौपचारिक नेता के रूप में भी स्वीकार किया जा सकता है। कर्मचारी उसके पास अपनी व्यक्तिगत समस्याओं और परामर्श आदि के लिये जाएँगे। अनौपचारिक नेतृत्व को निर्धारित करने वाले प्रमुख तत्व उम्र, वरिष्ठता काम का स्थान, तकनीकी क्षमता, आदि. हैं। यह बात ध्यान देने योग्य है कि जो व्यक्ति अनौपचारिक नेता के रूप में उभर कर आते हैं वे दल के अन्य सदस्यों द्वारा दल के लक्ष्यों का प्राप्त करवाने वाले

सर्वोत्तम व्यक्ति समझे जाते हैं। विभिन्न उद्देश्यों के लिये दल के कई नेता हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, दल का एक काम करवाने वाला नेता हो सकता है जिसका कार्य दल को उद्देश्यों की ओर अग्रसर करना है, और एक मानवीय संबंध नेता हो सकता है जिसका कार्य सदस्यों में सहकारिता को बढ़ावा देना होगा।

## 13.10.3 अनौपचारिक संगठन के कार्य

अनौपचारिक संगठन एक मनोवैज्ञानिक-सामाजिक तंत्र है और संगठन की निम्न ढंग से सहायता करता है :

1) **प्रबंधकीय क्षमताओं में अन्तरालों को भरना** : यदि प्रबंधकों की क्षमताओं में कुछ अंतर हैं तो अनौपचारिक संगठन उन्हें पूरा कर सकता है। उदाहरण के लिए, यदि एक प्रबंधक नियोजन में कमजोर है तो उसके अधीनस्थ अनौपचारिक रूप से उसकी इस स्थिति में सहायता कर सकते हैं।

2) **कामगत समस्याओं का समाधान करना** : अनौपचारिक संगठन सदस्यों की कामगत समस्याओं के समाधान में सहायता पहुँचाते हैं। यह ज्ञान के आदान-प्रदान और निर्णय लेने के अवसर देता है जो कई (कार्यों) जॉबों को प्रभावित कर सकता है।

3) **श्रेष्ठ समन्वय** : अनौपचारिक संगठन लघु-मार्ग बना लेते हैं और लालफीताशाही को समाप्त कर देते हैं। वे सूचनाओं के निर्विघ्न प्रवाह तथा शीघ्र निर्गमन को सुविधाजनक बनाते हैं। ये सभी बातें विभिन्न व्यक्तियों और विभागों में श्रेष्ठ समन्वय को सुनिश्चित करते हैं।

4) **सम्प्रेषण का माध्यम** : अनौपचारिक दल संगठन में उठने वाली सम्प्रेषण रिक्तताओं को प्रायः पूरा करते हैं। अनौपचारिक सम्प्रेषण सोपानिक और विभागीय सीमाओं को पार करता हुआ सूचनाओं को अधिक गतिपूर्वक आगे बढ़ाता है। प्रबंधन अनौपचारिक माध्यमों का प्रयोग कर्मचारियों से सूचनाओं की भागीदारी और प्रबंधकीय प्रस्तावों पर उनकी प्रतिक्रिया जानने के लिये कर सकता है।

5) **प्रबंधकों पर रोक** : अनौपचारिक दल प्रबंधकों को प्राधिकार की सीमाओं का उल्लंघन नहीं करने देते। वे प्रबंधकों को असीमित शक्ति का प्रयोग और शक्ति का अन्यायपूर्ण प्रयोग करने से रोकते हैं।

6) **श्रेष्ठ संबंध** : अनौपचारिक सम्पर्को के माध्यम से एक प्रबंधक अपने अधीनस्थों के साथ अच्छे संबंध बना सकता है। वह अनौपचारिक नेताओं से विचार-विमर्श कर सकता है और कर्मचारियों से काम पूरा कराने में उनका सहयोग प्राप्त कर सकता है।

7) **आचरण के मानक** : अनौपचारिक दल आचरण के कुछ मानक बना लेते हैं, जो अच्छे और बुरे आचरण में तथा उचित और अनुचित कार्यकलाप में अंतर करते हैं। ये संगठन के कर्मचारियों में अनुशासन और व्यवस्था कायम करते हैं।

8) **भावी कार्यकारियों का विकास** : अनौपचारिक दल प्रतिभाशाली कर्मचारियों को अपना नेता मानते हैं। ऐसे नेता प्रबंधन द्वारा भविष्य में निम्न स्तर के कार्यकारी खाली पदों को भरने के लिए चुने जा सकते हैं।

## 13.10.4 अनौपचारिक संगठन की समस्याएँ

अनौपचारिक दलों के नकारात्मक पहलू भी हैं। ये संगठन के लिए निम्न प्रकार की समस्याओं को जन्म दे सकते हैं :

1) **अनौपचारिक नेताओं का नकारात्मक रवैया** : अनौपचारिक नेता संगठन के लिये समस्याओं को पैदा करने वाला साबित हो सकता है। अपना प्रभाव बढ़ाने के लिये वह प्रबंध की नीतियों के खिलाफ काम कर सकता है और अपने अनुयायियों के आचरण को तोड़-मरोड़ सकता है। इस प्रकार वह प्रबंध और कर्मचारियों के बीच संघर्ष का एक कारण हो सकता है। वह अपने अनुयायियों को संगठन के हितों के खिलाफ काम करने के लिये उत्तेजित कर सकता है। यदि इस प्रकार के नेता को पदोन्नति द्वारा कार्याकारी का दर्जा दे दिया जाता है तो वह कामचोर तथा एक हेकड़ी बाज और निरंकुश अधिकारी साबित हो सकता है।

2) **अनुरूपता** : अनौपचारिक दल अनुरूपता प्राप्त करने के लिये अपने सदस्यों पर दबाव डालते हैं। सदस्य अपने दल के प्रति इतने अधिक वफादार हो सकते हैं कि दल के चरण-मानकों को मानना उनके जीवन का एक अंग हो सकता है। इसका अर्थ यह है कि सदस्य दल नेता के इच्छित नियंत्रण के अधीन हो जाते हैं जो दल को स्वार्थपूर्ण उद्देश्यों की ओर ले जा सकता है। इससे दल के सदस्यों पर संगठन की नीतियों और कार्य पद्धतियों का प्रभाव कम हो सकता है।

3) **परिवर्तन का विरोध** : अनौपचारिक दल सामान्यतः परिवर्तन के विरोध की प्रवृत्ति रखते हैं। परिवर्तन नए कौशलों की माँग करता है जबकि ये दल यथापूर्व स्थिति बनाए रखना चाहते हैं। कई बार ये दल प्रबंधन द्वारा प्रस्तावित परिवर्तनों पर अशांतिपूर्ण प्रतिक्रिया देते हैं। इससे नई विचारधाराओं के लागू करने और इस प्रकार संगठन में संवृद्धि में बाधा आती है।

4) **अफवाह** : अनौपचारिक सम्प्रेषण अफवाहों को पैदा कर सकता है जिससे व्यक्तियों में संघर्ष और गलतफहमी हो सकती है। अफवाह जैसे एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचती है बदलती जाती है। इसका सामान्य विषय तो वही रह सकता है परंतु विवरण नहीं रह पाता। अफवाह एक मुँह से दूसरे मुँह तक जाते हुए विकृत और परिवर्तित हो जाती है। यह कर्मचारी की उत्सुकता, असुरक्षा और संगठन की कमज़ोर सम्प्रेषण व्यवस्था के कारण पैदा हो सकती है। अफवाहें संगठन के लिए बहुत ही खतरनाक साबित हो सकती हैं।

5) **भूमिका-संघर्ष** : अनौपचारिक दल का प्रत्येक सदस्य औपचारिक संगठन का भी सदस्य होती है। कई बार भूमिका-संघर्ष उठ सकते हैं क्योंकि दोनों संगठनों के विचार, अपेक्षाएँ एवं आवश्यकताएँ एक दूसरे के विपरीत हो सकती हैं। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति अपने अधिकारी के औपचारिक निर्देशों का पालन करना चाहता है परंतु वह अनौपचारिक नेता द्वारा अनौपचारिक मानकों को मानने के लिये मजबूर किया जा सकता है। इस प्रकार औपचारिक और अनौपचारिक भूमिकाओं में संघर्षों के कारण संगठन के हितों को नुकसान पहुँच सकता है।

### बोध प्रश्न 3

1) निम्नलिखित में से कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत :

   i) एक संगठन चार्ट सम्प्रेषण की रेखाओं और साथ ही प्राधिकार की रेखाओं को दिखाता है।

   ii) संगठन चार्ट में औपचारिक और अनौपचारिक दोनों ही संबंधों को दर्शाया गया है।

   iii) संगठन नियम-पुस्तिका की विद्यमानता प्रबंधकों को उनके अपने अधीनस्थों को निर्देश जारी करने के दायित्व से पूर्णतः मुक्ति दिला सकती है।

iv) औपचारिक संगठन सजग प्रबंधकीय निर्णयों द्वारा बनाया जाता है।

v) एक संगठन में अनौपचारिक दलों में एक ही विभाग से लिये गये सदस्य होते हैं।

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

i) संगठन नियम पुस्तिकाएँ कर्मचारियों को मानक ............................................ और ............................................ को शीघ्रतापूर्वक सीखने के योग्य बनाती हैं।

ii) एक संगठन चार्ट प्राधिकार की ............................... दिखाता है परंतु विभिन्न प्रबंधकीय पदों से सम्बद्ध प्राधिकार ................................ को नहीं।

iii) औपचारिक संगठन विशिष्टतः संगठनात्मक ..................................................... में प्रतिबिम्बित होता है।

iv) अनौपचारिक संगठन .................................. और .................................. की सीमाओं के आर-पार जाता है।

v) एक औपचारिक संगठन में प्रत्येक व्यक्ति केवल एक ....... से संबंधित होता है।

## 13.11 सारांश

प्रबंध के एक कार्य के रूप में संगठन बनाने का अर्थ किये जाने वाले कार्यकलाप के अभिनिर्धारण एवं वर्गीकरण तथा प्राधिकार-दायित्व संबंधों के परिभाषित करने और स्थापित करने की प्रक्रिया से है। यह व्यक्तियों को उद्यम के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अत्यधिक प्रभावपूर्ण ढंग से मिलकर काम करने के योग्य बनाता है। संगठन प्रक्रिया का परिणाम संगठन है जिसमें व्यक्तियों का एक दल एक या अधिक सामान्य लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये आपस में मिलकर काम करता है। इस प्रकार एक संगठन की विशेषताएँ हैं:

व्यक्तियों के एक दल की एक सामान्य प्रयास की दिशा में स्वेच्छापूर्वक योगदान करने की इच्छा, काम का विभाजन, सामान्य उद्देश्य, लम्बवत एवं समानान्तर संबंध, आदेश श्रृंखला, और गतिशील कार्यप्रणाली।

संगठन ऐसी रूपरेखा प्रदान करता है जिसके अंतर्गत सहकारितापूर्ण कार्य बिना किसी तनाव के किया जा सकता है और व्यक्ति अपने काम को अत्यधिक प्रभावपूर्ण ढंग से कर सकते हैं। संगठन वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से प्रबंधक गड़बड़ी के स्थानों पर व्यवस्था कायम करते हैं और प्रभावीदल-कार्य (टीम वर्क) के लिए समुचित वातावरण बनाते हैं। यदि संगठन को तंत्र के रूप में देखा जाए तो यह कई परस्पर-आधारित एवं परस्पर-संबंधित अवयवों से, जिन्हें उपतंत्र कहा जाता है, बनता है। एक सामाजिक तंत्र के रूप में, एक संगठन के अवयव हैं: मानवीय एवं भौतिक संसाधनों के साथ-साथ सूचनाओं का आगत, प्रक्रिया, और सामान और सेवाओं का निर्गत।

संगठन बनाने में: (1) उद्देश्यों का निर्धारण, (2) कार्यकलाप का अभिनिर्धारण एवं वर्गीकरण (3) कामों का आबंटन, (4) संबंधों को विकसित करना सम्मिलित हैं। संगठन का ढाँचा संगठन के विभिन्न अंगों या अवयवों के बीच उच्च प्रबंध द्वारा औपचारिक रूप से स्थापित संबंधों के प्रतिरूप का उल्लेख करता है। कार्यकलाप के विन्यास के आधार पर तीन प्रकार से संगठन ढाँचों में अंतर किया जा सकता है जो निम्नलिखित हैं :

1) कार्यात्मक, 2) खंडीय, 3) अनुकूली

प्रबंध विशेषज्ञों ने संगठन के जिन सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है वे नियोजन और कुशल संगठन ढाँचे के पथप्रदर्शक हैं। इनमें सम्मिलित हैं : 1) उद्देश्यों की एकता, 2) काम का

विभाजन और विशिष्टीकरण, 3) जॉबों की परिभाषा, 4) रेखा और कर्मचारी कार्यों का अलगाव, 5) आदेश की श्रृंखला, 6) सामंजस्य का सिद्धांत, 7) आदेश की एकता, 8) अपवाद का सिद्धांत, 9) पर्यवेक्षण क्षमता की सीमा, 10) संतुलन का सिद्धांत, 11) सम्प्रेषण, 12) लोच, और 13) निरंतरता।

नियंत्रण के विस्तार का अर्थ व्यक्तियों की उस संख्या से है जिसका प्रभावपूर्ण पर्यवेक्षण एक प्रबंधक कर सकता है। आदर्श क्षमता-सीमा कई तत्वों, जैसे काम की प्रकृति, प्रबंधक की क्षमता, कर्मचारी सहायता, अधीनस्थों की क्षमता, आदि, पर निर्भर है।

एक संगठन चार्ट प्रमुख कार्यों, उनके संबंधों और साथ ही विभिन्न पदों तथा उनमें उत्तरदायित्व की औपचारिक रेखाओं का आरेखीय दृश्य प्रस्तुत करता है। यह प्रबंध और कर्मचारियों के लिए एक बहुमूल्य सहायक का कार्य करता है। एक संगठन नियम-पुस्तिका उच्च-प्रबंधकीय निर्णयों, मानक कार्यविधियों एवं प्रणालियों तथा कर्त्तव्यों एवं दायित्वों के माध्यम से कार्यों (jobs) के विवरण का अभिलेख है। औपचारिक संगठन एक नियोजित ढाँचा है जो व्यक्तिगत दलों, अनुभागों, इकाइयों, विभागों और खंडों में अधिकृत रूप से स्थापित संबंधों के प्रतिरूप को प्रदर्शित करता है। अनौपचारिक संगठन व्यक्तियों की परस्पर सामाजिक और मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं पर आधारित संबंधों का उल्लेख करता है।

## 13.12 शब्दावली

| | |
|---|---|
| आदेश की श्रृंखला | : संगठन के शीर्ष से निम्नतम भाग को जाने वाली प्राधिकार रेखा। |
| विभागीकरण | : किन्हीं सुपरिभाषित आधारों पर कार्यों का वर्गीकरण। |
| औपचारिक संगठन | : व्यक्तियों, दलों, अनुभागों, इकाइयों, विभागों और खंडों में विद्यमान संबंधों के अधिकृत रूप से स्थापित प्रतिरूप को प्रदर्शित करने वाला एक नियोजित ढाँचा। |
| अनौपचारिक संगठन | : एक संगठन के भागीदारों के बीच संबंधों का जाल जो सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं के आधार पर स्वाभाविक रूप से पनपते हैं। |
| संगठन चार्ट | : उद्यम में विभिन्न पदों और उनमें उत्तरदायित्व की औपचारिक रेखाओं का रेखाचित्रीय प्रदर्शन। |
| संगठन नियम-पुस्तिका | : जॉब विवरणों और अन्य सूचनाओं का, संगठन चार्ट के अलावा, एक अभिलिखित प्रलेख। |
| संगठन ढाँचा | : संगठन में विभिन्न पदों में अधिकार-दायित्व संबंध जो यह दिखाते हैं कि कौन किसको प्रतिवेदन करता है। |
| **नियंत्रण क्षमता का विस्तार** | : अधीनस्थों की वह संख्या जिसका प्रभावपूर्ण पर्यवेक्षण एक प्रबंधक कर सकता है। |
| **ढाँचा** | : अंगों या अवयवों में संबंधों की रूपरेखा। |
| **तंत्र** | : विभिन्न अंगों में आपसी संबंध का विन्यास और समुच्चय जो एक पूर्ण इकाई के रूप में काम करते हैं। |
| **आदेश की एकता** | : प्रत्येक अधीनस्थ का एक वरिष्ठ के अधीन होने का सिद्धांत। |

## 13.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

**बोध प्रश्न 1**

1) i) सही, ii) गलत, iii) गलत, iv) सही, v) सही

2) i) परस्पर-संबंधित ii) काम-दायित्व, iii) वरिष्ठ, अधीनस्थ, iv) निचले, v) बड़े

**बोध प्रश्न 2**

1) i) सोपानिक, ii) समता, iii) अपवाद के, iv) लोचपूर्ण, v) कम

2) i) गलत, ii) गलत, iii) सहीं, iv) सही, iv) गलत

**बोध प्रश्न 3**

1) i) सहीं, ii) गलत. iii) गलत, iv) सहीं, v) गलत

2) i) कार्यप्रणाली, व्यवहार, ii) रेखा, विस्तार, iii) चार्ट, iv) सोपानिक, विभागीय
   v) कार्यदल

## 13.14 अभ्यास के लिए प्रश्न

1) संगठन बनाने से आप क्या समझते हैं ? सुदृढ़ संगठन के महत्वपूर्ण सिद्धांत क्या हैं?

2) संगठन तंत्र के अवयवों को समझाइए ?

3) संगठन प्रक्रिया में सम्मिलित प्रमुख कदमों का विवेचन कीजिए।

4) किन परिस्थितियों में संगठन का एक खंडीय ढाँचा कार्यात्मक ढाँचे से श्रेष्ठ होता है? उनके सापेक्ष गुणों की तुलना कीजिए।

5) नियंत्रण क्षमता के विस्तार से आप क्या समझते हैं ? नियंत्रण क्षमता के विस्तार को प्रभावित करने वाले तत्वों का विवेचन कीजिए।

6) "संगठन चार्ट अधिकार के पदों और संगठन ढाँचे में उनके संबंधों का विस्तृत दृश्य प्रस्तुत करता है" इस कथन को समझाइए और संगठन चार्ट की सीमाओं को बतलाइए।

7) संगठन नियम पुस्तिका का क्या अर्थ है ? इसके क्या प्रयोग हैं ? इसमें क्या सूचनाएँ होनी चाहिए।

8) "प्रत्येक निर्देश में औपचारिक संबंध के आवरण के पीछे सामाजिक संबंधों का एक और अधिक जटिल तंत्र, जो अनौपचारिक संगठन कहलाता है, विद्यमान होता है।'' इस कथन का स्पष्टीकरण कीजिए और अनौपचारिक संगठन की प्रकृति को समझाइए।

9) औपचारिक और अनौपचारिक संगठन में अंतर कीजिए ? अनौपचारिक संगठन के प्रति प्रबंधन का क्या रुख होना चाहिए ?

10) निम्नलिखित पर नोट लिखिए।
    i) संगठन ढाँचा,
    ii) प्रोजेक्ट संगठन

**टिप्पणी :** ये प्रश्न इस इकाई को अधिक अच्छी तरह समझने में सहायक होगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयत्न कीजिए, किंतु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

# इकाई 14 प्रत्यायोजन और विकेंद्रीकरण

### इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 प्रत्यायोजन

    14.2.1 प्राधिकार का प्रत्यायोजन
    14.2.2 प्रत्यायोजन के तत्व
    14.2.3 प्रत्यायोजन के सिद्धांत
    14.2.4 प्रत्यायोजन का महत्व
    14.2.5 प्रभावी प्रत्यायोजन में रुकावटें
    14.2.6 प्रभावी प्रत्यायोजन के उपाय

14.3 विकेंद्रीकरण

    14.3.1 प्राधिकार के प्रत्यायोजन और विकेंद्रीकरण में अंतर
    14.3.2 विकेंद्रीकरण के लाभ एवं सीमाएँ
    14.3.3 विकेंद्रीकरण की मात्रा निर्धारित करने वाले कारक

14.4 सारांश

14.5 शब्दावली

14.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

14.7 अभ्यास के लिए प्रश्न

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

## 14.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप :

- अधिकार के प्रत्यायोजन की विचारधारा, प्रक्रिया और इसके महत्व को बता सकेंगे;
- अधिकार के प्रत्यायोजन के सिद्धांतों का वर्णन कर सकेंगे;
- अधिकार के प्रत्यायोजन में आने वाली रुकावटों की पहचान कर सकेंगे तथा प्रत्यायोजन को प्रभावी बनाने के लिए सुझाव दे सकेंगे;
- केंद्रीकरण तथा विकेंद्रीकरण से उत्पन्न परिणामों का विश्लेषण कर सकेंगे तथा प्रत्यायोजन और विकेंद्रीकरण में अंतर स्पष्ट कर सकेंगे;
- विकेंद्रीकरण के लाभ और दोषों को बता सकेंगे; और
- एक उपक्रम में अधिकारों के प्रत्यायोजन की सीमा-निर्धारण करने वाले कारकों का वर्णन कर सकेंगे।

## 14.1 प्रस्तावना

सफल प्रबंध के लिए प्रत्यायोजन महत्वपूर्ण आवश्यकताओं में से एक है। प्रत्यायोजन एक विचारधारा ही नहीं, वरन एक प्रक्रिया भी है। विचारधारा अथवा अवधारणा के रूप में इसका अर्थ है, एक प्रबंधक द्वारा अपने अधीनस्थ के साथ कार्य विभाजन करना। किन्तु प्रबंधक

द्वारा अपने कार्यभार को अपने अधीनस्थ के साथ विभाजित करना श्रम-विभाजन से भिन्न होता है। यह आदेश देने के नित्य-कर्म (routine) से भी भिन्न होता है। प्रत्यायोजन में विशेष प्रकार का कार्य सौंपा जाता है और यह नियोजन, अधीनस्थों का मूल्यांकन, पारस्परिक सम्प्रेषण और प्रबंधक तथा अधीनस्थ के बीच, आपसी विश्वास पर निर्भर करता है।

इस इकाई में हम प्रत्यायोजन के अर्थ व प्रक्रिया, इसके महत्व, प्रत्यायोजन के सिद्धांत और प्रत्यायोजन को प्रभावी बनाने के उपायों का वर्णन करेंगे। आप अधिकारों के केंद्रीकरण और विकेंद्रीकरण की अवधारणा, प्रत्यायोजन तथा विकेंद्रीकरण में अंतर और विकेंद्रीकरण के लाभ व सीमाओं का भी इस इकाई में अध्ययन करेंगे।

## 14.2 प्रत्यायोजन (Delegation)

किसी भी उपक्रम में एक ही व्यक्ति सभी कार्य स्वयं नहीं कर सकता तथा अपने समस्त कर्त्तव्यों के दायित्वों को पूरी तरह निभाने में समर्थ नहीं हो सकता। बड़े उपक्रम में तो एक ही व्यक्ति को समस्त कार्यों को स्वयं पूरा करना शारीरिक रूप से असंभव है। उसका चातुर्य तो उसके द्वारा अन्य व्यक्तियों से कार्य करने की उसकी कुशलता पर निर्भर करता है। जैसे-जैसे एक उपक्रम का आकार बढ़ता जाता है और प्रबंधक का कार्य उसकी व्यक्तिगत क्षमता से अधिक हो जाता है, उसकी कुशलता अपने आपको बहुगुणित करने में निहित होती जाती है। अपने अधीनस्थों को प्रशिक्षित कर तथा उनमें अपने अधिकारों तथा दायित्वों को बाँटकर वह ऐसा करता है। अधिकार प्रत्यायोजन के माध्यम से वह अधिक उपलब्धि प्राप्त कर पाता है।

अधिकार हस्तांतरण में वह अपने कार्य-भार और दायित्वों को अन्य व्यक्तियों के साथ बाँटता है। अस्तु, शक्ति अथवा अधिकार का कुछ निर्धारित कार्यों और कर्त्तव्यों का निष्पादन करने के लिए अन्य व्यक्तियों के साथ विभाजन प्रत्यायोजन कहलाता है।

प्रत्यायोजन का अर्थ है देना अथवा सौंपना; अस्तु प्रबंधक अपने अधिकारों को, कार्य के रूप में कर्त्तव्यों को पूरा करने के लिए, अन्य व्यक्तियों (अपने अधीनस्थों) को देता अथवा सौंपता है।

**ओ. जैफ़ हैरिस** के अनुसार, यह एक अधीनस्थ प्रबंधक को स्वतंत्र रूप से एक निर्धारित विधि से कार्य करने का अधिकार प्रदान करना है। कार्य करने, निर्णय लेने, साधनों को प्राप्त करने, अन्य व्यक्तियों के बदले कार्य का निष्पादन करने के अधिकार को एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति को सौंपना अधिकार का प्रत्यायोजन कहा जाता है। कार्य से संबंधित उत्तरदायित्वों को निभाने के लिए ऐसा किया जाता है।

**एल. ए. ऐलन** ने प्रत्यायोजन की परिभाषा इस प्रकार दी है, "दूसरे व्यक्ति को कार्य अथवा अधिकार तथा दायित्व का कुछ भाग सौंपना तथा कार्य-निष्पादन के लिए जवाबदेही सृजित करना प्रत्यायोजन है।" किसी कार्य को पूरा करने की क्रिया उत्तरदायित्व कहलाती है। सौंपे हुए कार्य के निष्पादन को संभव बनाने के लिए आवश्यक शक्ति तथा हक का योग अधिकार कहलाता है। उत्तरदायित्व को पूरा करने तथा निर्धारित मानकों के अनुसार कार्य-निष्पादन करने की जिम्मेदारी को जवाबदेही (accountability) कहा जाता है। अपने अधिकारी को, जिसे उसने कार्य-निष्पादन की सूचना देनी होती है, उत्तरदायित्वों को पूरा करने का विवरण देना व्यक्ति की जिम्मेदारी होती है।

### 14.2.1 प्राधिकार का प्रत्यायोजन

एक व्यक्ति उपक्रम के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक सभी कार्यों को जिस प्रकार अकेला नहीं कर सकता; उसी प्रकार उपक्रम के संवर्धन के साथ, एक ही व्यक्ति द्वारा सभी निर्णयों को लेने के प्राधिकार का प्रयोग करना भी असंभव होता है। एक प्रबंधक द्वारा प्रभावपूर्ण रीति से निगरानी रखने तथा उनके बारे में निर्णय लेने के लिए व्यक्तियों की संख्या के निर्धारण की सीमा निश्चित की हुई होती है। संख्या की इस सीमा का उल्लंघन होते ही अधीनस्थों को प्राधिकार सौंप देने चाहिए, जिससे वे सौंपे हुए प्राधिकारों की सीमा के भीतर निर्णय ले सकेंगे।

अब प्रश्न यह है कि जब अधिकारी ने निर्णय लेने का प्राधिकार अपने अधीनस्थ को सौंपा हुआ है तो वह अधीनस्थ फिर प्राधिकार का प्रत्यायोजन कैसे करेगा ? स्पष्ट है, वरिष्ठ अधिकारी उस अधिकार का जो उसके पास है ही नहीं, आरोपित प्रत्यायोजन नहीं कर सकता। यह भी स्पष्ट है कि वरिष्ठ अधिकारी अपने समस्त अधिकारों का प्रत्यायोजन उस समय तक नहीं कर सकते, जब तक कि वे अपने पद को ही अधीनस्थ को नहीं सौंप देते। प्रत्यायोजन की सम्पूर्ण प्रक्रिया चार चरणों में पूरी की जाती है। ये चरण हैं :

1) एक पद पर कार्य कर रहे व्यक्तियों से आशा किए जाने वाले परिणामों का निर्धारण;
2) कार्यों को व्यक्तियों को सौंपना;
3) उक्त कार्यों को निष्पादित करने के लिए अधिकारों का सौंपा जाना;
4) कार्य निष्पत्ति के लिए व्यक्तियों की जवाबदेही निर्धारित करना।

अस्तु, प्रत्यायोजन एक प्रक्रिया है, जो एक प्रबंधक द्वारा उसको सौंपे गए कार्यों को विभाजित करने के लिए अपनाई जाती है, जिससे वह अपने पद के कारण केवल वही कार्य निष्पादित करता है, जो वह प्रभावपूर्ण रीति से कर सकता है। किन्तु प्रत्यायोजन तथा कार्य के सौंपने (assignment) में अंतर है। प्रत्यायोजन में प्रधान एजेंट का संबंध रहता है, जबकि कार्य सौंपने में स्वामी-सेवक का संबंध रहता है। एक कर्मचारी को कार्य सौंपने की झलक उसके द्वारा किए जाने वाले कार्य-वर्णन से मिल जाती है, जबकि प्रत्यायोजित कार्य उसके दैनिक कार्यों से भिन्न हो सकते हैं।

एक प्रबंधक अथवा कर्मचारी द्वारा निर्धारित ढंग से कार्य निष्पादित करने का प्रत्यायोजन एक वैधानिक अधिकार होता है। यह उसे अपने निरीक्षक से बिना पूछे स्वतंत्र रूप से कार्य करने का अधिकार प्रदान करता है, किन्तु निरीक्षक निर्धारित सीमा तथा उपक्रम के उद्देश्यों, नीतियों, नियमों तथा कार्यविधियों की सीमा के भीतर ही कार्य कर सकता है।

उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि प्रत्यायोजन में निम्नलिखित बातें शामिल हैं :

i) निष्पादन के लिए दूसरे व्यक्ति को कार्य सौंपना;
ii) कार्य-निष्पत्ति के लिए शक्ति, हक अथवा अधिकार देना;
iii) प्रत्यायोजन स्वीकार करने वाले व्यक्ति के द्वारा उत्तरदायित्व का सृजन करना।

### 14.2.2 प्रत्यायोजन के तत्व

प्रत्यायोजन के तीन स्पष्ट तत्व हैं : 1) कार्य अथवा कर्त्तव्य को निर्धारित करना, 2) अधिकार की शक्ति प्रदान करना, 3) कर्त्तव्य, उत्तरदायित्व अथवा जवाबदेही पैदा करना।

1) **कार्य अथवा कर्त्तव्य को निर्धारित करना** : पहला चरण है अधिकार प्रत्यायोजनकर्त्ता (वरिष्ठ अधिकारी) द्वारा प्रत्यायोजिती (delegatee) (अधीनस्थ) को कार्यों का सौंपना।

कर्त्तव्यों अथवा कार्यों को सौंपने के समय, प्रत्यायोजनकर्त्ता को पहले से ही प्रत्यायोजक (delegator) को सौंपे जाने वाले कार्यों पर विचार कर लेना चाहिए। अस्तु, सौंपे जाने वाले कार्य अथवा कर्त्तव्य की पहचान व परिभाषा पहले से ही कर लेनी चाहिए। उदाहरण के लिए, जब एक विक्रय प्रबंधक अपने अधीनस्थ को मंडलीय (divisional) विक्रय कार्यालय स्थापित करने के लिए कहता है तो उसे स्पष्ट रूप से स्थापना के उद्देश्य, विक्रय क्षेत्र आदि का उल्लेख कर लेना चाहिए।

2) **प्राधिकार को शक्ति प्रदान करना** : अधिकार को सौंपना, प्रत्यायोजन का दूसरा चरण है। सौपे हुए कार्य को निष्पादित करने के लिए दिए जाने वाले हक व शक्ति को अधिकार की परिभाषा कहा जा सकता है। इन शक्तियों में निष्पादित कार्य की निष्पत्ति के लिए आवश्यक साधनों को प्राप्त करने का अधिकार भी शामिल हो सकता है। पर्याप्त अधिकार न होने पर अधीनस्थ से अपने कार्य अथवा कर्त्तव्य को पूरा करने की आशा नहीं की जा सकती। उदाहरण के लिए, उपरोक्त उदाहरण में जब एक विक्रय प्रबंधक अपने अधीनस्थ को प्रमंडलीय कार्यालय स्थापित करने के लिए कहता है तो उसे आवश्यक साधनों को जुटाने का अधिकार भी प्रदान करना पड़ता है।

3) **जवाबदेही** : एक बार जब कर्त्तव्यों को निर्धारित कर अधीनस्थ को अधिकार प्रदान कर दिया जाता है तो प्रत्यायोजक कार्य को पूरा करने के लिए कर्त्तव्य अथवा जवाबदेही का सृजन कर देता है। कार्य को पूरा करने का कर्त्तव्य और प्रस्थापित व निर्देशित मानदंडों के अनुरूप उत्तरदायित्व स्वीकार करना, जवाबदेही कहलाती है। इस प्रकार, जवाबदेही एक व्यक्ति का अपने दायित्वों को पूरा करने का विवरण देने का कर्त्तव्य है, जो वह अपने नियोक्ता को रिपोर्ट करता है। अधीनस्थ सदैव सौंपे हुए कार्य को निष्पादित करने के लिए अपने वरिष्ठ अधिकारी के प्रति उत्तरदायी रहते हैं। वह अपने उत्तरदायित्व को किसी अन्य व्यक्ति पर नहीं डाल सकते। स्पष्ट है कि जवाबदेही पद के साथ जुड़ी हुई रहती है। इस प्रकार वरिष्ठ अधिकारी जवाबदेही के द्वारा अपने अधीनस्थ के कार्य-निष्पादन पर नियंत्रण कर सकता है। प्रत्यायोजक, प्रतिवेदनों, बैठकों तथा मूल्यांकन द्वारा प्रत्यायोजिती के प्रति जवाबदेह रहता है।

**बोध प्रश्न 1**

1) निम्नलिखित कथनों में कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत ?

   i) जब एक व्यक्ति उसके नाम पर दूसरे को बिना जिम्मेदारी उठाए सभी प्रकार के कार्यों को करने के लिए स्वतंत्रता प्रदान करता है, तो यह प्रत्यायोजन कहलाता है।

   ii) प्रत्यायोजन का उद्देश्य दूसरे व्यक्ति के साथ कार्य-विभाजन करना होता है, जिसका अर्थ श्रम-विभाजन होता है।

   iii) कार्य को सौंपना, अधिकार प्रदान करना तथा दायित्व का सृजन प्रत्यायोजन में किया जाता है।

   iv) जवाबदेही के माध्यम से एक प्रबंधक अपने अधीनस्थ के कार्य-निष्पादन पर नियंत्रण कर सकता है।

   v) प्रत्यायोजित कर्त्तव्य सदैव अधीनस्थ के नैत्यिक कर्त्तव्यों का भाग होते हैं।

2) कोष्ठक में दिए शब्दों में से उपयुक्त शब्द चुनकर रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

   i) प्रत्यायोजन ................................................... का संबंध स्थापित करता है। (स्वामी-सेवक / स्वामी-एजेंट / स्वामी-श्रमिक)

ii) प्रक्रिया के रूप में, प्रत्यायोजन का अर्थ वरिष्ठ अधिकारी के ............................ को अधीनस्थ को सौंपना होता है। (कार्य/प्राधिकार/दायित्व)

iii) सौंपे हुए कार्य को निर्दिष्ट मानकों के अनुसार, पूरा करने का दायित्व .......... ................................ कहलाता है। (उत्तरदायित्व/जवाबदारी)

iv) जवाबदेही .......................................... के साथ जुड़ी होती है। (व्यक्ति/पद/वरिष्ठ अधिकारी)

v) अधीनस्थ प्रत्यायोजिती को .................................... द्वारा निर्धारित सीमाओं में कार्य करना आवश्यक है। ( कार्य-वर्णन/वरिष्ठ अधिकारी/अधीनस्थ)

### 14.2.3 प्रत्यायोजन के सिद्धांत

संगठन प्रक्रिया में प्रत्यायोजन सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्वों में से एक है। प्रत्यायोजन द्वारा ही किसी उपक्रम में पारस्परिक संबंध स्थापित किए जाते हैं। पथ प्रदर्शक के रूप में प्रभावी प्रत्यायोजन के लिए कुछ सिद्धांतों को अपनाना आवश्यक है। ये सिद्धांत हैं :

1) **परिणामों द्वारा प्रत्यायोजन का सिद्धांत :** प्रत्यायोजन का उद्देश्य एक दूसरे व्यक्ति द्वारा कार्य का निष्पादन कराने से है, क्योंकि प्रत्यायोजक की अपेक्षा यह दूसरा व्यक्ति (प्रत्यायोजिती) अपेक्षाकृत अच्छे ढंग से एक दी हुई स्थिति में कार्य का निष्पादन कर सकता है। अतः यह आवश्यक है कि कार्य अथवा कर्त्तव्य का सौंपा जाना तथा अधिकार प्रदान करना अपेक्षित परिणामों को ध्यान में रख कर किया जाना चाहिए। परिणाम के आधार पर प्रत्यायोजन यह प्रकट करता है कि लक्ष्य पहले ही निर्धारित कर लिए गए हैं तथा उचित ढंग से प्रत्यायोजिती को प्रेषित किए जा चुके हैं तथा उसके द्वारा समझे जा चुके हैं और सौंपा गया कार्य लक्ष्यों के अनुरूप है।

2) **क्षमता का सिद्धांत :** प्रत्यायोजिती के रूप में चुना गया व्यक्ति सौंपे जा रहे कार्य के लिए सक्षम होना चाहिए।

3) **आस्था तथा विश्वास का सिद्धांत :** उपक्रम में आमतौर पर आस्था व विश्वास का वातावरण बना रहना आवश्यक है तथा प्रत्यायोजक व प्रत्यायोजिती के बीच आस्था की भावना रहनी चाहिए। प्रत्यायोजिती को कार्य निष्पत्ति में मानसिक स्वतंत्रता प्राप्त होनी चाहिए। मानसिक रूप से स्वतंत्र रहने पर प्रत्यायोजिती कार्य की अगुआई कर उसमें रुचि ले सकता है।

4) **प्राधिकार तथा दायित्व में समता का सिद्धांत :** सौंपा जाने वाला प्राधिकार दायित्व के संदर्भ में पर्याप्त होना चाहिए। यह तर्क पूर्ण भी है कि दायित्व सौंपे गए अधिकार से न तो अधिक हो और न ही कम।

5) **आदेश की एकता का सिद्धांत :** आदेश की एकता का सिद्धांत अधिकार और दायित्व के संबंध का ज्ञान कराता है। यह सिद्धांत इस बात पर बल देता है कि एक अधीनस्थ का एक ही अधिकारी होना चाहिए जिसके प्रति उसकी वचनबद्धता होगी इससे मतभ्रम और मतभेद नहीं हो पाएगा। प्रत्यायोजन में यह मान्यता रहती है कि किसी विशेष कार्य पर निर्णय लेने का विवेकाधिकार एक अधिकारी द्वारा एक ही अधीनस्थ के लिए प्रयोग किया जाता है।

6) **पूर्ण उत्तरदायित्व का सिद्धांत :** उत्तरदायित्व एक बाध्यता है जिसका न तो प्रत्यायोजन किया जा सकता है और न ही अस्थायी रूप में हस्तांतरण। प्रत्यायोजन के द्वारा कोई भी अधिकारी अपने अधीनस्थ के कार्यों के दायित्व से बच नहीं सकता क्योंकि

अधिकारी ने ही अधिकार का प्रत्यायोजन कर कर्त्तव्यों का निर्धारण किया है। इसी प्रकार, अधिकारी के प्रति अधीनस्थ का दायित्व भी पूर्ण होता है, उसे हस्तांतरित नहीं किया जा सकता है।

7) **पर्याप्त सम्प्रेषण का सिद्धांत** : अधिकारी और अधीनस्थ के बीच सूचना का मुक्त प्रवाह होना चाहिए जिससे अधीनस्थ निर्णय ले सकने में समर्थ हो सके और पूर्ण किए जाने वाले कार्य की प्रकृति की, प्राप्त अधिकार की प्रकृति व मात्रा के संदर्भ में सही व्याख्या कर सके।

8) **प्रभावी नियंत्रण का सिद्धांत** : प्रत्यायोजनकर्त्ता अपने अधिकार का प्रत्यायोजन करता है, अपने दायित्व का नहीं। अतः इस बात से उसे सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि उसके द्वारा प्रत्यायोजित अधिकार उचित रूप से प्रयोग किया जा रहा है।

9) **पारितोषिक का सिद्धांत** : प्रभावी प्रत्यायोजन और प्राधिकार के उचित रूप से प्रयोग को पारितोषिक दिया जाना चाहिए। पारितोषिक की विवेकपूर्ण पद्धति अधीनस्थों द्वारा स्वेच्छापूर्वक दायित्व वहन करने और प्राधिकार स्वीकार करने के लिए प्रेरणा उत्पन्न करेगी और उपक्रम के भीतर एक स्वस्थ वातावरण भी बना सकेगी।

10) **ग्रहणशीलता का सिद्धांत** : अधिकारी तथा अधीनस्थ के बीच मेल मिलाप प्रत्यायोजन के लिए आवश्यक है तथा यह उनके बीच समझौते की स्थिति का सृजन भी करता है। निर्णयन में कुछ विवेकाधिकार की आवश्यकता रहती है। इसका अर्थ यह है कि किन्हीं दो व्यक्तियों के दो निर्णय एक से नहीं हो सकते। अतः एक अधिकारी को, जो अधिकार का प्रत्यायोजन कर रहा है, अपने अधीनस्थ के विचारों पर भी ध्यान देना आवश्यक है।

### 14.2.4 प्रत्यायोजन का महत्व

संगठन की प्रक्रिया में अधिकारों का प्रत्यायोजन एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है। संगठन में बहुत से कार्यों व भूमिकाओं का जाल सा बिछा रहता है। प्रत्यायोजन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा विभिन्न व्यक्तियों के बीच उपक्रम में उनकी विभिन्न भूमिकाओं के संदर्भ में आपसी संबंध उत्पन्न होते हैं।

प्रत्यायोजन आवश्यक है, क्योंकि एक व्यक्ति के लिए बड़े उपक्रम के समस्त कार्यों की स्वयं के द्वारा देखरेख करना शारीरिक रूप से असम्भव है। प्रबंधक की सफलता अन्य व्यक्तियों के द्वारा देखरेख करना शारीरिक रूप से असम्भव है। प्रबंधक की सफलता अन्य व्यक्तियों के द्वारा अपने आप को द्विगुणित करने की योग्यता पर निर्भर करती है। आज के उपक्रम न केवल बड़े हैं, वरन् प्रकृति में जटिल भी हैं। कोई भी प्रबंधक विभिन्न प्रकृति के सभी कार्यों का निष्पादन करने के लिए सभी प्रकार की निपुणता व चतुराई नहीं रखता है। फिर, बड़े पैमाने की सभी व्यावसायिक कार्यवाहियाँ एक ही स्थान पर नहीं होती हैं। उनकी शाखाएँ व इकाइयाँ कई स्थानों पर हो सकती हैं। इन सभी शाखाओं का कुशल संचालन करने के लिए प्रत्यायोजन आवश्यक हो जाता है।

उपक्रम का कार्य निरंतर चलता है। प्रबंधक आते जाते रहते हैं किन्तु उपक्रम निरंतर चलते रहते हैं। इन उपक्रमों की कार्यवाहियों में प्रत्यायोजन अबाधता प्रदान करता है। एक उपक्रम के प्रबंधकीय विकास में भी प्रत्यायोजन की प्रक्रिया सहायक होती है।

अस्तु, प्रत्येक उपक्रम/संगठन के लिए प्रत्यायोजन महत्वपूर्ण है क्योंकि यह प्रबंधक के भार को कम करता है और उपक्रम के महत्वपूर्ण मामलों की देखरेख करने के लिए उसको

स्वतंत्रता प्रदान करता है। यह एक विधि है जिसके द्वारा अधीनस्थों का विकास किया जा सकता है तथा उन्हें उच्च-दायित्व के कार्य संभालने के लिए प्रशिक्षित किया जा सकता है। यह उपक्रम का निरंतरता प्रदान करता है तथा कर्मचारियों के बीच आपसी समझ उत्पन्न करने के लिए लाभदायक संगठनात्मक पर्यावरण उत्पन्न करता है।

**बोध प्रश्न 2**

1) कोष्ठक में दिए गए शब्दों से उपयुक्त शब्द चुन कर रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

   i) परिणामों के आधार पर किया गया प्रत्यायोजन यह बतलाता है कि लक्ष्य उचित प्रकार से ................................ किए गए हैं। (सौंपे / सम्प्रेषित / विवेचित)

   ii) उत्तरदायित्व को न तो प्रत्यायोजित किया जा सकता है और न हटाया जा सकता है। यह तो ................................ होता है। (स्थायी / पूर्ण / अलोचपूर्ण)

   iii) अधीनस्थ प्रायः उत्तरदायित्व से ........................................ के डर से बचना चाहते हैं। (दण्ड / गलतियों के कारण आलोचना / निकाले जाने)

   iv) अधीनस्थों को प्रत्यायोजन स्वीकार करने के लिए ........................... किया जाना चाहिए। (बाध्य / आदेशित / प्रशिक्षित)

   v) प्रबंधक प्रत्यायोजन करने के अनिच्छुक होते हैं जब उन्हें अपने अधीनस्थों की ........................................ पर विश्वास नहीं रहता। (नैतिकता / उत्तरदायित्व की भावना / सत्यनिष्ठा)

2) निम्नलिखित कथनों में कौन-सा सही है और कौन-सा गलत?

   i) प्रत्यायोजित का उत्तरदायित्व उसे सौंपे गए अधिकार से अधिक होता है।

   ii) अधीनस्थों से प्रबंधक की आयु कम होने पर प्रत्यायोजन संभव नहीं होता।

   iii) प्रत्यायोजन उपक्रम में अबाधता लाता है।

   iv) प्रत्यायोजन की प्रभावकता पर उद्देश्यों का कोई हाथ नहीं रहता।

   v) प्रभावी प्रत्यायोजन के लिए प्रबंधकों को अपने अधीनस्थों पर भरोसा होना चाहिए।

### 14.2.5 प्रभावी प्रत्यायोजन में रुकावटें

प्रत्यायोजन की समस्या मूलरूप से मानव नेतृत्व की है। प्रत्यायोजन न केवल प्रबंध की एक तकनीक है वरन यह स्वयं व्यवसाय के व्यवहार का एक भाग है। अतः उपक्रम में उत्तरदायित्व को सौंपने तथा स्वीकार करने का वातावरण बनाना आवश्यक है। आपसी विश्वास तथा आस्था का वातावरण बनाए जाने पर ही यह संभव है। अधिकारी द्वारा सौंपने में अनिच्छा तथा अधीनस्थों द्वारा स्वीकार करने में आनाकानी अथवा टालमटोल प्रत्यायोजन की रुकावटें हैं जिन्हें यहाँ वर्णित किया जा रहा है।

**प्रत्यायोजन के लिए प्रबंधक क्यों हिचकिचाते हैं ?**

निम्न कारणों से प्रबंधक कभी-कभी प्रत्यायोजन करने में हिचकिचाते हैं।

1) **अधीनस्थों की योग्यता के बारे में उनके विश्वास में कमी** : एक प्रबंधक को अपने अधीनस्थों की योग्यता तथा क्षमता में विश्वास नहीं होता। वह यही सोचता है कि वह अपने अधीनस्थों की अपेक्षा कार्य का निष्पादन श्रेष्ठता से कर सकता है।

2) **उत्तरदायित्व संभालने की अधीनस्थ की योग्यता में शंका** : अधीनस्थ द्वारा उत्तरदायित्व संभालने की योग्यता में प्रबंधक द्वारा की जाने वाली शंका भी अन्य व्यक्तियों को अधिकार सौंपने में बाधक बन जाती है।

3) **शक्ति में कमी आने का भय** : प्रबंधक जो असुरक्षा अनुभव करते हैं और यह विचार करते रहते हैं कि यदि अधीनस्थ द्वारा किया गया कार्य अच्छा होगा तो उनके अधिकार, छिन जाएँगे, प्रायः प्रत्यायोजन के लिए अनिच्छुक रहते हैं।

4) **आत्मविश्वास में कमी** : कुछ प्रबंधकों में आत्मविश्वास नहीं होता अथवा अपनी अयोग्यता के विषय में अत्यधिक सचेत रहते हैं, अतः वे अपने अधिकारों का प्रत्यायोजन करने के अनिच्छुक रहते हैं। पेशेवर प्रबंध की कमी पाई जाने वाले उपक्रमों में ऐसा प्रायः देखने को मिलता है।

**अधीनस्थ प्रत्यायोजन स्वी**कार करने में क्यों हिचकिचाते हैं ?

निम्नलिखित परिस्थितियों में अधीनस्थ भी प्रत्यायोज़न स्वीकार करने में हिचकिचाते हैं :

1) **उत्तरदायित्व स्वीकार** करने में हिचकिचाहट : शोध कार्यों से निष्कर्ष निकाला गया है कि अधिकांश अधीनस्थ नियंत्रण में कार्य करना पसंद करते हैं जिसमें न्यूनतम उत्तर दायित्व रहता है। ऐसे कर्मचारी उत्तरदायित्व स्वीकार करने के अनिच्छुक रहते हैं जो प्रत्यायोजन के साथ रहता है।

2) **आलोचना का भय** : एक दूसरा कारक जो अधीनस्थों को उत्तरदायित्व से दूर रहने के लिए प्रेरित करता है, अकुशलता अथवा गलतियों के कारण आलोचना किए जाने का भय है।

3) **साधनों की अपर्याप्तता को भय** : कार्य को पूरा करने के लिए आवश्यक साधनों की अपर्याप्तता और प्रत्यायोजन के असहयोगी व्यवहार के कारण भी बहुत से अधीनस्थ, उत्तरदायित्व स्वीकार नहीं करते।

4) **अभिप्रेरणा की कमी** : बहुत सी दशाओं में उपक्रम में प्रचलित वातावरण पर्याप्त मात्रा में अभिप्रेरक नहीं होता। यह अधीनस्थों द्वारा उत्तरदायित्व स्वीकार करने में रुकावट डालता है। भारत में किए गए कुछ अध्ययन यह बताते हैं कि प्रत्यायोजन, अधिकार पसंद है, उनमें अधीनस्थों के लिए आवश्यक सूचनाओं को छुपाने की प्रवृत्ति पाई जाती है तथा उनमें अधीनस्थों के प्रति विश्वास की कमी पाई जाती है। ये कुछ महत्वपूर्ण कारण हैं जिनसे अधीनस्थ प्रत्यायोजन कार्यों को स्वीकार करने में अनिच्छुक रहते हैं।

### 14.2.6 प्रभावी प्रत्यायोजन के उपाय

प्रत्यायोज़न की प्रभावकता व्यवसाय के सामान्य व्यवहार से बहुत कुछ प्रभावित रहती है और यह बहुत सी बातों पर जैसे, प्रबंध-नीतियों, संगठनात्मक संस्कृति, पेशेवर दृष्टिकोण, तथा प्रमुख प्रबंधकों के द्वारा प्रत्यायोजन करने की तत्परता अथवा सहयोगशीलता और अधीनस्थों की प्रत्यायोजन स्वीकार करने की योग्यता व इच्छा पर निर्भर करती है। अध्ययन कार्यों से यह स्पष्ट हो गया है कि भद्दा अथवा असंगत प्रत्यायोजन, प्रत्यायोजन की कमी अथवा प्रत्यायोजन की असफलता का सबसे प्रमुख कारण है। प्रभावी प्रत्यायोजन के लिए निम्नलिखित उपाय अपनाए जा सकते हैं :

1) **संगठनात्मक वातावरण तथा सामान्य प्रबंध नीतियों में सुधार** : संगठनात्मक वातावरण कई कारणों पर निर्भर करता है, जिनमें सर्वप्रमुख कारण प्रमुख प्रबंधकों के सामान्य

व्यवहार और उपक्रम की सम्पूर्ण क़ार्मिक नीतियाँ हैं। एक भविष्योन्मुख, प्रगतिशील उपक्रम अपने लोगों के निकास में विश्वास करता है और इसलिए युवक प्रबंधकों के विकास के लिए अधिक से अधिक अवसर जुटाता है।

2) **अधीनस्थों पर विश्वास** : यदि प्रमुख प्रबंधक विश्वास का वातावरण बना देते हैं और अपने अधीनस्थों में आस्था रखते हैं तो अधीनस्थ उत्तरदायित्व स्वीकार करने के लिए प्रेरित होंगे। एक बार आस्था/विश्वास के खिल जाने से भय की भावना दूर हो जाती है।

3) **स्पष्ट लक्ष्यों/उद्देश्यों की स्थापना** : उद्देश्यों की स्पष्टता से प्रभावी प्रत्यायोजन उत्पन्न होता है। प्रत्यायोजन स्वीकार करने वाले को स्पष्ट रूप से पता लग जाना चाहिए कि उसे क्या प्राप्त होना है।

4) **उत्तरदायित्व तथा प्राधिकार का स्पष्टीकरण** : प्रत्यायोजन स्वीकार करने वाले को कार्य निष्पादन हेतु प्राप्त अधिकारों के बारे में स्पष्ट ज्ञान हो जाना चाहिए। उत्तरदायित्वों के संदर्भ में अधिकारों की कमी का भी उसे पता चल जाना चाहिए।

5) **अधीनस्थों को अभिप्रेरित करना** : प्रत्यायोजन में अभिप्रेरणा, प्रेरक शक्ति है। चीनी दार्शनिक, लाओ-तुज ने श्रेष्ठ नेता के विषय में कहा था "जब उनका कार्य पूर्ण हो जाता है, तो काम के पूरा होने पर लोग यह अनुभव करते हैं, हमने स्वयं यह कार्य किया है। "लोग कैसे प्रेरित होंगे यह कहना कठिन है। उचित अभिप्रेरणा तो आंतरिक होती है। एक व्यक्ति किस कारण से अभिप्रेरित हुआ है यह ज्ञात करना सरल कार्य नहीं है। फिर भी अधिकारी को यह जानना आवश्यक है कि उसके अधीनस्थों की क्या आवश्यकताएँ अत्यधिक जरूरी हैं। शोध कार्यों से पता चला है कि समूह को सम्मानित करने अथवा समूह संसक्तिशीलता को बढ़ावा देने से भागीदारी प्रबंध प्रोत्साहित होता है। भागीदारी प्रबंधन को उपक्रमों में सभी स्तरों पर सबसे नीचे के स्तर, मध्य और उच्चतम स्तरों पर प्रोत्साहन देना चाहिए।

6) **सम्प्रेषण में सुधार** : मेल-मिलाप न एक दूसरे को भली प्रकार समझने और संगठनात्मक वातावरण में सुधार लाने के लिए, सम्प्रेषण एक प्रभावक उपकरण है। नीतियों और उपक्रम के कार्यक्रमों से संबंधित सूचनाओं का मुक्त प्रवाह होना चाहिए।

7) **आवश्यक प्रशिक्षण प्रदान करना** : प्रत्यायोजन स्वीकार करने के लिए अधीनस्थों को तथा प्रबंधकों को प्रत्यायोजन करने के गुणों को प्राप्त करने के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।

8) **पर्याप्त नियंत्रण स्थापित करना** : प्रबंधकों को रोजमर्रा के कार्यों से छुटकारा दिलाने के लिए, लेकिन वचनबद्धता बनाए रखने के लिए, नियंत्रणों की एक पद्धति का होना प्रभावी प्रत्यायोजन के लिए आवश्यक है।

## 14.3 विकेंद्रीकरण (Decentralisation)

अधिकार का प्रत्यायोजन अधिकार के केन्द्रीयकरण तथा विकेंद्रीकरण की विचारधारा से काफी निकट से सम्बन्धित है।

### केन्द्रीकरण

एक प्रबंधक के द्वारा उपक्रम में प्राधिकार को अपने पास बनाए रखने को केन्द्रीकरण का नाम, दिया गया है। हैनरी फैयॉल के अनुसार "प्रत्येक कार्य जो अधीनस्थ की भूमिका का

महत्व बढ़ाने के लिए किया जाता है विकेंद्रीकरण कहलाता है और जो उसकी भूमिका को कम करने के लिए किया जाता है केन्द्रीकरण कहा जाता है।'' थोड़े से अधिकार का प्रत्यायोजन ही केन्द्रीकरण का नियम है। शक्ति तथा विवेकाधिकार कुछ अधिकारियों के हाथों में ही केंद्रित रहते हैं। नियंत्रण एवं निर्णयन उच्च स्तरीय प्रबंधन के प्राधिकार में रहते हैं। फिर भी, पूर्णरूपेण केन्द्रीकरण अयुक्ति-युक्त है क्योंकि इसका अर्थ होगा कि अधीनस्थों के पास कोई भी कर्त्तव्य, शक्ति अथवा अधिकार नहीं है।

केन्द्रीकरण छोटे उपक्रमों में आवश्यक हो सकता है क्योंकि अति प्रतियोगी दशाओं में इसके बिना उपक्रम जीवित नहीं रह सकते। किन्तु जैसे-जैसे उपक्रम जटिल होता जाता है, उसके प्रकार में वृद्धि होती है, कार्य-प्रवाह एक दूसरे पर निर्भर रहता है। कार्य जटिल होते जाते हैं, समूहों के बीच तथा आंतरिक स्थानिक भौतिक बाधाएँ उत्पन्न होती जाती हैं और कुशलता की ओर अग्रसर होने के लिए एक कार्यात्मक आवश्यकता उत्पन्न हो जाती है, जो कार्य संपादन स्तर पर निर्णय लेने की आवश्यकता को बलवती बनाती है। अस्तु, उपक्रम का आकार बड़ा होने पर विकेंद्रीकरण की आवश्यकता और अधिक हो जाती है। इसका अर्थ यह नहीं है किं विकेंद्रीकरण अच्छा है और केन्द्रीकरण बुरा।

### विकेंद्रीकरण

विकेंद्रीकरण एक व्यवस्थित प्रयास है जिसमें कुछ प्राधिकारों को केंद्रीय बिंदुओं के लिए रखकर शेष का नीचे से नीचे के स्तर तक प्रत्यायोजन किया जाता है। इस क्रिया में निर्णय लेने के अधिकारों व शक्ति को उपक्रम के नीचे के स्तरों तक ढकेला जाता है। निर्णयन के केन्द्र समस्त उपक्रम के बीच बिखेर दिए जाते हैं। विकेंद्रीकरण का सार है उच्च स्तर से नीचे के स्तर तक अधिकार को सौंपना। जनतंत्रात्मक प्रबंधन का यह मूलभूत सिद्धांत है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को उसकी उपयोगिता एवं योगदान के लिए स्थान प्राप्त है।

जैसा कि आप जानते हैं विकेंद्रीकरण सहसंबंधित प्रत्यायोजन है। जब तक प्राधिकार का प्रत्यायोजन नहीं किया जाता, यह केन्द्रीकरण कहलाता है। पूर्णरूपेण केन्द्रीकरण अधीनस्थ प्रबंधकों की भूमिका का महत्व कम कर देता है, जो पुनः विकेंद्रीकरण को प्रोत्साहित करता है। पूर्णरूपेण विकेंद्रीकरण भी संभव नहीं है क्योंकि प्रबंधक अपने समस्त प्राधिकारों का प्रत्यायोजन नहीं कर सकते। यदि वे ऐसा करते हैं, तो उनका प्रबंधक का पद जाता रहेगा, और उनकी छुट्टी हो जाएगी। केन्द्रीकरण तथा विकेंद्रीकरण की मात्रा को चित्र 14.1 में दिखाया गया है।

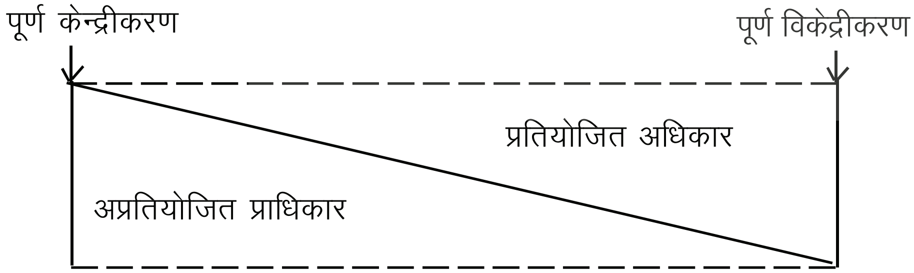

**चित्र 14.1 : केन्द्रीकरण और विकेंद्रीकरण की मात्रा**

## 14.3.1 प्रत्यायोजन तथा विकेंद्रीकरण में अंतर

यद्यपि विकेंद्रीकरण का प्रत्यायोजन से समीप का संबंध है तथापि इन दोनों के बीच कुछ अंतर हैं जिनका वर्णन यहाँ किया जा रहा है।

1) प्रत्यायोजन अधिकार हस्तांतरित करने की एक व्यवस्थित पद्धति है, जबकि विकेंद्रीकरण योजनाबद्ध प्रत्यायोजन का अंतिम परिणाम है।

2) प्रत्यायोजन में एक व्यक्ति से दूसरे को अधिकार का हस्तांतरण होता है, जबकि विकेंद्रीकरण में सम्पूर्ण उपक्रम के सभी केन्द्रों इकाइयों में अधिकार का व्यवस्थित प्रत्यायोजन किया जाता है।

3) प्रत्यायोजन एक व्यक्ति से दूसरे के बीच हो सकता है और यह पूर्ण क्रिया भी हो सकती है, जबकि विकेंद्रीकरण पूर्ण तभी होता है जब उपक्रम में कार्यरत सभी अथवा अधिकांश व्यक्तियों का पूर्णतः संभव प्रत्यायोजन किया जाता है।

4) प्रत्यायोजन अधिकारी तथा अधीनस्थ के बीच होता है, जबकि विकेंद्रीकरण सम्पूर्ण उपक्रम के लिए प्रत्यायोजन है जो उच्च प्रबंध स्तर और विभागों अथवा क्षेत्रों के बीच होता है।

5) प्रभावी प्रबंध के लिए प्रत्यायोजन आवश्यक है क्योंकि कोई भी एक प्रबंधक सम्पूर्ण कार्यों की देख रेख अकेला नहीं कर सकता, किन्तु विकेंद्रीकरण ऐच्छिक है इसकी आवश्यकता उपक्रम के विकास से जुड़ी हुई है।

6) प्रत्यायोजन में क्रियात्मक नियंत्रण प्रत्यायोजन स्वीकार करने वाले के द्वारा किया जाता है, जबकि विकेन्द्रीकरण में सम्पूर्ण नियंत्रण उच्च प्रबंध के हाथों में होता है।

### 14.3.2 विकेंद्रीकरण के लाभ एवं सीमाएँ

केन्द्रीकरण तथा विकेंद्रीकरण प्रत्यायोजन के ही विस्तार हैं। पूर्ण विकेन्द्रीकरण सदैव वांछनीय, होता है, यह मान्यता भ्रामक है। इसी प्रकार पूर्ण केन्द्रीकरण अच्छा होता है, यह धारणा भी ठीक नहीं है। विकेंद्रीकरण के लाभों और सीमाओं का वर्णन यहाँ किया जा रहा है।

लाभ

1) **विकास की ओर अग्रसर तथा जटिल उपक्रमों के लिए सुविधाजनक :** अधिकारों का केन्द्रीकरण विशेष परिस्थितियों अथवा छोटे आकार वाली कंपनियों के लिए विशिष्ट परिणामों की प्राप्ति के लिए वांछनीय हो सकता है। किन्तु जब उपक्रम आकार में विकसित होता है अथवा जटिल होता जाता है तो तानाशाह प्रबंधक भी कुछ अधिकारों का प्रत्यायोजन करने के लिए मजबूर हो जाता है और विकेंद्रीकरण की शुरुआत हो जाती है।

2) **अधिकारियों का भार कम करता है :** जब उपक्रम आकार में बढ़ता है और जटिल बनता जाता है तो विकेंद्रीकरण सदैव लाभदायक होता है। ऐसे समय में उच्च अधिकारियों के भार को कम करने की आवश्यकता होती है।

3) **विविधता को सुविधाजनक बनाता है :** व्यवसाय ज़ब क्रियाओं की विविधताओं के कारण विकसित होता है अथवा विविध उत्पाद करने लगता है तो विकेंद्रीकरण की आवश्यकता होती है।

4) **शीघ्र निर्णयन :** विकेंद्रीकरण कार्यबिंदु पर परामर्श करने तथा शीघ्र निर्णय लेने में सहायक होता है। यह विभिन्न कार्य अधिकारियों के बीच आपसी सम्पर्क स्थापित करता है तथा स्वयं के विकास तथा प्रशिक्षण के लिए अवसर प्रदान करता है और उन्हें सम्पूर्ण उपक्रम के विकास एवं विस्तार में अपने सर्वश्रेष्ठ प्रयास लगाने के लिए प्रेरणा देता है।

1) **विघटन को बढ़ावा देता है :** विकेंद्रीकरण की अति भी एक अभिशाप है। इससे ढिलाई आती है और अंत में उपक्रम में विघटन उत्पन्न होने लगता है। इससे उत्पादन की मात्रा के अनुपात में प्रतिकूल अर्थव्यवस्था शुरू हो जाती है और प्रत्येक विकेंद्रीकरण इकाई के उपरिव्ययों (overheads) में वृद्धि होने लगती है। कार्यों का दोहरापन कुल लागत में वृद्धि लाता है।

2) **विशिष्ट सेवाओं के क्षेत्र में उपयुक्त नहीं रहता :** विशिष्ट सेवाओं जैसे लेखाविधि, कार्मिक सेवाएँ, शोध व विकास आदि के क्षेत्रों में विकेंद्रीकरण अनुपयुक्त रहता है। फिर नियंत्रण व दायित्व के कुछ विशिष्ट क्षेत्रों, जैसे उपक्रम के उद्देश्य दीर्घ अवधीय नीति-निर्धारण, पूँजी-विनियोग आदि में विकेंद्रीकरण उपयुक्त नहीं होता। इन क्षेत्रों पर केन्द्रीय नियंत्रण का होना उचित माना जाता है।

3) **मतभेद विवाद :** विकेंद्रीकरण विभागीय अध्यक्षों पर अधिक भार डालता है। उन्हें हर हालत में मुनाफा दिखाना होता है। इससे विभागीय अध्यक्ष अपने ही विभाग के विषय में सोचने को मजबूर हो जाते हैं। कभी-कभी उच्च प्रबंधन मुनाफे में वृद्धि हेतु विभिन्न विभागों के बीच जानबूझ कर प्रतियोगिता को उकसाता है। यह प्रतियोगिता अन्तरविभागीय प्रतियोगिता में कटुता एवं मतभेद उत्पन्न करती है। अतः न तो अति केन्द्रीकरण ही और न ही अति विकेंद्रीकरण ही वांछनीय माना जाता है। आवश्यकता होती है स्वर्ण औसत (golden mean) की अर्थात् केन्द्रीकरण तथा विकेंद्रीकरण के बीच साम्य स्थापित करने की। प्रबंधकों के सामने प्रश्न यह नहीं है कि एक उपक्रम में कितना विकेंद्रीकरण हो, वरन प्रश्न यह है कि वहाँ कितना केन्द्रीकरण रहना चाहिए।

### 14.3.3 विकेंद्रीकरण की मात्रा निर्धारित करने वाले कारक

उपक्रम के उद्देश्य को अधिक प्रभावी रूप में प्राप्त करने के लिए विकेंद्रीकरण सहायक होता है। विकेंद्रीकरण की मात्रा निर्धारित करने के लिए निम्नलिखित कारक प्रायः विचारणीय रहते हैं :

1) **कार्यकलाप का आकार :** जैसे-जैसे एक उपक्रम आकार में बढ़ता है और जटिल होता जाता है। विकेंद्रीकरण की आवश्यकता भी बढ़ती जाती है। विभिन्न स्थानों पर निर्णय लिए जाते हैं और बड़ी संख्या में कार्यरत विभागों के कार्यों में समन्वयन करना कठिन हो जाता है। अस्तु, जैसे-जैसे आकार में वृद्धि होती है, विकेंद्रीकरण अनिवार्य हो जाता है।

2) **निर्णयन की लागत व जोखिम :** जैसे-जैसे उपक्रम आकार में बढ़ता है, भारी लागत वाले निर्णयनों में भी वृद्धि होती जाती है। अधिकार के विकेंद्रीकरण होने पर ऊँची लागत व जोखिम वाले निर्णय उच्च प्राधिकारियों के लिए छोड़ दिए जाते हैं और दैनिक (routine) निर्णय नीचे के स्तर पर लिए जाते हैं। इस प्रकार विकेंद्रीकरण निर्णयन प्रक्रिया, में सहायक होता है तथा शीघ्रता भी प्रदान करता है।

3) **उच्च प्रबंध का दर्शन :** उच्च प्राधिकारियों का व्यवहार तथा उनका दर्शन भी अधिकार के विकेंद्रीकरण की मात्रा पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है।

4) **प्रबंधकीय साधनों की उपलब्धि :** प्रशिक्षित एवं योग्य प्रबंधकीय व्यक्तियों की उपलब्धि भी एक सीमा तक विकेन्द्रीकरण की मात्रा पर प्रभाव डालता है।

5) **पर्याववरण का प्रभाव** : विकेंद्रीकरण की मात्रा को प्रभावित करने वाली सर्वाधिक महत्वपूर्ण पर्यावरण शक्तियाँ कुछ इस प्रकार हैं– सरकारी नियंत्रण, कर-नीतियाँ और यूनियन बाजी (श्रमिकों तथा कर्मचारियों के संघ)। उदाहरण के लिए, जब एक उत्पाद की कीमतों पर नियंत्रण लगा दिया जाता है, तो विक्रय प्रबंधक की स्वतंत्रता में कमी आ जाती है। इसी प्रकार, श्रम कानून और श्रम-संघों के निर्णय प्रबंधक के अधिकारों को सीमित कर देते हैं।

**बोध प्रश्न 3**

1) निम्नलिखित कथनों में कौन-सा सही है और कौन-सा गलत ?

   i) अधिकार का विकेंद्रीकरण और अधिकार का प्रत्यायोजन आपस में अत्यधिक संबंधित हैं।

   ii) प्रबंध के लिए विकेंद्रीकरण अनिवार्य है, किन्तु प्रत्यायोजन ऐच्छिक है।

   iii) बड़े आकार वाले उपक्रमों के लिए अधिकार का विकेंद्रीकरण अच्छा नहीं होता।

   iv) सभी परिस्थितियों में प्राधिकार का केन्द्रीकरण उचित नहीं होता।

   v) एक उपक्रम की सभी इकाइयों में प्रत्यायोजन संभव नहीं होता।

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

   i) विस्तृत परिप्रेक्ष्य में एक उपक्रम में नियोजित प्रत्यायोजन के लिए विकेंद्रीकरण ..................................................... होता है।

   ii) उपक्रम के ............................................... होने पर केन्द्रीकरण वांछनीय होता है।

   iii) उत्पाद की विविधता के कारण जब व्यवसाय के विस्तार की आवश्यकता होती है तो उपक्रम में ............................................................ चाहिए।

   iv) व्यवसाय के ............................................................... में वृद्धि होने पर केन्द्रीकरण उपयुक्त नहीं माना जाता।

   v) लेखाविधि जैसी विशिष्ट सेवाओं के लिए ................................................... उचित नहीं होता।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

## 14.4 सारांश

कुछ निश्चित कार्यों को पूरा करने के लिए औपचारिक प्राधिकार सौंपना प्रत्यायोजन कहलाता है। प्रक्रिया के रूप में, प्रबंधक कार्य को अपने अधीनस्थों के बीच बाँट देते हैं उन्हें अपने कर्त्तव्य के एक भाग के रूप में यह कार्य पूरा करना होता है और इस कार्य को पूरा करने के लिए वे (प्रबंधक) आवश्यक प्राधिकार भी प्रदान करते हैं। प्रत्यायोजन में कर्त्तव्यों तथा दायित्वों को सौंपा जाता है, अधिकार प्रदान किए जाते हैं तथा जवाबदारी का सृजन किया जाता है।

प्रत्यायोजन साधनों का प्रभावी प्रयोग संभव बनाता है, उच्च अधिकारियों को अतिरिक्त कार्यभार से मुक्ति दिलाता है, निर्णय प्रक्रिया में सुधार लाता है तथा नेतृत्व एवं आत्म विकास को प्रेरित करता है।

वरिष्ठ अधिकारी प्रत्यायोजन करने के लिए प्रायः अनिच्छुक रहते हैं और अधीनस्थ उत्तरदायित्व स्वीकार करने से हिचकिचाते हैं। ये बातें प्रभावी प्रत्यायोजन के लिए बाधक बनती हैं। कुछ कारणों से प्रबंधक अधिकारों का प्रत्यायोजन करने के लिए अनिच्छुक हो

सकते हैं जैसेः अधीनस्थ की योग्यता अथवा उत्तरदायित्व निभाने के बारे में अविश्वास, शक्ति में कमी आने का भय, अथवा आत्मविश्वास में कमी। अधीनस्थ भी प्रायः प्रत्यायोजन स्वीकार करने के अनिच्छुक रहते हैं। वे उत्तरदायित्व से बचना चाहते हैं, गलतियों अथवा अक्षमता के कारण आलोचना का भय बना रहता है, साधनों की अपर्याप्तता होने की संभावना रहती है और अभिप्रेरणा की कमी रहती है।

प्रभावी प्रत्यायोजन को संभव बनाने के लिए, संगठनात्मक पर्यावरण में सुधार लाना होगा, अधीनस्थों में विश्वास का वातावरण उत्पन्न करना होगा, अधिकार और दायित्व को सूक्ष्म रूप में परिभाषित करना होगा, अधीनस्थों को प्रत्यायोजन स्वीकार करने के लिए अभिप्रेरित करना होगा, सम्प्रेषण में सुधार और आवश्यक प्रशिक्षण देना होगा और पर्याप्त नियंत्रण स्थापित करने होंगे।

केन्द्रीकरण से आशय उपक्रम में प्रबंधकों द्वारा समस्त अधिकारों को अपने पास बनाए रखने से है। विस्तृत परिपेक्ष में उपक्रम की सभी इकाइयों के बीच अधिकार का व्यवस्थित रूप में प्रत्यायोजन विकेंद्रीकरण कहलाता है। उपक्रम में सभी स्तरों पर कार्यरत व्यक्तियों अथवा उनमें से अधिकांश व्यक्तियों के बीच पूर्ण रूपेण संभव प्रत्यायोजन करने पर ही विकेंद्रीकरण पूरा होता है।

विशिष्ट परिस्थितियों में विशिष्ट परिणामों की प्राप्ति हेतु अथवा कंपनी का आकार छोटा होने पर अधिकारों का केन्द्रीकरण वांछनीय होता है। उपक्रम के आकार में वृद्धि होने अथवा उसकी जटिलता में वृद्धि होने तथा उच्च अधिकारियों के भार में कमी लाने के लिए विकेंद्रीकरण सदैव वांछनीय होता है।

विकेंद्रीकरण प्रत्यायोजन से समीप से संबंधित है। प्रत्यायोजन से ही विकेंद्रीकरण आता है। एक उपक्रम में विकेद्रीकरण की मात्रा कई घटकों पर निर्भर करती है। जैसे उपक्रम का आकार, विकास की दर, उपक्रम की प्रकृति। प्रबंधन दर्शन तथा वातावरण जिसमें उपक्रम कार्य करता है, से यह प्रभावित होता है। उपक्रम का आकार कुछ भी हो, पूर्ण विकेंद्रीकरण अथवा पूर्ण केन्द्रीकरण नाम की कोई बात नहीं है। न तो पूर्ण केन्द्रीकरण और न ही पूर्ण विकेंद्रीकरण वांछनीय है। आवश्यकता है उत्तम-औसत (golden mean) की और वह है इन दोनों के बीच सामंजस्य।

## 14.5 शब्दावली

| | | |
|---|---|---|
| **उत्तरदायित्व की पूर्णाता** | : | ऐसा सिद्धांत जो यह बताता है कि उत्तरदायित्व न तो प्रत्यायोजित किया जा सकता है और न ही किसी दूसरे व्यक्ति पर डाला जा सकता है। |
| **जवाबदेही** | : | सौंपे गए कार्य को पूरा करने का अधीनस्थ का दायित्व। |
| **आदेश की श्रृंखला** | : | एक उपक्रम में अधिकारी-अधीनस्थ का संबंध जो ऊपर से नीचे अधिकार की श्रृंखला में चलता है। |
| **केन्द्रीकरण** | : | उपक्रम में एक अथवा कुछ केन्द्रों पर महत्वपूर्ण नीतियों के विषय में निर्णय लेने के प्राधिकार का व्यवस्थित एवं निरंतर आरक्षण। |
| **विकेंद्रीकरण** | : | प्राधिकार को व्यवस्थित रीति से प्रत्यायोजन जिससे उपक्रम के नीचे के स्तर पर कार्यरत व्यक्तियों को भी निर्णयन का अवसर प्राप्त होता है। |

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

| | |
|---|---|
| **प्रत्यायोजन** | : विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए औपचारिक रूप से प्राधिकार एवं दायित्वों को अधीनस्थ को सौंपने का कार्य। |
| **प्राधिकार एवं दायित्व में समता** | : ऐसा सिद्धांत जिसके अनुसार सौंपे गए अधिकार प्रत्यायोजन स्वीकार करने वाले व्यक्ति के उत्तरदायित्व से कम न रहें बस समान रहें। |
| **उत्तरदायित्व** | : एक निर्धारित कार्य को पूरा करने के लिए अधीनस्थ द्वारा अधिकारी के प्रति पूरा किया जाने वाला कर्तव्य भार। |
| **आदेश की एकता** | : एक सिद्धांत जिसके अनुसार एक अधीनस्थ एक ही अधिकारी के प्रति उत्तरदायी रहता है। |

## 14.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) i) गलत, ii) गलत, iii) सही, iv) सही, v) गलत
2) i) स्वामी-एजेंट, ii) अधिकार, iii) जवाबदेही, iv) पद, v) अधिकारी।

बोध प्रश्न 2

1) i) सम्प्रेषित, ii) पूर्ण, iii) गलतियों के लिए आलोचना, iv) प्रशिक्षित, v) उत्तरदायित्व की भावना।
2) i) सही, ii) गलत, iii) सही, iv) गलत, v) सही।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

बोध प्रश्न 3

1) i) सही, ii) संही, iii) गलत, iv) गलत, v) गलत।
2) i) अंतिम परिणाम, ii) छोटा, iii) विकेंद्रीकरण, iv) आकार, v) विकेंद्रीकरण।

## 14.7 अभ्यास के लिए प्रश्न

1) प्रत्यायोजन की परिभाषा दीजिए। प्रत्यायोजन के तत्व क्या हैं ?
2) अधिकार के प्रत्यायोजन के सिद्धांतों की व्याख्या कीजिए।
3) प्रभावी प्रत्यायोजन की क्या रुकावटें हैं ? इनको किस प्रकार दूर किया जा सकता है?
4) प्रत्यायोजन और विकेंद्रीकरण में अन्तर स्पष्ट कीजिए ?
5) केन्द्रीकरण और विकेंद्रीकरण शब्दावली का क्या अर्थ है ? विकेंद्रीकरण के लाभ बतलाइए।
6) अति का विकेंद्रीकरण भी उसी प्रकार बुरा है जैसे अति का केन्द्रीकरण। व्याख्या कीजिए।
7) एक उपक्रम में अधिकार के विकेंद्रीकरण की मात्रा को निर्धारित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।
8) प्राधिकार के प्रत्यायोजन का क्या महत्व है ? यह प्राधिकार के विकेंद्रीकरण से किस प्रकार संबंधित है?

**टिप्पणीः** ये प्रश्न आपको इस इकाई को अधिक अच्छी तरह समझने में सहायक होंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयत्न कीजिए, अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

# कुछ उपयोगी पुस्तकें

एम. सी. शर्मा एवं सी एल चतुर्वेदीः **प्रबन्ध के सिद्धांत** (दिल्लीः श्री महावीर बुक डिपो, प्रथम संस्करण) अध्याय 7 और 8 खंड दो, अध्याय 12 से 15 तक खंड तीन।

जे. आर. कुम्भटः **व्यवसाय प्रबन्ध सिद्धांत एवं व्यवहार** (इलाहाबादः किताब महल 1984) अध्याय 7 से 12 तक।

हैरेल्ड कुंज एवं ओ डोनलः **मैनेजमेंट** (नई दिल्लीः मैक ग्राव हिल बुक कम्पनी 1984) अध्याय 5 से 7 तक खंड 2, अध्याय 11 से 14 तक खंड 3 (अंग्रेजी में)

वी. एस. पी. राव एवं पी. एस. नारायणः **प्रिसिपुल्स एण्ड प्रेक्टिस ऑफ मैनेजमेंट** (नई दिल्लीः कोणार्क पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड, 1987) अध्याय 7 से 9 खंड दो, अध्याय 13 से 20 तक खंड तीन। (अंग्रेजी में)

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

# NOTES

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY